Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

Supported by:
Kisaan Helpline
+91-7415538151

# मध्य भारत कृषक भारती

गौरवपूर्ण प्रकाशन-द्वितीय दशक की ओर अग्रसर
ISSN-2582-5976
READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका
वर्ष-21 अंक-6 ग्वालियर, सितम्बर -2026 मूल्य 30 रुपए

## पानी का सही इस्तेमाल, बेहतर पैदावार

PM Dhan-Dhaanya Krishi Yojana

### ड्रिप सिंचाई से जल संरक्षण और किसानों की आय बढ़ाने की पहल

**अनंतपुरमु, आंध्र प्रदेश।**
**'पोलिकी रायथु फार्मर प्रोड्यूसर कंपनी लिमिटेड'** ने जल के कुशल उपयोग और फसल उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में महत्वपूर्ण पहल की है। **प्रधानमंत्री धन-धान्य कृषि योजना (PM Dhan Dhaanya Krishi Yojana)** के तहत जिला स्तरीय **किसान उत्पादक संगठन (FPO)** के रूप में कार्य कर रही इस संस्था से लगभग **750 किसान सदस्य** जुड़े हुए हैं।

### ड्रिप सिंचाई को बढ़ावा

- लगभग **100 एकड़** भूमि पर ड्रिप सिंचाई को बढ़ावा दिया जा रहा है।
- फसलों की जड़ों तक आवश्यकता के अनुसार पानी पहुंचाया जाता है।
- इस तकनीक से पानी की बचत के साथ फसल उत्पादन में सुधार की संभावना बढ़ती है।

### किसानों के लिए संदेश

**"हर बूंद का सही उपयोग— बेहतर फसल, बेहतर आय और सुरक्षित भविष्य!"**

जल संरक्षण के साथ आधुनिक सिंचाई तकनीकों को अपनााना टिकाऊ और लाभकारी कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

## प्राकृतिक खेती से महिलाओं को सशक्त बनाना

प्रधानमंत्री धन-धान्य कृषि योजना के तहत छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा जिले में 46 बायो-इनपुट रिसोर्स सेंटर बनाए गए हैं, जिनमें महिलाओं को 9,000 एकड़ ज़मीन पर प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने के काम में शामिल किया गया है। स्थानीय स्तर पर तैयार जीवामृत, ब्रह्मास्त्र, अग्निास्त्र आदि 5,000 किसानों को उचित दरों पर उपलब्ध कराए जाएंगे, जिससे किफायती बायो-इनपुट तक पहुँच बढ़ेगी, खेती की लागत कम होगी और टिकाऊ खेती को बढ़ावा मिलेगा।

# नाबार्ड के आईने में ग्रामीण-शहरी आय का अंतर और युवा किसान का भविष्य

NABARD

**डॉ योगेंद्र कौशिक**
पूर्व: रीजनल एडवाइजरी मेंबर
नाबार्ड - मध्य प्रदेश
(मा, राष्ट्रपति जी द्वारा कृषि कर्मण अवार्ड प्राप्त कृषक)

लगभग 5-6 वर्ष पूर्व मुझे नाबार्ड के राज्य स्तरीय सलाहकार समूह में किसान प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ था। उस दौरान नाबार्ड की State Focus Paper और PLP बुकलेट में ग्रामीण-शहरी आय के तुलनात्मक आंकड़े पढ़ने को मिले थे, उसी अनुभव के आधार से वर्वगान समय के आंकड़ों पर लिख रहा हूँ।

### नाबार्ड के नवीनतम NAFIS सर्वे 2021-22 के अनुसार

ग्रामीण भारत के एक परिवार की औसत मासिक आय

**₹12,698** (2021-22)

2016-17 में **₹8,059**

यानि 5 वर्षों में 57.6% की वृद्धि। यह आंकड़ा उत्साहजनक है, परंतु सिक्के का दूसरा पहलू भी देखना होगा।

### राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSO) के उपभोग व्यय सर्वे 2023-24 के अनुसार

ग्रामीण व्यक्ति का मासिक खर्च **₹4,122**

शहरी व्यक्ति का मासिक खर्च **₹6,996**

▶ स्पष्ट है कि शहरी आय-क्षमता आज भी ग्रामीण से **लगभग 70% अधिक है!**

राष्ट्रीय औसत प्रति व्यक्ति आय **₹17,000** महीना के आसपास जबकि गांव में यह **₹3,000** के आसपास ही है।

### सवाल सिर्फ आंकड़ों का नहीं, नीतियों का है!

प्रदेश का युवा आज खेती से विमुख होकर इंदौर, उज्जैन, भोपाल, ग्वालियर, जबलपुर एवं अन्य शहरों की ओर पलायन कर रहा है, क्योंकि खेती में लागत ज्यादा और मुनाफा कम है। क्यों कि उनकों उनकी कई उपज का मंडियों में समर्थन मूल्य से कम मूल्य मिलता हैं।

### सरकार से हमारी विनम्र अपील है:

1. कृषि नीतियां केवल दिल्ली-भोपाल में न बनें, बल्कि जमीनी स्तर पर राज्य, जिला और ब्लॉक स्तर पर किसानों से चर्चा करके बनाई जाएं।
2. युवा किसानों को भी उद्योगपतियों की तरह सहूलियत दी जाए। जिस तरह उद्योगों को सस्ती जमीन, बिजली, लोन और सब्सिडी मिलती है, वैसी ही पारदर्शी व्यवस्था खेती के लिए भी हो।
3. खेती के इनपुट लागत, पॉली हाउस, नेट हाउस, डेयरी, बकरी पालन, मत्स्य पालन, उद्यानिकी फसलों, औषधीय, फल-फूल के बगीचों और कृषि यंत्रों पर मिलने वाला अनुदान सहजता से राशि किसान के खाते तक पहुंचे।
4. एक बड़ा सवाल: उत्तर प्रदेश सरकार डेयरी योजना पर किसानों को 50% तक अनुदान दे रही है, तो मध्य प्रदेश में वही अनुदान 25% क्यों है? मध्य प्रदेश के युवा किसान को भी 50% अनुदान मिलना चाहिए।
5. योजनाएं कागजों पर नहीं, धरातल पर दिखें। पूरी पारदर्शिता के साथ अनुदान सीधे किसान के खाते में आए और उनके बैंक ऋण में तुरंत जमा हो जाए। ताकि युवा का शहरों की ओर पलायन रुके और वह गर्व से कहे- "मैं किसान हूँ।"

और बैंकों के ऋण में सरकार तुरंत अनुदान राशि जमा करें ताकि किसानों को केवल अनुदान के बाद बची हुई राशि का ही ब्याज बैंकों को देना पड़े।

> "अगर युवा किसान को उद्योगपति जैसा सम्मान और आर्थिक सहूलियत मिलेगी, तो ही ग्रामीण-शहरी आय का अंतर घटेगा और धरातल पर 'विकसित भारत 2047' का सपना गांव से ही पूरा होगा।"

– डॉ योगेंद्र कौशिक अजड़ावदा
(मा, राष्ट्रपति जी द्वारा कृषि कर्मण अवार्ड प्राप्त कृषक)

# इथेनॉल के महत्वाकांक्षी लक्ष्यों में चीनी का यथार्थ

हाल के दिनों में बाजारों में चीनी की कीमतों में अप्रत्याशित उछाल देखा गया है। वहीं चीनी की कालाबाजारी की आशंका के मद्देनजर सरकार ने इसकी बिक्री का नियमन भी किया है। साथ ही सरकार ने बिना टैक्स दस लाख टन कच्ची चीनी के आयात की इजाजत देने का भी फैसला किया है। लेकिन सरकार का यह फैसला शायद ही बढ़ती कीमतों का जवाब हो। निस्संदेह, यह परिदृश्य सरकार के लिये उसकी महत्वाकांक्षी इथेनॉल नीति की असलियत को समझने का एक अवसर भी है। पूरे देश में इथेनॉल मिश्रित ई-20 पेट्रोल की बिक्री व्यवस्था लागू करने का जश्न मनाने के दो साल से भी कम समय में सरकार अब दो परस्पर विरोधी जरूरतों के बीच संतुलन बनाने की कोशिश कर रही है। पहला, देश की विदेशी मुद्रा बचाने के लिये कच्चे तेल के आयात को कम करना और दूसरा उपभोक्ताओं के लिये सस्ती चीनी उपलब्ध कराना। निस्संदेह,यह घटनाक्रम एक नीतिगत दुविधा को तो दर्शाता है कि जब एक ही फसल का इस्तेमाल खाद्य पदार्थ और ईंधन, दोनों के लिये किया जाता है, तो किसी एक लक्ष्य को दूसरे से अलग रखकर पूरा नहीं किया जा सकता है। निस्संदेह, ऐसे वक्त में जब खाड़ी संकट के चलते पूरी दुनिया में पेट्रोलियम पदार्थों का संकट व्याप्त रहा, इथेनॉल मिश्रित पेट्रोल ने देश के नागरिकों व सरकार को बड़ी राहत दी है। इसमें दो राय नहीं कि निर्धारित समय सीमा से पहले ही बीस फीसदी इथेनॉल मिश्रित पेट्रोल का लक्ष्य हासिल करके, भारत ने आयातित कच्चे तेल पर अपनी निर्भरता को कुछ कम जरूर किया है। वहीं दूसरी ओर सरकार की इस अभिनव पहल से जहां एक ओर चीनी मिलों को सहारा मिला है,वहीं गन्ना किसानों के लिये कमाई का एक अतिरिक्त जरिया भी बना है। निश्चित रूप से उस देश के लिये यह एक उपलब्धि ही कही जा सकती है जो अपनी जरूरतों के लिये 85 फीसदी कच्चे तेल का आयात करता रहा है। वह भी अपने देश में उपलब्ध वैकल्पिक संसाधनों के जरिये।

**भारत द्वारा ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के लक्ष्य के रूप में कामयाबी एक सराहनीय उपलब्धि कही जा सकती है। निस्संदेह यह उपलब्धि खाद्य मुद्रास्फीति या जल के अंधाधुंध दोहन की कीमत पर नहीं हासिल की जा सकती। सही मायने में सबसे अच्छी नीति वही मानी जाएगी, जो ईंधन के टैंक और रसोई के भंडार पर्याप्त मात्रा में भरा रख सके।**

इसके बावजूद राजग सरकार की इस रचनात्मक पहल की कुछ बुनियादी खामियां भी हमारे सामने उजागर हुई हैं। यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि गन्ना भारत में सबसे ज्यादा पानी की खपत करने वाली फसलों में से एक है।

# सतावर की खेती से कम लागत में अधिक मुनाफा

**रायपुर।** छत्तीसगढ़ में किसानों को पारंपरिक खेती के साथ-साथ औषधीय पौधों की खेती से जोड़कर उनकी आय बढ़ाने की दिशा में राज्य शासन लगातार प्रयास कर रहा है। वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री केदार कश्यप के मार्गदर्शन में वन विभाग के अंतर्गत छत्तीसगढ़ आदिवासी, स्थानीय स्वास्थ्य परंपरा एवं औषधि पादप बोर्ड द्वारा औषधि एवं सुगंधित पौधों की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। इसी कड़ी में सतावर की खेती किसानों के लिए कम लागत में बेहतर आय का अवसर बनकर उभर रही है। सतावर की जड़ों की आयुर्वेदिक और हर्बल औषधियों में मांग बनी हुई है। इसी को देखते हुए धमतरी, कांकेर और कोंडागांव के 65 किसान लगभग 140 एकड़ में सतावर की खेती कर रहे हैं। बोर्ड का उद्देश्य औषधीय पौधों की खेती को बढ़ावा देकर किसानों की आय बढ़ाने में सहयोग करना है।

**औषधीय खेती से किसानों की आय बढ़ाने की दिशा में छत्तीसगढ़ शासन की पहल**

## कम पानी और कम लागत, बेहतर कमाई

सतावर की खेती की सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसमें अधिक पानी और महंगे कीटनाशकों की जरूरत नहीं होती। फसल में कीट एवं रोगों का प्रकोप भी बहुत कम बताया गया है। शुरुआती दिनों में सिंचाई के बाद सामान्यतः महीने में एक बार हल्की सिंचाई पर्याप्त होती है। एक एकड़ में सतावर की खेती की लागत लगभग 20 हजार रुपये तक आती है। फसल करीब 18 से 20 महीने में तैयार होती है। एक एकड़ से लगभग 200 से 250 क्विंटल ताजी जड़ें प्राप्त होती हैं, जो सुखाने के बाद करीब 20 से 25 क्विंटल रह जाती हैं। सूखी सतावर की जड़ें बाजार में लगभग 180 से 220 रुपये प्रति किलोग्राम तक के भाव से बिकती हैं।

**सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें**

छिंदवाड़ा ( म.प्र. )
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063

***

नरसिंहपुर ( म.प्र. )
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली ( म.प्र. )
भगवानदास चौबे
96854-88453

बलिया ( उ.प्र. )
आर.एन. चौबे-94535-77732

पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678

***

हापुड़ ( उ.प्र. )
मयंक गौड़: 83848-66823

**Online मंगाएं साहित्य**

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

**वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना**

**प्रत्येक माह की 20 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 21 से 30 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है।**

-संपादक

**मध्य भारत कृषक भारती** में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत
# कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
0751-4070802
▪ वार्षिक ₹ 400 ▪ द्विवार्षिक ₹ 750
▪ पंचवार्षिक ₹ 1800

▪ वर्ष 21 ▪ अंक 06 ग्वालियर, सितंबर 2026 मूल्य ₹ 30/-


## : सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक

राजू गुर्जर (MJC)

94251-01132

94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम

डी.के. बरार

91791-85002, 70247-93010

महेश अहिरवार: 94251-48365

## : तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि.
ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय,
नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि वैज्ञानिक (कृषि प्रसार)
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)


# अंदर के पन्नों पर

## मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़


- उद्यानिकी में ग्राफ्टिंग: आधुनिक पौध प्रवर्धन की प्रभावी तकनीक 07
- सहजन मुनगा के फायदे एवं उपयोगिता 08
- अमृतपानी: जैविक खेती का चमत्कारी रहस्य 09
- फसल उत्पादन में मृदा की संरचना... 10
- मुर्गीयों में कृमि संक्रमण (डीवर्मिंग) एवं रोकथाम 11
- कृषि स्टार्टअप नवाचार से बदलती... 12
- बाढ़ के दौरान पशुधन की देखभाल एवं प्रबंध 13
- अंडे देने वाली मुर्गी का प्रबंधन 14
- स्मार्ट बागवानी: आधुनिक तकनीक से फल उत्पादन की नई क्रांति 15
- मानसून में पशुपालन, चुनौतियाँ और समाधान 16
- जलीय पालक की खेती: किसानों के लिए कम लागत... 17
- मानव जीवन में कार्बन क्रेडिट का महत्व 18
- बीज उपचार: स्वस्थ फसल की पहली और सबसे महत्वपूर्ण सीढ़ी 19
- कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) और पशुपालन 20
- मिट्टी का स्वास्थ्य, फसल की समृद्धि: एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन 21
- बेहतर नस्ल, बेहतर मुनाफा: सही प्रजनन पशु का चुनाव कैसे करें 22


## उत्तर प्रदेश


- कृषि में टिकाऊ जल संसाधन प्रबंधन: ... 23
- श्रीअन्न (मिलेट्स): पोषण, स्वास्थ्य और... 24
- बुंदेलखंड में वर्षा आधारित कृषि:... 25
- एआई इन कृषि: डेटा गोपनीयता, ... 26
- आधुनिक विधि से धान की सीधी बुआई 27
- संतुलित आहार: स्वास्थ्य का आधार 28
- लीफ कलर चार्ट (एल.सी.सी.) धान... 29
- कृषि: भारतीय अर्थव्यवस्था और ग्रामीण ... 30
- जैव उर्वरकों की भूमिका: मृदा स्वास्थ्य सुधार में योगदान 31
- 'वन हेल्थ' दृष्टिकोण में मृदा स्वास्थ्य की भूमिका 32
- फफूंदनाशी दवाओं का असर क्यों घट रहा है? 33
- क्या अतिरिक्त कार्यभार भ्रष्टाचार को आमंत्रित कर रहा है? 34
- रोसेला की वैज्ञानिक खेती एवं प्रसंस्करण से किसानों ... 35
- जल-जंगल-जमीन बचाना पर्यावरण नहीं, कृषि बचाना है 36


## राजस्थान


- भिंडी में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण 37
- हरी खाद मट्टी की सेहत का राज 38
- सतत कृषि उत्पादन के लिए फसल विविधीकरण .. 39
- मक्का में फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण हेतु मिर्च, ... 40


## पंजाब


- पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ने की फसल का सामान्य... 41


## हरियाणा


- रिपीट ब्रीडर सिंड्रोम : एक बछड़ा प्रति वर्ष की सफलता... 42


## बिहार


- मखाना की खेती: मिट्टी की उर्वरता में सहायक 43
- मसालों के प्रसंस्करण एवं गुणवत्ता नियंत्रण 44


## नई दिल्ली


- मृदा स्वास्थ्य से किसान समृद्धि तक: .. 45
- प्राकृतिक खेती से मिट्टी की सेहत में सुधार: टिकाऊ... 46


## झारखण्ड


- महुआ बीज तेल निष्कर्षण द्वारा मूल्य संवर्धन से ग्रामीण उद्यमिता 47


## हिमाचल प्रदेश


- सब्जी की फसलों में मल्चिंग:... 48
- सब्जी उत्पादन में मल्चिंग का महत्व 49

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका


# संभागायुक्त भास्कर लक्षकार के निर्देशानुसार संयुक्त संचालक कृषि ने कृषि गतिविधियों का लिया जायजा

## मुख्यमंत्री जनविश्वास कार्यक्रम में समन्वित खेती के मॉडल का किया निरीक्षण

**इन्दौर।** संभागायुक्त श्री भास्कर लक्षकार के निर्देशानुसार खरगोन जिले के ग्राम केली में आयोजित मुख्यमंत्री जनविश्वास कार्यक्रम में संभाग के संयुक्त संचालक कृषि श्री जितेन्द्र कुमार सिंह शामिल हुए। इस दौरान उन्होंने कृषि विभाग के अधिकारियों के साथ क्षेत्र में संचालित विभिन्न कृषि गतिविधियों एवं किसानों द्वारा अपनाई जा रही नवाचारपूर्ण कृषि पद्धतियों का निरीक्षण किया।

संयुक्त संचालक कृषि श्री जितेन्द्र कुमार सिंह ने कालू पटेल के खेत पर अपनाए गए समन्वित खेती के मॉडल का निरीक्षण किया। किसान श्री पटेल द्वारा फसल विविधीकरण को अपनाते हुए अरंडी, मक्का, अरहर, मूंगफली एवं मूंग की खेती की जा रही है। इसके साथ ही उन्होंने पशुपालन, बकरी पालन एवं मुर्गी पालन को भी अपनी कृषि गतिविधियों से जोड़ा है।

निरीक्षण के दौरान संयुक्त संचालक कृषि श्री जितेन्द्र कुमार सिंह एवं उपसंचालक कृषि खरगोन श्री शिव सिंह राजपूत ने ग्राम केली की प्राथमिक साख सहकारी समिति, खाद-बीज की दुकान एवं मिट्टी परीक्षण केन्द्र का भी निरीक्षण किया। अधिकारियों ने संबंधित संस्थानों में उपलब्ध व्यवस्थाओं, किसानों को उपलब्ध

कराई जा रही कृषि सामग्री तथा मिट्टी परीक्षण की सुविधाओं की जानकारी ली। निरीक्षण के दौरान उपसंचालक कृषि खरगोन श्री शिव सिंह राजपूत, सहायक संचालक श्री दिलीप जाट, श्री रामशंकर जाट सहित कृषि विभाग के अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित रहे।

### प्रो. ताराचंद बेलजी ने पंचमहाभूत आधारित कृषि, वृक्षायुर्वेद एवं प्रकृति-सम्मत कृषि के महत्व पर दिया व्याख्यान

**रायपुर।** इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर के कृषि महाविद्यालय, रायपुर में प्राकृतिक एवं टिकाऊ कृषि तथा भारतीय पारंपरिक कृषि ज्ञान के विभिन्न आयामों पर विशेष व्याख्यान का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में प्रो. ताराचंद बेलजी, संस्थापक-टीसीबीटी (ताराचंद बेलजी तकनीक) ने विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को प्राचीन भारतीय कृषि ज्ञान, वृक्षायुर्वेद एवं पंचमहाभूत आधारित प्राकृतिक कृषि पद्धतियों के संबंध में विस्तृत जानकारी प्रदान की। कार्यक्रम का शुभारंभ अतिथियों के पुष्पगुच्छ, शॉल एवं श्रीफल भेंट कर स्वागत एवं अभिनंदन के साथ हुआ। कार्यक्रम में इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. गिरीश चंदेल, निदेशक अनुसंधान सेवाएं डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी, अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, रायपुर डॉ. आरती गुहे सहित विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय के शिक्षकगण, वैज्ञानिक, अधिकारी तथा विद्यार्थी उपस्थित रहे।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885

अमित राय
मैं. माँ उर्वरक केन्द्र
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2025-26

# पानी बचा, खेती संवरी और आमदनी दोगुनी हुई

ग्वालियर। कभी पानी की कमी के कारण चंद्रभान की खेती मुश्किलों से घिरी रहती थी। अच्छी फसल की आस में कई बार परिवार की उम्मीदें भी सूख जाती थीं। लेकिन प्रदेश सरकार की महत्वाकांक्षी ÷खेत तालाब योजना÷ ने उनके जीवन की दिशा ही बदल दी है। ग्वालियर जिले के विकासखंड भितरवार की ग्राम पंचायत बामरोल निवासी चंद्रभान सिंह रावत के खेतों में कुछ वर्ष पहले तक सिंचाई का कोई स्थायी साधन नहीं था। खेती पूरी तरह बारिश पर निर्भर थी। बारिश कम होने पर फसलें प्रभावित होती थीं और पशुओं के लिए भी पानी जुटाना चुनौती बन जाता था। मेहनत भरपूर होती थी, लेकिन उसका अपेक्षित फल नहीं मिल पाता था।

किसान चंद्रभान की किस्मत बदलने की शुरूआत तब हुई जब उन्हें "खेत तालाब योजना" के बारे में जानकारी मिली। उन्होंने इस योजना के तहत अपने खेत पर तालाब का निर्माण कराया। ग्राम पंचायत के सहयोग और स्वयं चंद्रभान सिंह रावत की सक्रिय भागीदारी से यह कार्य पूरा हुआ। मनरेगा के तहत लगभग 1.79 लाख रुपए की लागत से यह तालाब बनकर तैयार हुआ है। तालाब निर्माण में चंद्रभान ने स्वयं काम किया, जिसका उन्हें मेहनताना भी मिला। इससे परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत हुई। अब यही तालाब चंद्रभान की सबसे बड़ी ताकत बन चुका है। वर्षा का पानी खेत तालाब में सुरक्षित रहता है और पूरे साल सिंचाई के लिए पर्याप्त पानी उपलब्ध हो जाता है। इस तालाब से चंद्रभान के खेतों की सिंचाई के साथ-साथ आसपास के लगभग आधा दर्जन अन्य किसान परिवारों के मवेशियों को भी पीने के लिये पानी मिल रहा है। इस बदलाव का असर उनकी खेती पर साफ दिखाई देता है। अब वे एक के बजाय दो-दो फसलें ले रहे हैं। साथ ही फसल उत्पादन भी बढ़ गया है। खेती से उनकी आय लगभग दोगुनी हो गई है। चंद्रभान सिंह रावत कहते हैं, पहले पानी की चिंता हर समय बनी रहती थी। अब खेत तालाब ने यह चिंता दूर कर दी है। मेरी खेती बेहतर हुई है, आमदनी बढ़ी है और भविष्य के प्रति भरोसा भी मजबूत हुआ है। ग्रामीण अंचल में बन रहे खेत तालाब केवल जल संरचनायें भर नहीं हैं, ग्रामीण समृद्धि के सशक्त प्रतीक बन रहे हैं। खेत तालाब यह दर्शाते हैं कि यदि सरकार की योजनाओं का लाभ उठाकर खेती के लिये वर्षा जल का संरक्षण किया जाए तो खेती लाभ का धंधा बन सकती है।

# केंद्रीय मंत्री अर्जुन राम मेघवाल ने एक पेड़ माँ के नाम अभियान में रेवती रेंज पर किया पौधा रोपण

**इन्दौर।** केंद्रीय विधि एवं न्याय राज्य मंत्री श्री अर्जुन राम मेघवाल ने अपने इंदौर प्रवास के दौरान रेवती रेंज पर वृक्षारोपण किया। इस अवसर पर पत्रकारों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के यह निर्देश है कि यदि 'एक पेड़ माँ के नाम' का कार्यक्रम हो तो हर मंत्री को उसमे भाग लेना चाहिये। उन्होंने कहा कि पेड़ प्रकृति के श्रंगार है और इनका गुणगान ऋषि-मुनियों ने किया है। इस कार्यक्रम में शामिल होने का मुझे अवसर प्राप्त हुआ इसके लिए मैं मंत्री श्री कैलाश विजयवर्गीय का आभार व्यक्त करता हूं। हमारे संविधान के अध्याय 4 में नीति निदेशक तत्व दिए गए हैं, उसमें बताया गया है कि वृक्ष लगाना और उसका संरक्षण करना हर नागरिक का कर्तव्य है और कैलाश जी इंदौर के नागरिकों को इस कर्तव्य को समझा रहे हैं। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने जो 'एक पेड़ माँ के नाम' अभियान चलाया है। उसमें देश के, हर प्रदेश के नागरिक ने भागीदारी की है। उन्होंने कहा कि इस तरह के कार्यक्रमों का प्रचार-प्रसार होने से दूसरे शहरों और प्रदेशों के नागरिकों को भी प्रेरणा मिलती है। इस अवसर पर मंत्री श्री अर्जुन राम मेघवाल के साथ नगरीय प्रशासन मंत्री श्री कैलाश विजयवर्गीय, जल संसाधन मंत्री श्री तुलसीराम सिलावट, ग्रामीण अध्यक्ष श्री श्रवण सिंह चावड़ा, जनकार्य समिति अध्यक्ष श्री राजेंद्र राठौर सहित बड़ी संख्या में नागरिक उपस्थित थे।

# मुख्यमंत्री जन विश्वास अभियान के तहत आयोजित हुआ शिविर

**देवास।** "मुख्यमंत्री जन विश्वास अभियान" के तहत जिले के बागली विकासखंड अंतर्गत हाटपिपल्या में शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में कलेक्टर ऋतु राज सिंह ने नागरिकों से सीधे आवेदन लिए और उनकी समस्याओं का तत्काल निराकरण किया। जो समस्याएं तत्काल निराकरण नहीं हो सकी उन्हें सीएम हेल्पलाइन पोर्टल पर दर्ज कर विकासखंड में आयोजित होने वाले आगामी शिविर के पहले निराकृत किया जाएगा। शिविर में शासन के विभिन्न विभागों द्वारा अपनी-अपनी विभागीय योजनाओं की जानकारी देने और आमजन को लाभान्वित करने के लिए विशेष स्टॉल लगाए गए थे। इन स्टॉल्स के माध्यम से नागरिकों को जनकल्याणकारी योजनाओं की पात्रता और आवेदन प्रक्रिया के बारे में विस्तार से जानकारी दी गई। शिविर के दौरान कलेक्टर श्री ऋतु राज सिंह ने पुंजापुरा निवासी हितग्राही अंकित पिता लोकेंद्र काग को बागवानी योजना के अंतर्गत स्वीकृत नए ट्रैक्टर की चाबी सौंपी। इस योजना के तहत हितग्राही को ट्रैक्टर की खरीद पर 02 लाख 25 हजार रुपए की बड़ी अनुदान राशि प्रदान की गई है। शिविर डीएफओ श्री अमित सिंह,

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

# उद्यानिकी में ग्राफ्टिंग: आधुनिक पौध प्रवर्धन की प्रभावी तकनीक

**माजिद खान** (शोध छात्र) एम.एस-सी. बागवानी (सब्जी विज्ञान) सरदार पटेल विश्वविद्यालय, डोंगरिया, बालाघाट (म.प्र.)

**डॉ. मोहम्मद वामिक** सहायक प्राध्यापक, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, डोंगरिया, बालाघाट

**श्री अवधेश सिंह चौधरी** विभागाध्यक्ष, कृषि संकाय, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट

## परिचय

उद्यानिकी कृषि का एक महत्वपूर्ण एवं तेजी से विकसित होने वाला क्षेत्र है, जो फल, सब्जियाँ, फूल, औषधीय एवं सुगंधित पौधों के उत्पादन के माध्यम से पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन तथा किसानों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। बढ़ती जनसंख्या, गुणवत्तापूर्ण पौध सामग्री की मांग तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के कारण आधुनिक उद्यानिकी में ऐसी तकनीकों की आवश्यकता महसूस की जा रही है, जो कम समय में स्वस्थ, उच्च गुणवत्ता वाले एवं अधिक उत्पादन देने वाले पौधे तैयार कर सकें। इस संदर्भ में पौध प्रवर्धन की उन्नत तकनीकों का महत्व लगातार बढ़ रहा है। पारंपरिक बीज प्रवर्धन से तैयार पौधों में अक्सर आनुवंशिक विविधता पाई जाती है, जिसके कारण पौधों की वृद्धि, फलन, गुणवत्ता तथा उत्पादन में एकरूपता नहीं रहती। इसके अतिरिक्त कई फल एवं सजावटी फसलों में बीज द्वारा प्रवर्धन करने पर पौधों को फल देने में अधिक समय लगता है तथा इच्छित गुणों वाली नई पौध तैयार करना कठिन हो जाता है। इसलिए वानस्पतिक प्रवर्धन की विधियाँ, विशेष रूप से ग्राफ्टिंग (कलम बाँधना), उद्यानिकी में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। ग्राफ्टिंग एक वैज्ञानिक एवं प्रभावी पौध प्रवर्धन तकनीक है, जिसमें उच्च गुणवत्ता वाले सायन को मजबूत, रोग-प्रतिरोधी एवं अनुकूल रूटस्टॉक के साथ जोड़कर एक नया पौधा तैयार किया जाता है। इस तकनीक से विकसित पौधे अधिक स्वस्थ, दीर्घायु, उत्पादक तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति अधिक सहनशील होते हैं। इसके माध्यम से पौधों में मृदा जनित रोगों एवं कीटों का प्रभाव कम किया जा सकता है, साथ ही सूखा, लवणीयता तथा तापमान में उतार-चढ़ाव जैसी परिस्थितियों के प्रति उनकी सहनशीलता भी बढ़ाई जा सकती है।

वर्तमान समय में आधुनिक उद्यानिकी में ग्राफ्टिंग का उपयोग आम, अमरूद, नींबू वर्गीय फल, सेब, नाशपाती, चीकू, काजू, टमाटर, बैंगन, तरबूज, खरबूजा तथा गुलाब जैसी अनेक फल, सब्जी एवं सजावटी फसलों में सफलतापूर्वक किया जा रहा है। उच्च गुणवत्ता वाले पौध उत्पादन, शीघ्र फलन, अधिक उपज तथा बेहतर आर्थिक लाभ के कारण ग्राफ्टिंग आज व्यावसायिक उद्यानिकी की एक महत्वपूर्ण एवं विश्वसनीय तकनीक बन चुकी है और भविष्य में जलवायु-स्मार्ट एवं सतत कृषि प्रणाली के विकास में इसकी भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण होने की संभावना है।

## ग्राफ्टिंग क्या है?

ग्राफ्टिंग या कलम बाँधना एक महत्वपूर्ण वानस्पतिक प्रवर्धन तकनीक है, जिसमें दो संगत पौधों के भागों को इस प्रकार जोड़ा

जाता है कि वे आपस में मिलकर एक ही पौधे के रूप में विकसित हो जाएँ। इस प्रक्रिया में पौधों के संवहनी ऊतक आपस में जुड़ जाते हैं, जिससे जल, पोषक तत्वों एवं भोजन का आदान-प्रदान सुचारु रूप से होने लगता है। सफल ग्राफ्टिंग के बाद तैयार पौधा दोनों भागों के श्रेष्ठ गुणों को धारण करता है, जिससे उसकी वृद्धि, उत्पादकता एवं गुणवत्ता में सुधार होता है।

ग्राफ्टिंग में पौधे का ऊपरी भाग सायन कहलाता है, जो फल, फूल, स्वाद, आकार एवं अन्य वांछित गुणों का निर्धारण करता है, जबकि जड़ वाला भाग रूटस्टॉक कहलाता है, जो पौधे की मजबूती, जड़ प्रणाली के विकास, पोषक तत्वों एवं जल के अवशोषण, रोग एवं कीट प्रतिरोधक क्षमता तथा सूखा, लवणीयता और अन्य प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता को प्रभावित करता है। इसी कारण आधुनिक उद्यानिकी में ग्राफ्टिंग का व्यापक उपयोग स्वस्थ, उच्च गुणवत्ता वाले तथा अधिक उत्पादन देने वाले पौध तैयार करने के लिए किया जाता है।

## ग्राफ्टिंग की प्रमुख विधियां

* व्हिप एवं टंग ग्राफ्टिंग * क्लेफ्ट ग्राफ्टिंग
* वेनियर ग्राफ्टिंग * एप्रोच ग्राफ्टिंग
* साइड ग्राफ्टिंग * सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग

## ग्राफ्टिंग के प्रमुख लाभ

* उच्च गुणवत्ता एवं समान गुणों वाले पौधे प्राप्त होते हैं।
* पौधों में मृदा जनित रोगों एवं सूत्रकृमियों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
* सूखा, लवणीयता एवं तापमान परिवर्तन के प्रति सहनशीलता विकसित होती है।
* पौधों में शीघ्र फूल एवं फल लगते हैं।

* उपज एवं उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार होता है।
* पोषक तत्वों एवं जल का बेहतर उपयोग होता है।
* बागों की उत्पादकता एवं किसानों की आय में वृद्धि होती है।

## उद्यानिकी फसलों में ग्राफ्टिंग का उपयोग

ग्राफ्टिंग का उपयोग विभिन्न उद्यानिकी फसलों में व्यापक रूप से किया जाता है।

**फल फसलें-** आम, अमरूद, नींबू, संतरा, मौसंबी, सेब, नाशपाती, चीकू एवं काजू।

**सब्जी फसलें-** टमाटर, बैंगन, तरबूज, खरबूजा एवं खीरा।

**सजावटी पौधे-** गुलाब, बोगनवेलिया, गुड़हल तथा कैमेलिया।

## ग्राफ्टिंग की सीमाएं

* तकनीकी ज्ञान एवं प्रशिक्षित श्रमिकों की आवश्यकता होती है।
* सायन एवं रूटस्टॉक का संगत होना आवश्यक है।
* पौध तैयार करने की लागत अपेक्षाकृत अधिक होती है।
* गलत विधि अपनाने पर ग्राफ्ट असफल हो सकता है।

## भविष्य की संभावनाएं

जलवायु परिवर्तन, मृदा जनित रोगों एवं गुणवत्तापूर्ण पौध सामग्री की बढ़ती मांग को देखते हुए ग्राफ्टिंग का महत्व लगातार बढ़ रहा है। भविष्य में उन्नत रूटस्टॉक, आधुनिक नर्सरी प्रबंधन, स्वचालन तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी तकनीकों के समावेश से ग्राफ्टिंग और अधिक प्रभावी तथा व्यावसायिक रूप से लाभदायक बनने की संभावना है।

## निष्कर्ष

ग्राफ्टिंग आधुनिक उद्यानिकी की एक महत्वपूर्ण एवं वैज्ञानिक पौध प्रवर्धन तकनीक है, जो पौधों की गुणवत्ता, उत्पादकता तथा रोग एवं प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह तकनीक किसानों को स्वस्थ पौध सामग्री उपलब्ध कराने, उत्पादन लागत को संतुलित रखने तथा बेहतर आर्थिक लाभ प्राप्त करने में सहायता करती है। सतत एवं जलवायु-अनुकूल कृषि प्रणाली के विकास में ग्राफ्टिंग का योगदान भविष्य में और अधिक महत्वपूर्ण होगा।

✍डॉ. सरिता सिंह (वैज्ञानिक)
✍डॉ. निधि प्रजापति (वैज्ञानिक)
✍डॉ. रूपेन्द्र कुमार झाड़े (वैज्ञानिक)
✍डॉ. चंचल भार्गव (वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी) कृषि विज्ञान केन्द्र चंदनगांव. छिंदवाड़ा (म.प्र.)

# सहजन मुनगा के फायदे एवं उपयोगिता

दुनिया का सबसे ताकतवर पोषण पूरक आहार है- सहजन (मुनगा)। इसकी जड़ से लेकर फूल, पत्ती, फल्ली, तना गोंद हर चीज उपयोगी होती है। आयुर्वेद में सहजन से तीन सौ रोगों का उपचार संभव है। सहजन के पौष्ठिक गुणों की तुलनाः- विटामिन सी-संतरे से सात गुना अधिक। विटामिन ए-गाजर से चार गुना अधिक। कैलशियम दूध से चार गुना अधिक। पोटेशियम- केले से तीन गुना अधिक। प्रोटीन-दही की तुलना में तीन गुना अधिक। स्वास्थ्य के हिसाब से इसकी फली, हरी और सूखी पत्तियों में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, कैल्शियम, पोटेशियम, आयरन, मैग्नीशियम, विटामिन-ए,सी और बी-काम्प्लेक्स प्रचुर मात्रा में पाई जाते हैं। इनका सेवन कर कई बीमारियों को बढ़ने से रोका जा सकता है, इसका बॉटेनिकल नाम 'मोरिंगा ओलिफेरा' है। हिंदी में इसे सहजन, सुजना, सेंजन और मुनगा नाम से भी जानते हैं, जो लोग इसके बारे में जानते हैं, वे इसका सेवन जरूर करते हैं।

सहजन का फूल पेट और कफ रोगों में, इसकी फली वात व उदशूल में, पत्ती नेत्ररोग, मोच, साटिका, गठिया आदि में उपयोगी है। इसकी छाल का सेवन साइटिका,गठिया, लीवर में लाभकारी होता है। सहजन के छाल में सहद मिलाकर पीने से वात और कफ रोग खत्म हो जाते हैं।

सहजन की पत्ती का काढ़ा बनाकर पीने से गठिया, साइटिका, पक्षाघात, वायु विकार में शीघ्र लाभ पहुंचता है। साइटिका के तीव्र वेग में इसकी जड़ का काढ़ा तीव्र गति से चमत्कारी प्रभाव दिखाता है। मोच इत्यादि आने पर सहजन की पत्ती की लुगदी बनाकर सरसों तेल डालकर आंच पर पकाएं और मोच के स्थान पर लगाने से जल्दी ही लाभ मिलने लगता है। सहजन के फली की सब्जी खाने से पुराने गठिया, जोडों के दर्द, वायु संचय, वात रोगों में लाभ होता है। इसके ताजे पत्तों का रस कान में डालने से दर्द ठीक हो जाता है साथ ही इसकी सब्जी खाने से गुर्दे और मूत्राशय की पथरी कटकर निकल जाती है। इसकी जड़ की छाल का काढ़ा सेंधा नमक और हींग डालकर पीने से पित्ताशय की पथरी में लाभ होता है। सहजन के पत्तों का रस बच्चों के पेट के कीड़ निकालता है और उल्टी-दस्त भी रोकता है। ब्लड प्रेशर और मोटापा कम करने में भी कारगर सहजन का रस सुबह-शाम पीने से हाई ब्लड प्रेशर में लाभ होता है। इसकी पत्तियों के रस के सेवन से मोटापा धीरे-धीरे कम होने लगता है। इसकी छाल के काढ़े से कुल्ला करने पर दांतों के कीड़े नष्ट होते हैं और दर्द में आराम मिलता है। सहजन के कोमल पत्तों का साग खाने से कब्ज दूर होता है, इसके अलावा इसकी जड़ के काढ़े को सेंधा नमक और हींग के साथ पीने से मिर्गी के दौरों में लाभ होता है। इसकी पत्तियों को पीसकर लगाने से घाव और सूजन ठीक होते हैं।

सहजन के बीज से पानी को काफी हद तक शुध्द करके पेयजल के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इसके बीज को चूर्ण के रूप में पीसकर पानी में मिलाया जाता है। पानी में घुल कर यह एक प्रभावी नेचुरल क्लोरीफिकेशन एजेंट बन जाता है। यह न सिर्फ पानी को बैक्टीरिया रहित बनाता है, बल्कि यह पानी की सांद्रता को भी बढ़ाता है। कैंसर तथा शरीर के किसी हिस्से में बनी गांठ, फोड़ा आदि में सहजन की जड़ का अजवाइन, हींग और सौंठ के साथ काढ़ा बनाकर पीने का प्रचलन है। यह काढ़ा साइटिका (पैरों में दर्द) जोड़ों में दर्द, लगता, दमा, सूजन, पथरी आदि में भी लाभकारी है। सहजन के गोंद को जोड़ों के दर्द दमा आदि रोगों में लाभदायक माना जाता है। आज भी ग्रामीणों की ऐसी मान्यता है कि सहजन के प्रयोग से वायरस से होने वाले रोग, जैसे चेचक आदि के होने का खतरा टल जाता है।

सहजन में अधिक मात्रा में ओलिक एसिड होता है, जो कि एक प्रकार का मोनोसैच्युरेटेड फैट है और यह शरीर के लिए अतिआवश्यक है। सहजन में विटामिन-सी की मात्रा बहुत होती है। यह शरीर के कई रोगों से लड़ता है। यदि सर्दी की वजह से नाक-कान बंद हो चुके हैं तो, सहजन को पानी में उबालकर उस पानी का भाप लें। इससे जकड़न कम होती है। सहजन में कैल्शियम की मात्रा अधिक होती है, जिससे हड्डियां मजबूत बनती हैं। इसका जूस गर्भवती को देने की सलाह दी जाती है, इससे डिलवरी में होने वाली समस्या से राहत मिलती है और डिलवरी के बाद भी मां को तकलीफ कम होती है, गर्भवती महिला को इसकी पत्तियों का रस देने से डिलीवरी में आसानी होती है। सहजन के फली की हरी सब्जी को खाने से बुढ़ापा दूर रहता है इससे आंखो की रोशनी भी अच्छी होती है। सहजन को सूप के रूप में भी पी सकते हैं, इससे शरीर का खून साफ होता है। सहजन का सूप पीना सबसे अधिक फायदेमंद होता है। इसमें भरपूर मात्रा में विटामिन सी पाया जाता है। विटामिन सी के अलावा यह बीटा कैरोटीन, प्रोटीन और कई प्रकार के लवणों से भरपूर होता है, यह मैग्नीज, मैग्नीशियम, पोटेशियम और फाइबर से भरपूर होते हैं। यह सभी तत्व शरीर के पूर्ण विकास के लिए बहुत जरूरी हैं। कैसे बनाएं सहजन का सूप? सहजन की फली को कई छोटे-छोटे टुकडों में काट लेते हैं। दो कप पानी लेकर इसे धीमी आंच पर उबलने के लिए रख देते हैं, जब पानी उबलने लगे तो इसमें कटे हुए सहजन की फली के टुकड़े डाल देने हैं, इसमें सहजन की पत्तियां भी मिलाई जा सकती हैं, जब पानी आधा बचे तो सहजन की फलियों के बीच का गूदा निकालकर उपरी हिस्सा अलग कर लेते हैं, इससें थोड़ा सा नमक और काली मिर्च मिलाकर पीना चाहिए।

1. सहजन के सूप के नियमित सेवन से सेक्सुअल हेल्थ बेहतर होती है. सहजन महिला और पुरूष दोनों के लिए समान रूप् से फायदेमंद है।
2. सहजन में एंटी-बैक्टीरियल गुण पाया जाता है जो कई तरह के संक्रमण से सुरक्षित रखने में मददगार है. इसके अलावा इसमें मौजूद विटामिन सी इम्यून सिस्टम को बूस्ट करने का काम करता है।
3. सहजन का सूप पाचन तंत्र को भी मजबूत बनाने का काम करता है, इसमें मौजूद फाइबर्स कब्ज की समस्या नहीं होने देते है।
4. अस्थमा की शिकायत होने पर भी सहजन का सूप पीना फायदेमंद होता है. सर्दी-खांसी और बलगम से छुटकारा पाने के लिए इसका इस्तेमाल घरेलू औषधि के रूप् में किया जाता है।
5. सहजन का सूप खून की सफाई करने में भी मददगार है, खून साफ होने की वजह से चेजरे पर भी निखार आता है।
6. डायबिटीज कंट्रोल करने के लिए भी सहजन के सेवन की सलाह दी जाती है।

दिनेश शिवहरे
Mob. : 98263-55396
मध्य प्रदेश का पहला
श्री दयाल बन्धु केन्द्र
(हिनौतिया वालों की दुकान)
सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता
गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)
E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66yahoo.com
08/2025-26

# अमृतपानी: जैविक खेती का चमत्कारी रहस्य

✍ **प्रकृति चौहान** (असिस्टेंट प्रोफेसर)
मध्यांचल प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, भोपाल (म.प्र.)

✍ **ज्योति** असिस्टेंट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज, आईआईएमटी यूनिवर्सिटी, मेरठ (उ.प्र.)

वर्तमान समय में खेती के संसाधनों का संरक्षण करना और पर्यावरण को रासायनिक (केमिकल) खतरों से बचाना ही टिकाऊ या सस्टेनेबल खेती का मुख्य लक्ष्य है। पिछले कुछ दशकों में बढ़ती जनसंख्या के साथ भोजन की मांग तेजी से बढ़ी है। फसल की पैदावार जल्द बढ़ाने के चक्कर में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अंधाधुंध उपयोग हुआ, जिसने हमारी उपजाऊ मिट्टी की सेहत को भारी नुकसान पहुँचाया है।

इस समस्या से निपटने और मिट्टी को पुनः जीवित करने के लिए हमारी पारंपरिक स्वदेशी ज्ञान तकनीक (ङ्क्ङ्घ) और जैविक उत्पाद सबसे कारगर उपाय बनकर उभरे हैं। इन्हीं पारंपरिक जैविक तकनीकों में से एक है–अमृतपानी।

**अमृतपानी क्या है? (मरी हुई मिट्टी के लिए संजीवनी)-** अमृतपानी गाय के गोबर, गोमूत्र, घी और गुड़ से तैयार किया जाने वाला एक पारंपरिक बायो-एनहांसर (Bio-enhancer) या जैविक घोल है। इसे 'अमृत खाद' भी कहा जाता है। यह केवल एक खाद नहीं है, बल्कि 'मरी हुई' या बंजर होती मिट्टी के लिए संजीवनी का काम करता है।

**अमृतपानी की पोषण और वैज्ञानिक संरचना**

**a.मुख्य पोषक तत्व-** इसमें लगभग <2% नाइट्रोजन, <0.4% फॉस्फोरस और <0.3% पोटैशियम जैसे प्राथमिक पोषक तत्व पाए जाते हैं।

b.मित्र जीवाणु (Beneficial Microorganisms): इसमें स्यूडोमोनास (Pseudomonas), राइजोबियम (Rhizobium) और बैसिलस (Bacillus) जैसे अत्यधिक लाभकारी सूक्ष्मजीव होते हैं।

**c.एंजाइम और हार्मोन-** यह सेल्युलेस, एमाइलेज, यूरिएज जैसे एंजाइम, ग्रोथ हार्मोन्स और विटामिन्स का समृद्ध स्रोत है।

**d.रोग प्रतिरोधक गुण-**इसमें हानिकारक फफूंद जैसे Colletotrichum gloeosporioides और Fusarium solani के खिलाफ एंटीमाइक्रोबियल (एंटीफंगल) गुण होते हैं।

**सामग्री का वैज्ञानिक एवं पोषण महत्व**

**a.गाय का गोबर-**यह बैसिलस बैक्टीरिया, सेल्यूलोज, हेमिसेल्यूलोज और कई सूक्ष्म पोषक तत्वों का भंडार है।

**b.गाय का देसी घी-** यह एंटीऑक्सीडेंट्स, स्वस्थ वसा और मिनरल्स का उत्कृष्ट स्रोत है, जो सूक्ष्मजीवों को ऊर्जा देता है।

**c.गुड़-** यह सूक्ष्मजीवों के लिए कार्बोहाइड्रेट (भोजन) का काम करता है, जिससे उनकी संख्या तेजी से बढ़ती है।

**d.मिट्टी का बर्तन-** यह ईको-फ्रेंडली होता है और घोल के pH मान (ग्रेडिएंट) को संतुलित रखता है।

**विकल्प (Substitutes):** यदि गाय का घी उपलब्ध न हो तो सरसों का तेल और गुड़ की जगह शहद का उपयोग किया जा सकता है।

अमृतपानी बनाने की आसान विधि (2 लीटर घोल के लिए)

**आवश्यक सामग्री:** *ताज़ा गाय का गोबर- 500 ग्राम * गुड़-50 ग्राम * गाय का देसी घी-2.5 ग्राम * साफ़ पानी-2 लीटर * एक मिट्टी का बर्तन या मटका

**बनाने का चरणबद्ध तरीका**

**a.पेस्ट बनाएं-** सबसे पहले 500 ग्राम गोबर, 2.5 ग्राम घी और 50 ग्राम गुड़ को आपस में मिलाकर एक गाढ़ा पेस्ट बना लें और इसे 4 घंटे के लिए अलग रख दें।

**b.घोल तैयार करें-** 4 घंटे बाद, मिट्टी के बर्तन में 2 लीटर पानी डालें और उसमें तैयार किया हुआ पेस्ट मिला दें। इसे लकड़ी की छड़ी से अच्छी तरह हिलाएं।

**c.किण्वन (Fermentation):** बर्तन का मुंह हवाबंद (Air-tight) करके इसे किसी छायादार जगह पर 7 दिनों के लिए रख दें।

**d.देखभाल-** इन 7 दिनों के दौरान प्रतिदिन सुबह और शाम घोल को लकड़ी की छड़ी से दो बार चलाएं।

**e.छनाई-** 7 दिनों के बाद घोल को एक साफ मलमल के कपड़े से छान लें। आपका अंतिम उत्पाद–अमृतपानी तैयार है।

**खेतों में इस्तेमाल करने का तरीका और मात्रा**

**सिंचाई के साथ (मृदा सुधार हेतु)-** प्रति एकड़ खेत के लिए 200 लीटर अमृतपानी को सिंचाई के पानी के साथ मिलाकर चलाएं।

**पत्तियों पर छिड़काव (स्प्रे)-** 1 लीटर अमृतपानी को 10 लीटर पानी में मिलाकर फसलों (जैसे धान, गेहूं, सब्जियां) पर छिड़काव करें। यह बायो-पेस्टीसाइड का काम करता है और कीड़ों-बीमारियों का प्रकोप कम करता है।

**बीज एवं जड़ उपचार (Seed/Root Treatment):** बुआई या रोपाई से 1 घंटे पहले बीजों या पौधों की जड़ों को इसके घोल में भिगोकर उपचारित करें।

**मल्चिंग (Mulching) में उपयोग-** गन्ने के सूखे पत्तों या अवशेषों को अमृतपानी में भिगोकर खेत में बिछाने (मल्चिंग) से वे तेजी से सड़कर जैविक खाद बनते हैं।

भंडारण अवधि- यद्यपि इसे 1 वर्ष तक रखा जा सकता है, परंतु इसका सबसे अच्छा प्रभाव बनाने के 6 महीने के भीतर उपयोग करने पर मिलता है।

**अमृतपानी से किसानों को होने वाले प्रमुख लाभ**

**सजीव मिट्टी-** जब यह घोल मिट्टी में डाला जाता है, तो इसके जीवाणु मिट्टी में मौजूद जैविक कचरे को तोड़कर पौधों के अवशोषण योग्य बनाते हैं।

**रोगों से सुरक्षा-** यह धान, गेहूं और फल-सब्जियों में कीटनाशक और फफूंदनाशी के रूप में कार्य करता है।

**कम लागत में अधिक उत्पादन-** केमिकल खाद पर होने वाले भारी खर्च को बचाकर जैविक तरीके से गुणवत्तापूर्ण पैदावार देता है।

**वैज्ञानिक दृष्टिकोण और भविष्य की आवश्यकताएँ**

**यद्यपि भारत का सिक्किम राज्य पूर्णत: जैविक खेती अपनाकर वैश्विक मिसाल बन चुका है, फिर भी पारंपरिक स्वदेशी तकनीकों (ITK) को और अधिक वैज्ञानिक समर्थन की आवश्यकता है-**

* अमृतपानी की प्रभावशीलता अलग-अलग मौसम, मिट्टी के प्रकार और फसलों पर भिन्न हो सकती है। * इसके कच्चे घटकों की सटीक मात्रा, छिड़काव के समय और खुराक का मानकीकरण (Standardization) करने के लिए और अधिक लैब व फील्ड ट्रायल अनुसंधान की आवश्यकता है।

**निष्कर्ष-** अमृतपानी भारतीय किसानों के लिए एक वरदान और जैविक खेती में उम्मीद की नई किरण है। यह न केवल मिट्टी की सेहत और संरचना में सुधार करता है, बल्कि पर्यावरण को भी सुरक्षित रखता है। यदि किसान वैज्ञानिक तरीके से अमृतपानी और जैविक खादों को अपनाएं, तो टिकाऊ खेती के साथ-साथ अपनी आय में भी अभूतपूर्व वृद्धि कर सकते हैं।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका


# फसल उत्पादन में मृदा की संरचना और उसके भौतिक गुणधर्मों की भूमिका

✍ गोविन्द, दीक्षा मरावी, अजय कुमार कश्यप (शोध छात्र कृषि) महात्मा गाँधी, चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट सतना (म.प्र.)

**प्रस्तावना:** फसल उत्पादन में मृदा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पौधों को सहारा देने के साथ-साथ आवश्यक जल, वायु और पोषक तत्व उपलब्ध कराती है। मृदा की बनावट (Texture), संरचना (Structure), सरंध्रता (Porosity), bulk density, जल धारण क्षमता तथा जल-वायु संचरण जैसे भौतिक गुणधर्म पौधों की जड़ वृद्धि, पोषक तत्वों के अवशोषण और फसल उत्पादकता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। मृदा की संरचना एवं बनावट रंध्रों के आकार और वितरण को निर्धारित करती हैं, जिससे जल धारण, जल निकास तथा वायु संचार प्रभावित होता है। अच्छी संरचना वाली मृदा में जड़ों के विकास और सूक्ष्मजीवी गतिविधियों के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बनती हैं। इसलिए मृदा के भौतिक गुणधर्मों का उचित प्रबंधन मृदा स्वास्थ्य, पोषक तत्व उपयोग दक्षता और टिकाऊ फसल उत्पादन के लिए आवश्यक है। इस लेख में मृदा की संरचना एवं प्रमुख भौतिक गुणधर्मों तथा फसल उत्पादन पर उनके प्रभाव को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझाया गया है।

**मृदा की संरचना एवं महत्व**-मृदा की संरचना से तात्पर्य मृदा के कणों का आकार, उनके वितरण, और उनके बीच के रिक्त स्थान से है। यह कण मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं-बालू (Sand), दोमट (Silt), और चिकनी मृदा (Clay)। इन कणों का अनुपात मृदा की बनावट और उसके व्यवहार को निर्धारित करता है।

**1.बालू (Sand):** बालू के कण बड़े और मोटे होते हैं, कारणवश बालू मृदा की जलधारण क्षमता कम होती है, लेकिन इसमें वायुसंचार अच्छा होता है। हालांकि, पौधों हेतु पानी की उपलब्धता सीमित हो सकती है। जिस वजह से इस प्रकार की मृदा मे जल की अधिक आवश्यकता होती है।

**2.दोमट (Silt):** दोमट के कण छोटे और चिकने होते हैं जिस वजह से इस मृदा की जलधारण क्षमता बालू मृदा की तुलना मे अधिक होती है । इस प्रकार की मृदा में जलधारण क्षमता और वायुसंचार संतुलित होता है, जो फसलों के लिए अनुकूल होता है।

**3.चिकनी मृदा (Clay):** चिकनी मृदा के कण बहुत छोटे और चिपचिपे होते हैं। यह मृदा जल को बहुत अच्छी तरह से धारण करती है, लेकिन इसमें वायुसंचार कम होता है, जिससे जड़ों की श्वसन क्रिया में बाधा उत्पन्न हो सकती है, जिससे फसल या पोधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। मृदा की बनावट न केवल जलधारण और वायुसंचार को प्रभावित करती है, बल्कि पोषक तत्वों की उपलब्धता और पौधों की जड़ों के विकास पर भी असर डालती है। उदाहरण के लिए, बालू या रेतीली मृदा की ढीली संरचना में जड़ों का जमाव/फैलाव तो आसानी से हो जाता है, परंतु इसके विपरीत जलधारण क्षमता कम होने की वजह से उन्हें पर्याप्त पोषक तत्व नहीं मिलते हैं। दूसरी ओर, चिकनी मृदा में जड़ें अधिक पानी और पोषक तत्व प्राप्त करती हैं, लेकिन मृदा की सघन संरचना होने की वजह से वायुसंचार की कमी के कारण उनका विकास धीमा हो सकता है।

**मृदा के भौतिक गुणों का फसल उत्पादन पर प्रभाव:** मृदा के भौतिक गुणों जैसे जलधारण क्षमता, संघनन, वायुसंचार, और तापमान फसल उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण हैं। ये गुणधर्म सीधे तौर पर पौधों की वृद्धि और उपज को प्रभावित करते हैं।

**जलधारण क्षमता (Water Holding Capacity):** मृदा की जलधारण क्षमता यह निर्धारित करती है कि मृदा में कितना पानी उपलब्ध रहेगा, जिसे पौधे अपनी जड़ों के माध्यम से उपयोग मे ला सकें। जिन मृदाओ की जलधारण क्षमता अधिक होती है, वे लंबे समय तक पौधों को आवश्यक नमी प्रदान करती हैं। उदाहरण के लिए, चिकनी या काली मृदा की जलधारण क्षमता बालू मृदा की तुलना में अधिक होती है, जो इसे अधिक उपजाऊ बनाती है।

**वायुसंचार (Aeration):** वायुसंचार का मतलब मृदा में गेसों के आदान-प्रदान से या ऑक्सीजन की उपलब्धता से है, जो जड़ों की श्वसन क्रिया के लिए आवश्यक है। मृदा में पर्याप्त वायुसंचार पौधों की जड़ों को स्वस्थ और सक्रिय बनाता है, जिससे वे पोषक तत्वों का अधिक मात्रा मे अवशोषण कर पाती हैं। अगर मृदा में वायुसंचार की कमी होती है, तो जड़ें दमित (Suffocated) हो सकती हैं, जिससे पौधों की वृद्धि रुक सकती है।

**मृदा तापमान (Soil Temperature):** मृदा का तापमान पौधों की वृद्धि और विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है। जो मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को प्रभावित करता है, जिससे पोषक तत्वों की उपलब्धता निर्धारित होती है, जहां अत्यधिक और न्यूनतम तापमान मृदा मे पोषक तत्वों की उपलब्धता पर विपरीत प्रभाव डालते है, जिससे पोधों की वृद्धि एवं विकास बाधित होता है।

**मृदा संघनन (Soil Compaction):** मृदा संघनन का तात्पर्य मृदा के कणों के बिच के रिक्त स्थान से है। जब मृदा के कणों के बीच का रिक्त स्थान जितना कम होगा उतना ही मृदा में जल और वायु का संचरण बाधित होगा। संघनित मृदा में जड़ें आसानी से नहीं फैल पातीं, जिससे पौधों की वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। अत्यधिक मृदा सघनता फसल की उपज को सीमित कर देती है। मृदा की संरचना और भौतिक गुणधर्मों को सुधारने और फसल उत्पादन को बढ़ाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय। मृदा की संरचना और भौतिक गुणधर्मों को सुधारने के लिए कई महत्वपूर्ण उपाय अपनाए जा सकते हैं।जिसमे जैविक खादों, जैसे गोबर की खाद (FYM), वर्मी कम्पोस्ट और हरी खाद आदि का उपयोग मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा को बढ़ाते हैं, जिससे मृदा की जलधारण क्षमता, वायुसंचार और संरचना में सुधार होता है। ये पदार्थ सूक्ष्मजीवों की संख्या में वृद्धि करते हैं, जिससे पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है और मृदा का सम्पूर्ण स्वास्थ्य बेहतर होता है। मल्चिंग की प्रक्रिया मृदा की सतह पर कार्बनिक या अकार्बनिक सामग्री की परत बिछाकर नमी बनाए रखने और मृदा के तापमान को नियंत्रित करने में मदद करती है, साथ ही खरपतवार नियंत्रण के लिए भी एक बेहतर विकल्प के रूप मै मल्चिंग या अच्छादन का प्रयोग कीया जाता है। फसल चक्र, जिसमें विभिन्न प्रकार की फसलों को एक चक्र रूप से उगाया जाता है, जो मृदा की संरचना को संतुलित बनाए रखती है और संघनन (compaction) को रोकता है। विशेष रूप से, जड़ वाली फसलें जैसे मूली और गाजर मृदा को ढीला करने में सहायक होती हैं। हल्की और सतही जुताई मृदा के संघनन को कम करने और वायुसंचार को बेहतर बनाने में मदद करती है। हरी खाद, जैसे कि सनई (Sesbania) और ढैंचा (Dhaincha), को खेत में मिलाने से मृदा की संरचना में सुधार होता है। यह विधि कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ाने, पोषक तत्वों की उपलब्धता के साथ-साथ मृदा की जलधारण क्षमता और वायुसंचार को बेहतर बनाती है। जैव उर्वरक, जैसे नाइट्रोजन फिक्सिंग बैक्टीरिया (राइजोबियम और एजोटोबैक्टर), मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाते हैं और मृदा के भौतिक ढांचे को स्थिर रखने में सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त, मल्चिंग और फसल चक्रीकरण जैसी तकनीकें मृदा के तापमान को नियंत्रित करने में मदद करती हैं, जिससे मृदा के माइक्रोबियल जीवन को अनुकूल परिस्थितियाँ मिलती हैं, जो कार्बनिक पदार्थों का उपघटन करते है जिससे पौधों की वृद्धि एवं पोषण के लिए बेहतर परिवेश बनता है। इन उपायों का सामूहिक उपयोग मृदा की संरचना और भौतिक गुणधर्मों को सुधारने के साथ-साथ कृषि उत्पादन को बढ़ाने में अत्यंत प्रभावी सिद्ध होता है।

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद
बीज एवं कीटनाशक दवाईयां
उचित रेट पर मिलती है
प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094
भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
10/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

डॉ. पी.पी. सिंह, डॉ. एस.वी.एस. चौहान
श्रीमती रीना शर्मा, डॉ. स्वाती तोमर
श्रीमती अर्चना खरे एवं डॉ. जे.सी. गुप्ता
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय-कृषि विज्ञान केन्द्र, मुरैना (म.प्र.)

# मुर्गीयों में कृमि संक्रमण (डीवर्मिंग) एवं रोकथाम

मुर्गीपालन व्यावसाय ग्रामीण आवादी को भोजन, आय और रोजगार प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह व्यावसाय बेहद लाभदायक होने के साथ-साथ, मुर्गियों के स्वास्थ्य को बचाने की चुनौती भी साथ में लाता है। किसानों के सामने आने वाले छिपे हुए लेकिन गंभीर खतरों में से एक है मुर्गियों में कृमि संक्रमण, पक्षियों के पाचन तंत्र में रहने वाले कृमि चुपचाप उनकी वृद्धि को कम करते हैं, अंडे उत्पादन को घटाते हैं और मुर्गियों को बीमारियों के प्रति अधिक संवेदनशील बनाते हैं।

ऐसी परिस्थितियों में मुर्गियों में कृमिनाशक उपचार आवश्यक हो जाता है। आंतरिक परजीवियों को हटाकर, किसान मुर्गियों के स्वास्थ्य की रक्षा करते हैं, बेहतर उत्पादकता सुनिश्चित करते हैं और अपनी आय को बढाते हैं। वर्तमान में कृमिनाशक उपचार क्यों महत्वपूर्ण है, मुर्गियों को प्रभावित करने वाले कृमियों के प्रकार, उनकी पहचान कैसे करें और रोकथाम और नियंत्रण के सर्वोत्तम तरीके क्या हैं। इसके बारे में किसान को जागरूक होने की महती आवश्यकता है। पोल्ट्री मुर्गीपालन लाखों परिवारों को भोजन, आय और रोजगार प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह बेहद लाभदायक होने के साथ-साथ, मुर्गियों के स्वास्थ्य को भी सर्वोच्च प्राथमिकता देता है। किसानों के सामने आने वाले छिपे हुए लेकिन गंभीर खतरों में से एक है कृमि संक्रमण। पक्षियों के पाचन तंत्र में रहने वाले कृमि चुपचाप उनकी वृद्धि को कम करते हैं, अंडे उत्पादन को घटाते हैं और मुर्गियों को बीमारियों के प्रति अधिक संवेदनशील बनाते हैं। यहीं पर मुर्गियों में कृमिनाशक उपचार आवश्यक हो जाता है। आंतरिक परजीवियों को हटाकर, किसान पक्षियों के स्वास्थ्य की रक्षा करते हैं, बेहतर उत्पादकता सुनिश्चित करते हैं और कृषि लाभ को सुरक्षित रखते हैं। इस लेख में, हम जानेंगे कि कृमिनाशक उपचार क्यों महत्वपूर्ण है, मुर्गियों को प्रभावित करने वाले कृमियों के प्रकार, उनकी पहचान कैसे करें और रोकथाम और नियंत्रण के सर्वोत्तम तरीके क्या हैं।

**मुर्गियों में कृमिनाशन (डीवर्मिंग) क्या है?:** मुर्गियों में कृमिनाशन (डीवर्मिंग) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा मुर्गियों और अन्य पक्षियों के शरीर में रहने वाले आंतरिक परजीवियों, मुख्य रूप से आंतों के कीड़ों को नष्ट किया जाता है। ये परजीवी मुर्गियों से आवश्यक पोषक तत्व धीरे-धीरे छीनते रहते हैं, आंतों की परत को नुकसान पहुंचाते हैं और मुर्गियों के रोग प्रतिरक्षा तंत्र को कमजोर करते हैं। यदि इन परजीवियों को समय रहते नियंत्रित नहीं किया जाता है, तो ये दाने की दक्षता को कम कर देते हैं, ब्रॉयलर मुर्गियों की वृद्धि को धीमा कर देते हैं, अंडे देने वाली मुर्गियों में अंडे का उत्पादन कम कर देते हैं और गंभीर मामलों में मुर्गियों की मृत्यु का कारण भी बन सकते हैं। नियमित कृमिनाशन मुर्गियों के झुंड के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बनाए रखने के सबसे प्रभावी तरीकों में से एक है।

मुर्गियों में पाए जाने वाले सामान्य कृमि निम्ना प्रकार के होते हैं।

मुर्गियों में वैसे तो कई प्रकार के कृमि हो सकते हैं, जिनमें से प्रत्येक के अपने-अपने हानिकारक प्रभाव होते है।

* **गोलकृमि (एस्कारिडिया गैली):** यह सबसे आम प्रकार का परजीवि है, जो अक्सर मल में दिखाई देता है। ये आंतों को अवरुद्ध कर देते हैं और कमजोरी पैदा करते हैं।

* **टेपवर्म:** ये लंबे, खंडित परजीवी कृमि होते हैं जो पोषक तत्वों के अवशोषण में बाधा डालते हैं, जिससे वृद्धि दर कम हो जाती है। छोटे चूजों में विकास रुक जाता है।

* **सीकल कृमि:** ये सीका (आंतों की बंद थैली) में पाए जाने वाले परजीवी कृमि होते हैं। ये ब्लैकहेड रोग भी फैला सकते हैं, जो विशेष रूप से टर्की में खतरनाक होता है।

* **गैपवर्म:** ये श्वासनली से चिपक जाते हैं, जिससे मुर्गियों को सांस लेने में कठिनाई महसूस करते हैं। इससे प्रभावित मुर्गी बार-बार अपनी गर्दन खींचती हैं।

* **हेयरवर्म:** ये बहुत पतले परजीवी होते हैं जो आंतों को नुकसान पहुंचाते हैं, जिससे अक्सर अंडे देने की क्षमता कम हो जाती है।

मौजूद कृमि के प्रकार को समझने से सही उपचार विधि चुनने में मदद मिलती है।

**मुर्गियों के स्वास्थ्य और उत्पादकता पर कृमि का प्रभाव**-कृमि संक्रमण से मुर्गियाँ तुरंत नहीं मरतीं, लेकिन इससे उनके स्वास्थ्य और लाभप्रदता को दीर्घकालिक नुकसान होता है। सामान्य प्रभावों में निम्नलिखित लक्षण दिखाई देते हैं।

* फीड रूपांतरण अनुपात (FCR कम हो जाता है, क्योंकि मुर्गियाँ ज्यादा दाना खाती हैं लेकिन उनका वजन कम बढ़ता है।

* ब्रॉयलर मुर्गियों का विकास रुक जाता है, जिससे वे बाजार के लिए अनुपयुक्त हो जाती हैं।

* अंडे देने वाली मुर्गियों (लेयर मुर्गी) में अंडे का उत्पादन कम हो जाता है और अंडों के छिलके भी कमजोर हो जाते हैं।

* रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, जिससे मुर्गियाँ अन्य संक्रमणों जैसे- ई कोलाई, सालमनेलोसिस जैसे रोगों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाती हैं।

* गंभीर संक्रमण होने पर मुर्गीयों में मृत्यु दर बढ़ जाती है, जिससे भारी आर्थिक नुकसान होता है। यहाँ तक कि हल्के कृमि संक्रमण से भी विकास धीमा हो जाता है और दाने की लागत बढ़ जाती है, जिससे फार्म का लाभ कम हो सकता है।

**मुर्गियों में कृमि संक्रमण के लक्षण**

किसानों को इन चेतावनी संकेतों पर ध्यान देना चाहिए-

1.भूख न लगना और वजन कम होना। 2.पीली कलगी और गलफड़े, जो एनीमिया का संकेत हैं। 3.दस्त, जिसमें कभी-कभी कृमि दिखाई देते हैं। 4.पंख लटकना, पंख बिखरे हुए और सुस्ती। 5.सांस लेने में तकलीफ, हांफना या खांसी (गैपवर्म के मामलों में)। 6.अंडों के आकार, उत्पादन या छिलके की गुणवत्ता में गिरावट। चूंकि लक्षण अक्सर अन्य पोल्ट्री रोगों से मिलते-जुलते होते हैं, इसलिए उपचार शुरू करने से पहले परजीवी की पहचान करना महत्वपूर्ण है।

**मुर्गीयों में कृमिनाशक दवा देने का कार्यक्रम-** मुर्गियों को कृमिनाशक दवा कितनी बार दवा देनी चाहिए। यह इस बात पर निर्भर है कि मुर्गियाँ किस आवासीय पद्धति में पाली जा रही है। सघन बिछावन पद्धति (डीप लिटर सिस्टम) में पाली जा रही मुर्गियों में नियमित रूप से कृमिनाशक दवा देने से कृमि संक्रमण नियंत्रण में रहता है।

सामान्य रूप से निम्नानुसार कृमिनाशन करना चाहिए।

* चूजों में यदि जोखिम अधिक हो तो पहली बार 4-6 सप्ताह की उम्र में कृमिनाशक दवा देनी चाहिए।

* ब्रॉयलर मुर्गियों में पालन-पोषण की अवधि के आधार पर हर 30-45 दिन में एक बार कृमिनाशक दवा देनी चाहिए।

* अंडे देने वाली और प्रजनन करने वाली मुर्गियों में हर 2-3 महीने में एक बार कृमिनाशक दवा देनी चाहिए।

दवा देने की आवृत्ति मुर्गियों के दड़ने की स्थिति, उनके रहने की जगह और क्या मुर्गियों को बाहर जाने की सुविधा मिलती है, इस पर निर्भर करती है। दवा प्रतिरोध से बचने के लिए कृमिनाशक दवाओं को बदल-बदल कर देना उचित है। मुर्गी पालक किसानों को हमेशा उचित खुराक और अंतराल के लिए पशु चिकित्सक की सलाह अनुसार ही दवायें प्रयोग करनी चाहिए।

**कृमिनाशक विधियाँ और विकल्प**

**रासायनिक कृमिनाशक (एंथेलमिंटिक्स)**-ये सबसे आम और प्रभावी दवायें होती हैं। पिपराजीन, फेनबेंडाजोल, लेवामिसोल और एल्बेंडाजोल जैसी दवाएं व्यापक रूप से उपयोग की जाती हैं। ये जल्दी असर करती हैं और कुछ ही दिनों में संक्रमण को खत्म कर सकती हैं। हालांकि, किसानों को अंडे या मांस बेचने से पहले दवा के अवशेषों को खत्म करने के लिए कुछ समय तक दवा के असर को बनाए रखना चाहिए।

**प्राकृतिक और हर्बल कृमिनाशक**-जैविक या एंटीबायोटिक-मुक्त मुर्गी पालन प्रणालियों के लिए, हर्बल विकल्प लोकप्रिय हो रहे हैं। उदाहरण के लिए * लहसुन और नीम परजीवी-रोधी गुणों के लिए जाने जाते हैं। * पपीता और कद्दू के बीज इनमें ऐसे यौगिक होते हैं जो कृमियों को बाहर निकालते हैं। * हल्दी और एलोवेरा आंतों के स्वास्थ्य में सुधार करते हैं और सूजन को कम करते हैं। रासायनिक दवाओं की तरह तुरंत असरदार न होने के बावजूद, हर्बल उपचारों को नियमित रूप से निवारक उपायों के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

**सर्वोत्तम उपाय** * पानी या चारे में सही मात्रा में दवा मिलाकर दें। * पुनः संक्रमण से बचने के लिए हमेशा पूरे झुंड का एक साथ उपचार करें। * संतुलित नियंत्रण के लिए रासायनिक और हर्बल विधियों का बारी-बारी से प्रयोग करें।

**कृमि संक्रमण कम करने के लिए कृषि प्रबंधन पद्धतियाँ**

**अच्छे प्रबंधन से कृमि संक्रमण का खतरा कम होता है। किसानों को निम्नलिखि उपाय अपनाने चाहिए**

* बिछावन को सूखा रखें और उसे बार-बार बदलें। * दाना-पानी के बर्तन और आवास को नियमित रूप से साफ करें। मुर्गियों के बाडे में क्षमतानुसार मुर्गियों को रखें। क्षमता से अधिक मुर्गियों को न रखें और उचित वेंटिलेशन बनाए रखें। * यदि मुर्गियों को खुले में पाला जाता है, तो बारी-बारी से चराई करें। * नए पक्षियों को झुंड में शामिल करने से पहले उन्हें संगरोध में रखें।

# कृषि स्टार्टअप नवाचार से बदलती ग्रामीण अर्थव्यवस्था

डॉ. नवनीत मौर्य, आंचल बर्वे
अवधेश सिंह चौधरी सरदार पटेल विश्वविद्यालय बालाघाट, मध्य प्रदेश

## प्रस्तावना

भारत की पहचान गांव और उनकी कृषि से जुड़ी है। गांव में रहने वाले लोगों की आजीविका का एक बड़ा हिस्सा कृषि या उससे जुड़े कार्यों पर निर्भर करता है लेकिन समय के साथ ग्रामीण भारत भी तेजी से बदल रहा है आज खेती केवल परंपरा तक सीमित नहीं है, बल्की इसमें नई तकनीक, नए विचार या उद्यमशीलता शामिल हो रही है। इसी बदलाव से ग्रामीण स्टार्टअप या नवाचार महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। ये ना केवल खेती को आधुनिक बना रहा है। बल्की ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार या व्यवसाय के लिए नए रास्ते भी खोल रहे हैं।

## कृषि मे नए विचारों की शुरुआत

पहले किसान मुख्य रूप से अपने अनुभव के आधार पर पारंपरिक खेती करते थे। आज मोबाइल, इंटरनेट और मौसम की जानकारी जैसी सुविधाओं ने खेती को काफी काफ़ी हद तक बदल दिया है किसान अब ये सोच रहा है कि कम लागत बेहतर उत्पादन कैसे मिलेगा। इसी सोच से कृषि क्षेत्र में नए स्टार्टअप या इनोवेटिव विचारों को बढ़ावा मिल रहा है।

## ग्रामीण युवा बन रहे हैं उद्यमी

ग्रामीण युवाओं के लिए अब कृषि केवल नौकरी या पारंपरिक खेती का विकल्प नहीं रह गयी है। युवा कृषि के साथ जुडे अलग.अलग व्यवसाय की और बढ़ रहे हैं।

* कृषि मशीनरी किराए पर देकर * मशरूम उत्पादन * ड्रोन से कृषि सेवाएं देना * नर्सरी व्यवसाय * डेयरी और मधुमक्खी पालन * जैविक खेती * खाद्य प्रसंस्करण

इन व्यवसायों से युवा नौकरी लेने वाले से नौकरी देने वाले बनने की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं।

## टेक्नोलॉजी से साथ स्मार्ट खेती

टेक्नोलॉजी ने किसान और खेती के बीच एक नया जोड़ बनाया है। आज स्मार्टफोन के माध्यम से किसान मौसम मंडी भाव, फसल प्रबंधन या खेती से जुडी जानकारी प्राप्त कर सकता है। ड्रोन, सेंसर, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस या स्मार्ट इरीगेशन जैसी तकनीकी फसल की निगरानी या समाधान के बेहतर उपाय में मदद कर सकते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भी उद्यमशीलता को जोड़ने तथा स्टार्टअप और नवाचार को बढ़ावा देने की दिशा में कार्य किया जा रहा है।

## खेत से बाजार तक की नई सोच

ग्रामीण परिवेश में केवल उत्पादन बढ़ाना ही पर्याप्त नहीं है। किसान की आय बढ़ाने के लिए मूल्य संवर्धन या बेहतर मार्केटिंग भी जरूरी है। इस गांव में केवल

पैकेजिंग या मार्केटिंग से जुड़े छोटे व्यवसाय विकसित हो सकते हैं।

## ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी

ग्रामीण विकास में महिलाओ की भूमिका भी लगातार मजबूत हो रही है स्वयं सहायता समूह या छोटे उद्योग के माध्यम से महिला खाद्य प्रसंस्करणए डेयरी, हस्तशिल्प, नर्सरी या अन्य व्यवसाय से जुड़ रही है एक महिला का छोटा व्यवसाय उसकी आय बढ़ाने के साथ-साथ परिवार के आर्थिक स्तर को मजबूत कर सकता है और दूसरी महिलाओ के लिए भी प्रेरणा बन सकती है।

## नवाचार के साथ सतत विकास

ग्रामीण विकास का उद्देश्य केवल आर्थिक लाभ नहीं होना चाहिए। प्राकृतिक संसाधन का संरक्षण भी आवश्यक है, कम पानी में खेती, फसल अवशेष का उपयोगए कंपोस्टए सौर ऊर्जा जलवायु-अनुकूल खेती जैसे नवाचार खेती को अधिक टिकाऊ बनाने में मदद कर सकते हैं।

## चुनौतियाँ

ग्रामीण स्टार्टअप के सामने कई चुनौतियां हैं, इनमें पूंजी की कमी, तकनीकी ज्ञान का अभाव, बाजार तक पहुंच, इंटरनेट सुविधा या सही मार्गदर्शन की कमी प्रमुख है।

## निष्कर्ष

ग्रामीण स्टार्टअप या नवाचार केवल एक नया बिजनेस ट्रेंड नहीं है, बल्की ग्रामीण भारत के बदलते भविष्य की पहचान है एक छोटे विचार से शुरू हुआ व्यवसाय आगे चलकर रोजगार पैदा कर सकता है, गांव की अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर सकता है।

मनोज गुप्ता

जय पीताम्बरा बीज भण्डार
हमारे यहाँ समस्त कंपनियों के बीज उचित दाम पर मिलते हैं।
खाद एवं दवाईयां मिलने का प्रमुख स्थान
रेल स्प्रिंग कारखाने के सामने, डबरा रोड, सिथौली, ग्वालियर
मोबा.: 9301366887, फोन : 0751-2434056
01/2025-26

# बाढ़ के दौरान पशुधन की देखभाल एवं प्रबंध

डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा, डॉ. संदीप नानावटी,
डॉ. निर्मला जमरा, डॉ. नवल सिंह रावत
डॉ. जितेन्द्र कुमार यादव व डॉ. गौतम मेहता
पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय महू (म.प्र.)

भारत में पशुधन ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। देश के करोड़ों छोटे, सीमावर्ती और बिना जमीन वाले किसान अपना जीवन व्यापन व आर्थीक व्सवस्था के लिए पूरी तरह से गाय, भैंस, बकरी, भेड, सुअर और मुर्गी पर निर्भर हैं। दुनिया भर में बदलते मौसम की वजह से पिछले कुछ दशकों में तूफान, बाढ़, सूखा और ज्यादा गर्मी-सर्दी की घटनाएं बहुत बढ़ गई हैं। इन आपदाओं में न केवल इंसानों की जिंदगी पर असर पड़ता है, बल्कि बड़े पैमाने पर कीमती पशुधन को भी नुकसान होता है। आपदा के दौरान और उसके तुरंत बाद होने वाले जानवरों की मौत का मुख्य कारण सीधी चोट नहीं होती, बल्कि उसके बाद फैलने वाली बीमारियां, चारे की कमी और लंबे समय तक पानी में रहने से होने वाली परेशानियां होती साथ ही उनकी दूध उत्पादन व मांस की क्षमता पर बुरी तरह प्रभावित होता हैं। इसलिए पहले ही आपदा प्रबंधन के तरीकों को वैज्ञानिक आधार पर ज्ञानकर पशुओ को बचाया जा सकता है। प्राकृतिक आपदाऐ जैसे बाढ़, बादल फटना, चक्रवात, तूफान, सूखा, लू, ज्यादा सर्दी व भूकंप आदि पशुधन को नुकसान पहुँचाता है। भारत में मुख्यतः बाढ़ प्रभावित इलाके जैसे असम, बिहार, उत्तर प्रदेश और तटीय क्षेत्र है। यदि बाढ़ आती तब पशुओं पर बहुत बुरा असर पडता है। इसके मुख्य प्रभाव चारे की कमी, बिमारीयाँ फैलना, पशुओ को चोट लगना, पानी मे बहकर मौत हो सकती है।

**(क) आपदा से पहले की तैयारी-**किसी भी आपदा का असर 70% तक कम किया जा सकता है अगर जमीनी स्तर पर पहले से अच्छी तैयारी की जाए।

**1.सुरक्षित जगहों की पहचान:** ग्रामीण स्तर पर पहले से ही ऊंची और सुरक्षित जगहों को चिह्नित करना चाहिए जहां बाढ़ के समय जानवरों को ले जाया जा सके।

**2.प्रारंभिक चेतावनी:** पूर्व चेतावनी प्रणालियो (मौसम अलर्ट का मोबाईल मे ऐप, भविष्य की मौसम जानकारी टेलीविजन पर देखे) के माध्यम से जानकारी प्राप्त करते रहना चाहिए।

**3. पशु की पहचान:** सभी जानवरों के कान में ईयर टैग जरूर लगवाएं। आपदा के समय बिछड़े जानवरों की पहचान और मालिकाना हक साबित करने में यह बहुत मददगार होता है।

**4. सामुदायिक राशन और चारा इकट्ठा करना:** संभावित आपदा सीजन से पहले कम से कम 15 से 21 दिनों के लिए सूखा चारा (जैसे तूड़ी, कुट्टी, भूसा),यूरिया मोलासेस मिनरल व फीड ब्लॉक सुरक्षित जगहों पर रखकर तिरपाल से ढककर रखना चाहिए।

**5. आपातकालीन प्राथमिक पशु चिकित्सा किट:** हर जागरूक पशुपालक और पंचायत स्तर पर एक वाटरफ्रूफ बॉक्स में पोटेशियम परमैंगनेट (लाल दवा), टिंचर आयोडीन, बीटाडिन लिक्विड/ऑइंटमेंट, मक्खी-रोधी मलम, बुखार कम करने वाली दवा, दर्द निवारक और ओआरएस पैकेट आदि दवाईयाँ व जरूरत की सामग्री रुई, गॉज रोल, बांधने वाली पट्टियां, टार्च, मोबाईल में मौसम जानकारी ऐंप और कैंची। होनी चाहिए।

**6. टीकाकरण:** बाढ़ के बाद खतरनाक इलाकों में जीवाणु और विषाणु तेजी से फैलते हैं। खुरपका-मुंहपका, गलघोंटू लंगड़िया, बुखार, पेट के कीड़े: फ्लूक व टेपवर्म नाशक दवा पहले से ही नियमानुसार पशुओ को देना चाहिए।

**7. पशुओं का बीमा:** पशुपालकों को अपने सभी कीमती जानवरों का बीमा जरूर कराना चाहिए।

**(ख) आपदा के दौरान जानवरों की सुरक्षा-**आपदा के असली समय में जानवरों का व्यवहार बहुत डरा हुआ और आक्रामक हो सकता है। ऐसे समय में वैज्ञानिक प्रबंधन और धैर्य की जरूरत होती है।

**1.खूंटे से मुक्त करें:** अगर बाढ़ का पानी बढ़ रहा हो, तब जानवरों को कभी भी खूंटे या जंजीर से बांधकर न रखे, बंधा हुआ जानवर अपनी रक्षा करने में असमर्थ होकर तड़प-तड़प कर मर जाता है। खुला छोड़ दिए जाने पर जानवर अपनी प्राकृतिक तैरने की और खतरे को भांपने की क्षमता से ऊंचे और सुरक्षित स्थानों पर खुद पहुंच जाते हैं।

**2.सुरक्षित दिशा में हांकना:** डरे हुए जानवरों के ठीक सामने आकर रास्ता न रोकें। उनके फ्लाइट जोन का ध्यान रखते हुए उन्हें पीछे से शांत आवाज में हांकें। लाठी-डंडों का ज्यादा इस्तेमाल उन्हें और ज्यादा भ्रमित कर सकता हैं। पूर्वानुमान के आधार पर पशुओ को सुरक्षित स्थान पर ले जाना चाहिए।

**3.पशुओ का आश्रय:** बाढ़ प्रभावित क्षेत्र से दूर बनाया जाना चाहिएं।

**(ग) आपदा के बाद पशुओ की देखभाल**

**1. शुद्ध पानी:** पशुओ को शुद्ध पानी उपलब्ध का प्रबंध करना चाहिए।

**2.चारा और खुराक प्रबंधन:** आपातकाल में जब हरा चारा उपलब्ध न हो, तो कमी के समय का खाना (स्कारसिटी फोडर) का तरीका अपनाना चाहिए। फंगस (फफूंद) जनित जहर से बचाव बाढ़ के पानी में भीगा हुआ या आधा सड़ा हुआ चारा जानवरों को कभी न खिलाएं। गीले चारे में एस्परजिलस फ्लेवस नाम की फफूंद तेजी से पनपती है, जिससे एफ्लाटॉक्सिकोसिस नाम का भयंकर जहर पैदा होता है जो लीवर को पूरी तरह खराब कर देता है। गीले चारे को धूप मे सुकाकर ही उपयोग करे। भूसे का यूरिया उपचार कर सूखे के समय कम गुणवत्ता वाले सूखे चारे की पोषण क्षमता बढ़ाने के लिए उसे 4 प्रतिशत यूरिया के घोल से उपचारित करें। यह जानवरों में कच्चे प्रोटीन की जरूरत को पूरा करता है। पशुओं को पीने के पानी में गुड़ मिलाकर देना चाहिए, जिससे तनाव और कमजोर पशुओ के तेजी से ऊर्जा स्तर बना रहेगा। पशुओ को यूरिया मोलासेस मिनरल व फीड ब्लॉक खाने के लिए देना चाहिए।

**3. सुरक्षित आश्रय:** आवास, बाउंड्री की मरम्मत, अच्छी तरह से साफ व कीटाणुरहित करना चाहिए।

**4. उच्चे चारागाह:** दलदली या पानी में डूबे चरागाहों मे पशुओं को न चराना चाहिए व न जाने देवे जिससे पशुओं की खुर व बीमारियों से बचाया जा सके।

**5. स्वास्थ्य देखभाल:** बाढ़ के बाद संभावित बीमारियों से बचाने के लिए पशुचिकित्सक की सलाह लेना चाहिए।

**6. मरे हुए जानवरों को दफनाने का वैज्ञानिक तरीका**

आपदा में मृत्य पशु का शवों को खुली जगहों, सड़कों के किनारे या पानी के स्रोतों में बहाना नही है। इससे जानलेवा बीमारियां जो जानवरों से इंसानों में फैल सकती हैं। शवों को आबादी क्षेत्र से दूर, कम से कम 05 से 07 फीट गहरे गड्ढे में नीचे और ऊपर चूना और नमक की मोटी परत बिछाकर वैज्ञानिक तरीके से दफनाना चाहिए।

**(घ) सरकारी सहायता :** आपदा के समय अकेले प्रयास काफी नही होता है इसके लिए सरकारी तंत्र का सक्रिय होना जरूरी है। पशु चिकित्सा टीमों की तैनाती (वेटरनरी रैपिड रिस्पांस टीम) जिला स्तर पर मोबाइल पशु चिकित्सा वाहनों और सर्जनों की टीमें बनाई जाती हैं जो सीधे प्रभावित इलाकों में जाकर आपातकालीन ईलाज और देखभाल करती हैं, जिसके लिए आपातकालीन नंबर 1962 उपलब्ध है। बचाव दल एनडीआरफ और स्थानीय प्रशासन की टीमें लोगो के साथ साथ पशुओं को भी सुरक्षित जगह पर पहुंचाती है। राहत शिविरों का संचालन जिला प्रशासन के सहयोग से सुरक्षित जगहों पर बड़े पशु कैंप स्थापित किए जाते हैं, जहां सरकार द्वारा जानवरों के लिए मुफ्त सूखा व हरा चारा, साफ पानी और दवाएं उपलब्ध कराई जाती हैं। पशुधन बीमार राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष के तहत आपदा में मरे जानवरों के लिए किसानों को सीधे आर्थिक सहायता और मुआवजा दिया जाता है। पशुपालकों को अपने सभी कीमती जानवरों का बीमा जरूर कराना चाहिए।पशुधन केवल एक आर्थिक संपत्ति नहीं है, बल्कि वे हमारे ग्रामीण समाज के मूक और संवेदनशील सदस्य हैं। प्राकृतिक आपदाओं की भयावहता को पूरी तरह खत्म नहीं किया जा सकता, परंतु सही समय पर की गई वैज्ञानिक तैयारियों, समय पर प्राथमिक ईलाज, रोग नियंत्रण और सही खुराक प्रबंधन के जरिए मूक पशुओ के जीवन की रक्षा सत प्रतिशत सुनिश्चित की जा सकती है।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका



# अंडे देने वाली मुर्गी का प्रबंधन

**डॉ. अनिल कुमार गिरि** सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

**डॉ. अखिलेश कुमार** वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केंद्र रीवा (म.प्र.)

**डॉ. प्रमोद शर्मा** सहायक प्राध्यापक, नानाजी देशमुख पशु चिकित्सा महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

**प्रस्तावना:** भारत में पोल्ट्री फार्मिंग एक बहुत ही लाभदायक व्यवसाय है। विश्व स्तर पर, भारत अंडा उत्पादन में दुनिया में दूसरे और चिकन मांस उत्पादन में दुनिया में पांचवें स्थान पर है। एग लेयर फ़ार्मिंग इसके कम उत्पादन खर्च और अंडों की अधिक मांग के कारण भारत में बहुत लोकप्रिय हो रहा है। आज के दौर में अंडे की डिमांड इतनी बढ़ गई है की अंडे की पूर्ति कर पाना मुश्किल भी हो गया है क्योंकि अंडे में हमें भरपूर प्रोटीन कैल्शियम और omega-3 मिल जाता है। अंडा उत्पादन की सफलता केवल अच्छी नस्ल की मुर्गियां खरीदने पर निर्भर नहीं करती, बल्कि उनके आवास, पोषण, स्वच्छ पानी, प्रकाश व्यवस्था, स्वास्थ्य सुरक्षा, तापमान नियंत्रण और दैनिक प्रबंधन पर भी निर्भर करती है।

अंडे देने वाली मुर्गी को अंग्रेजी में Layer कहा जाता है। सामान्यतः लेयर मुर्गियां लगभग 18-20 सप्ताह की आयु के बाद अंडा उत्पादन शुरू करती हैं और उचित प्रबंधन के अंतर्गत कई महीनों तक अच्छी उत्पादन क्षमता बनाए रख सकती हैं। यदि मुर्गियों को संतुलित आहार, पर्याप्त पानी, उचित प्रकाश, स्वच्छ एवं हवादार आवास तथा समय पर टीकाकरण मिलता है, तो उनकी उत्पादन क्षमता और अंडे की गुणवत्ता दोनों बेहतर होती हैं।

1. **अच्छी नस्ल एवं स्वस्थ चूजों का चयन**-अंडा उत्पादन में सबसे पहला कदम अच्छी आनुवंशिक क्षमता वाली मुर्गियों का चयन है। व्यावसायिक लेयर फार्म के लिए ऐसी नस्ल या व्यावसायिक स्ट्रेन का चयन करना चाहिए जिसकी अंडा उत्पादन क्षमता अच्छी हो, शरीर स्वस्थ हो और स्थानीय जलवायु में अनुकूलन की क्षमता हो। **मुर्गी खरीदते समय निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए-** * चूजे या पुललेट स्वस्थ एवं सक्रिय हों। * आंखें चमकीली और साफ हों। * पैर मजबूत एवं सामान्य हों। * शरीर पर पंख समान रूप से विकसित हों। * मुर्गियों में अत्यधिक कमजोरी या बीमारी के लक्षण न हों। * विश्वसनीय हैचरी या प्रमाणित स्रोत से चूजे खरीदने चाहिए। * फार्म में अलग-अलग आयु वर्ग की मुर्गियों को अनावश्यक रूप से मिलाने से बचना चाहिए। अच्छे आनुवंशिक गुण वाली मुर्गी तभी अपनी पूरी उत्पादन क्षमता दिखा सकती है जब उसे उचित पोषण और अच्छा प्रबंधन मिले।

2. **आवास एवं शेड का उचित प्रबंधन**-लेयर मुर्गियों के लिए शेड ऐसा होना चाहिए जिसमें पर्याप्त हवा, प्रकाश और स्वच्छता बनी रहे। शेड का निर्माण ऐसी जगह करना चाहिए जहां जलभराव न हो और वर्षा का पानी आसानी से निकल सके। काम जगह मे अधिक मुर्गी पालने के लिए सामान्यतः बड़े फार्म पर लेयर मुर्गी को पिंजड़ा प्रणाली मे पलटे हैं। शेड में निम्न सुविधाएं आवश्यक हैं–

**पर्याप्त वेंटिलेशन :** मुर्गियों को ताजी हवा मिलना अत्यंत आवश्यक है। खराब वेंटिलेशन से शेड में अमोनिया, नमी और धूल बढ़ सकती है, जिससे मुर्गियों के स्वास्थ्य एवं अंडा उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

**तापमान नियंत्रण-** अत्यधिक गर्मी में मुर्गियां अधिक पानी पीती हैं और कम दाना खाती हैं। परिणामस्वरूप अंडा उत्पादन तथा अंडे के वजन में कमी हो सकती है। गर्मियों में शेड को ठंडा रखने के लिए पर्याप्त वेंटिलेशन, पंखे, शेड की छत का उचित इन्सुलेशन तथा स्वच्छ ठंडा पानी उपलब्ध कराना उपयोगी है। सर्दियों में ठंडी हवा के सीधे झोंकों से मुर्गियों को बचाना चाहिए, लेकिन शेड को पूरी तरह बंद नहीं करना चाहिए क्योंकि वेंटिलेशन हमेशा आवश्यक रहता है।

**फर्श एवं बिछावन-** डीप-लिटर प्रणाली में फर्श पर सूखी और साफ बिछावन सामग्री जैसे लकड़ी की बुरादे, धन का छिलका, भूसा या अन्य उपयुक्त सामग्री का प्रयोग किया जा सकता है। बिछावन गीला होने पर उसे तुरंत बदलना या सुखाना चाहिए। गीली बिछावन से रोगजनक सूक्ष्मजीवों की वृद्धि, दुर्गंध और अमोनिया की समस्या बढ़ सकती है।

3. **प्रति मुर्गी पर्याप्त स्थान-** मुर्गियों को आवश्यकता से अधिक संख्या में एक ही स्थान पर रखने से तनाव, बीमारी और उत्पादन में कमी की संभावना बढ़ती है। इसलिए फार्म की प्रणाली के अनुसार पर्याप्त स्थान उपलब्ध कराना चाहिए।

**फार्म में भीड़भाड़ होने पर-** * मुर्गियों में तनाव बढ़ता है। * दाना और पानी के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ती है। * रोग तेजी से फैल सकते हैं। * पंख नोचने जैसी समस्याएं बढ़ सकती हैं। * अंडा उत्पादन प्रभावित हो सकता है। इसलिए शेड की क्षमता के अनुसार ही मुर्गियों की संख्या रखनी चाहिए।

4. **संतुलित आहार—अंडा उत्पादन की कुंजी**

लेयर मुर्गियों के लिए संतुलित आहार सबसे महत्वपूर्ण प्रबंधन घटकों में से एक है। अंडे के निर्माण में प्रोटीन, ऊर्जा, कैल्शियम, फॉस्फोरस, अमीनो अम्ल, विटामिन और सूक्ष्म खनिजों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

**लेयर आहार में सामान्यतः निम्न पोषक तत्वों का संतुलन आवश्यक होता है—**

* ऊर्जा * प्रोटीन * आवश्यक अमीनो अम्ल * कैल्शियम * उपलब्ध फॉस्फोरस * नमक * विटामिन * सूक्ष्म खनिज

विशेष रूप से कैल्शियम अंडे के मजबूत खोल के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। कैल्शियम की कमी होने पर अंडे का खोल पतला या कमजोर हो सकता है। आहार में मक्का, गेहूं, ज्वार आदि ऊर्जा स्रोतों के साथ सोयाबीन मील जैसे प्रोटीन स्रोत, खनिज मिश्रण और विटामिन-खनिज प्रीमिक्स का संतुलित उपयोग किया जा सकता है। व्यावसायिक लेयर फार्म में तैयार संतुलित लेयर फीड का उपयोग अधिक सुविधाजनक होता है।

**आहार देने के महत्वपूर्ण नियम**-1.प्रतिदिन निर्धारित मात्रा में दाना दें। 2.दाना ताजा और फफूंद रहित होना चाहिए। 3.दाने को नमी और चूहों से सुरक्षित रखें। 4.अचानक आहार परिवर्तन से बचें। 5.मुर्गियों की उम्र और उत्पादन अवस्था के अनुसार आहार में परिवर्तन करें। 6.फीडर पर्याप्त संख्या में रखें ताकि सभी मुर्गियों को दाना मिल सके।

5. **स्वच्छ पानी की व्यवस्था**-मुर्गियों के लिए पानी किसी भी अन्य पोषक तत्व जितना ही महत्वपूर्ण है। पानी की कमी होने पर दाना सेवन, शरीर का तापमान नियंत्रण और अंडा उत्पादन प्रभावित हो सकता है।

मुर्गियों को पूरे दिन स्वच्छ एवं सुरक्षित पानी उपलब्ध होना चाहिए। गर्मियों में पानी की आवश्यकता और बढ़ जाती है।

**पानी प्रबंधन के लिए** * पानी के बर्तन या ड्रिंकर प्रतिदिन साफ करें। * पानी में गंदगी और मल-मूत्र नहीं जाने दें। * पानी की पाइपलाइन एवं निप्पल ड्रिंकर की नियमित जांच करें। * गर्म मौसम में पर्याप्त संख्या में ड्रिंकर रखें। * लंबे समय तक रुका हुआ या दूषित पानी न दें।

6. **प्रकाश प्रबंधन**-लेयर मुर्गियों में अंडा उत्पादन को बनाए रखने में प्रकाश की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रकाश की अवधि और उसमें होने वाले परिवर्तन मुर्गियों की यौन परिपक्वता तथा अंडा उत्पादन को प्रभावित कर सकते हैं। लेयर फार्म में प्रकाश कार्यक्रम को उम्र और उत्पादन अवस्था के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है। अंडा उत्पादन शुरू होने के बाद सामान्यतः कुल दैनिक प्रकाश अवधि को लगभग 16 घंटे के आसपास बनाए रखना उपयोगी माना जाता है, हालांकि वास्तविक कार्यक्रम नस्ल, आयु, फार्म प्रणाली और प्रबंधन पद्धति के अनुसार निर्धारित किया जाना चाहिए। प्रकाश की तीव्रता भी उचित होनी चाहिए। बहुत अधिक तेज प्रकाश से मुर्गियों में तनाव और पंख नोचने की समस्या बढ़ सकती है, जबकि बहुत कम प्रकाश से फीड एवं पानी सेवन तथा गतिविधि प्रभावित हो सकती है।

7. **टीकाकरण एवं रोग नियंत्रण-** मुर्गीपालन में बीमारी का प्रकोप होने पर उत्पादन और आर्थिक लाभ दोनों पर गंभीर प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए बीमारी का इलाज करने से अधिक महत्वपूर्ण है–बीमारी की रोकथाम। लेयर फार्म में स्थानीय पशु चिकित्सा विशेषज्ञ की सलाह के अनुसार टीकाकरण कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए। सामान्यतः पोल्ट्री में न्यूकैसल डिजीज (रानीखेत), संक्रामक ब्रोंकाइटिस, गम्बोरो तथा अन्य महत्वपूर्ण रोगों के विरुद्ध टीकाकरण कार्यक्रम अपनाया जाता है।

**जैव-सुरक्षा का महत्व**-जैव-सुरक्षा (Biosecurity) फार्म में रोगों के प्रवेश और प्रसार को रोकने की व्यवस्था है।

**इसके लिए—** * बाहरी व्यक्तियों का अनावश्यक प्रवेश रोकें। * फार्म में आने वाले लोगों के लिए फुटबाथ की व्यवस्था करें। * नए पक्षियों को सीधे पुराने झुंड में न मिलाएं। * मृत पक्षियों का सुरक्षित निपटान करें। * चूहे, मक्खी और अन्य कीटों का नियंत्रण करें।* फार्म के उपकरणों की नियमित सफाई और कीटाणुशोधन करें।

8. **अंडा देने वाले घोंसलों का प्रबंधन**-यदि मुर्गियों को खुले या डीप-लिटर सिस्टम में रखा जाता है तो पर्याप्त संख्या में साफ और सुरक्षित घोंसले उपलब्ध कराने चाहिए। घोंसले शांत और अपेक्षाकृत अंधेरे स्थान पर होने चाहिए। घोंसलों में साफ एवं सूखी बिछावन सामग्री रखें। टूटे या गंदे अंडों की संख्या कम करने के लिए अंडे नियमित रूप से एकत्रित किए जाने चाहिए। अंडों को दिन में कई बार एकत्र करना उपयोगी हो सकता है, विशेष रूप से गर्म मौसम में।

9. **अंडे की गुणवत्ता बनाए रखना**-अच्छी गुणवत्ता वाला अंडा उपभोक्ता और बाजार दोनों के लिए महत्वपूर्ण है। अंडे का आकार, खोल की मजबूती, सफाई और आंतरिक गुणवत्ता उसके बाजार मूल्य को प्रभावित करते हैं।

**अंडे की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए—** * संतुलित आहार दें। * पर्याप्त कैल्शियम उपलब्ध कराएं। स्वच्छ पानी दें। * अंडे नियमित रूप से एकत्र करें। * टूटे और गंदे अंडों को अलग करें। * अंडों को अत्यधिक गर्मी से बचाएं। * अंडों की हैंडलिंग सावधानीपूर्वक करें।

10. **गर्मी के मौसम में विशेष प्रबंधन**-भारत के अधिकांश भागों में गर्मी का मौसम लेयर फार्म के लिए चुनौतीपूर्ण होता है। अधिक तापमान में मुर्गियां अपने शरीर का तापमान नियंत्रित करने के लिए अधिक पानी पीती हैं और कम दाना खाती हैं। इससे अंडा उत्पादन और अंडे के खोल की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है।

**गर्मी में निम्न उपाय उपयोगी हैं—** * शेड में पर्याप्त वेंटिलेशन रखें। * पंखों की व्यवस्था करें। * स्वच्छ पानी लगातार उपलब्ध रखें। * शेड की छत को अत्यधिक गर्म होने से बचाएं। * दिन के सबसे गर्म समय में अनावश्यक गतिविधि कम करें। * फीडिंग का समय मौसम के अनुसार व्यवस्थित करें। * भीड़भाड़ से बचें। गर्मी के तनाव की स्थिति में इलेक्ट्रोलाइट या अन्य सप्लीमेंट का उपयोग पशु चिकित्सक या पोल्ट्री पोषण विशेषज्ञ की सलाह से किया जा सकता है।

11. **सर्दी के मौसम में प्रबंधन**-सर्दियों में छोटे चूजों की तुलना में वयस्क लेयर मुर्गियां कम संवेदनशील होती हैं, फिर भी ठंडी हवा और अत्यधिक नमी से बचाव आवश्यक है। शेड में–

* सीधे ठंडी हवा के झोंकों को रोकें। * बिछावन को सूखा रखें।

* पर्याप्त वेंटिलेशन बनाए रखें। * पानी जमने या अत्यधिक ठंडा होने से बचाएं। * मुर्गियों की गतिविधि और दाना सेवन पर नजर रखें।

# स्मार्ट बागवानी: आधुनिक तकनीक से फल उत्पादन की नई क्रांति

सुनित भदरगे पिएच.डी. शोध छात्र, (फल विज्ञान) बागवानी विभाग, स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर, आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर-475001 (म.प्र.)

**भूमिका:** भारत कृषि प्रधान देश है और उद्यानिकी क्षेत्र कृषि अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण आधार है। फल उत्पादन न केवल किसानों की आय बढ़ाता है, बल्कि पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन और निर्यात को भी बढ़ावा देता है। बढ़ती जनसंख्या, घटते कृषि संसाधन, जलवायु परिवर्तन, श्रमिकों की कमी तथा उत्पादन लागत में वृद्धि जैसी चुनौतियों ने पारंपरिक खेती के साथ-साथ आधुनिक तकनीकों को अपनाने की आवश्यकता को और अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। इसी आवश्यकता से स्मार्ट बागवानी (Smart Horticulture) की अवधारणा विकसित हुई है।

स्मार्ट बागवानी आधुनिक सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT), कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), ड्रोन, सेंसर, सटीक कृषि (Precision Agriculture), रिमोट सेंसिंग और डेटा विश्लेषण जैसी तकनीकों का उपयोग करके फल उत्पादन को अधिक लाभदायक, टिकाऊ और वैज्ञानिक बनाती है। इसका उद्देश्य कम संसाधनों का उपयोग करते हुए अधिक उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण तथा किसानों की आय में वृद्धि करना है।

**स्मार्ट बागवानी क्या है?**-स्मार्ट बागवानी वह प्रणाली है जिसमें आधुनिक डिजिटल तकनीकों की सहायता से बाग की प्रत्येक गतिविधि–जैसे सिंचाई, पोषण प्रबंधन, कीट एवं रोग नियंत्रण, मौसम का पूर्वानुमान, उत्पादन का आकलन और विपणन–वैज्ञानिक एवं सटीक तरीके से की जाती है। इस प्रणाली में निर्णय अनुमान के बजाय वास्तविक आँकड़ों (Real-time Data) के आधार पर लिए जाते हैं। इससे उत्पादन लागत कम होती है, संसाधनों का बेहतर उपयोग होता है और फलों की गुणवत्ता में सुधार आता है।

**स्मार्ट बागवानी की आवश्यकता**

**आज फल उत्पादकों के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं—** जलवायु परिवर्तन के कारण अनियमित वर्षा और तापमान में वृद्धि। सिंचाई के लिए जल की कमी। उर्वरकों और कीटनाशकों की बढ़ती लागत। खेतों में श्रमिकों की कमी। कीट एवं रोगों का बढ़ता प्रकोप। उत्पादन लागत में वृद्धि और लाभ में कमी। उच्च गुणवत्ता वाले फलों की बढ़ती बाजार माँग। इन चुनौतियों से निपटने के लिए ऐसी तकनीकों की आवश्यकता है जो कम लागत में अधिक उत्पादन और बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित कर सकें। स्मार्ट बागवानी इसी दिशा में एक प्रभावी समाधान है।

**स्मार्ट बागवानी की प्रमुख तकनीकें**

**1. इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT)-** IoT आधारित उपकरण बाग में लगे सेंसरों से मिट्टी की नमी, तापमान, आर्द्रता, प्रकाश और पौधों की स्थिति का निरंतर डेटा एकत्र करते हैं। यह जानकारी मोबाइल या कंप्यूटर पर उपलब्ध होती है, जिससे किसान समय पर निर्णय ले सकते हैं।

**लाभ** * आवश्यकता अनुसार सिंचाई * जल की बचत * पौधों की बेहतर वृद्धि * उत्पादन में वृद्धि

**2. सेंसर आधारित सिंचाई**-मिट्टी में लगाए गए नमी सेंसर यह बताते हैं कि सिंचाई कब करनी है। इससे आवश्यकता से अधिक पानी देने से बचा जा सकता है।

**लाभ-*** 30-50% तक जल की बचत * बिजली की बचत * पौधों की जड़ों का बेहतर विकास * उत्पादन की गुणवत्ता में सुधार

**3. ड्रिप सिंचाई और फर्टिगेशन**-ड्रिप सिंचाई में पानी सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँचाया जाता है। यदि उर्वरकों को सिंचाई के पानी के साथ दिया जाए तो इसे फर्टिगेशन कहते हैं।

**मुख्य लाभ** * जल उपयोग दक्षता में वृद्धि * उर्वरकों की बचत * खरपतवार कम उगते हैं * फल का आकार और गुणवत्ता बेहतर होती है

**4. ड्रोन तकनीक**-ड्रोन की सहायता से पूरे बाग का निरीक्षण कुछ ही मिनटों में किया जा सकता है।

**ड्रोन का उपयोग**-पौधों के स्वास्थ्य की निगरानी * कीट एवं रोग की प्रारंभिक पहचान * पोषक तत्वों की कमी का आकलन * उर्वरकों एवं जैविक घोलों का छिड़काव * बाग का डिजिटल मानचित्र तैयार करना

**5. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence)**-AI आधारित मोबाइल ऐप और सॉफ्टवेयर पौधों की तस्वीर देखकर रोग और कीट की पहचान कर सकते हैं। यह किसानों को उचित प्रबंधन उपाय भी सुझाते हैं।

**AI का उपयोग** * रोग पहचान * उत्पादन अनुमान * मौसम आधारित सलाह * फसल प्रबंधन

**6. रिमोट सेंसिंग और उपग्रह तकनीक-** उपग्रह चित्रों और हवाई सर्वेक्षण से बाग की वृद्धि, जल तनाव, पौधों के स्वास्थ्य और उत्पादन क्षमता का आकलन किया जाता है।

**7. मोबाइल एप्लिकेशन-** आज अनेक मोबाइल ऐप किसानों को मौसम की जानकारी, बाजार भाव, उन्नत तकनीक, रोग नियंत्रण और विशेषज्ञ सलाह उपलब्ध कराते हैं। इससे निर्णय लेना आसान होता है।

**स्मार्ट पोषण प्रबंधन-** उचित मात्रा में पोषक तत्व देना उत्पादन और गुणवत्ता के लिए आवश्यक है।

**स्मार्ट पोषण प्रबंधन में शामिल हैं—**

* मृदा परीक्षण * पत्ती विश्लेषण * संतुलित उर्वरक प्रबंधन * जैव उर्वरकों का उपयोग * फर्टिगेशन * सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव। इससे लागत घटती है और पोषक तत्वों का बेहतर उपयोग होता है।

**स्मार्ट कीट एवं रोग प्रबंधन-** कीट और रोगों की समय पर पहचान से नुकसान कम किया जा सकता है।

**स्मार्ट तकनीकों में शामिल हैं—** * डिजिटल निगरानी* फेरोमोन ट्रैप * पीले एवं नीले चिपचिपे ट्रैप * जैविक नियंत्रण * AI आधारित रोग पहचान

**समेकित कीट प्रबंधन (IPM)**-इससे रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग कम होता है और पर्यावरण सुरक्षित रहता है।

**जलवायु-स्मार्ट बागवानी**-बदलते मौसम के कारण फल उत्पादन प्रभावित हो रहा है। जलवायु-स्मार्ट बागवानी के अंतर्गत– * वर्षा जल संचयन * मल्चिंग * सूखा-सहनशील किस्में * पाला एवं लू से संरक्षण * माइक्रो सिंचाई

**मौसम आधारित सलाह-** अपनाई जाती हैं, जिससे जोखिम कम होता है।

**स्मार्ट बागवानी के लाभ**-कम लागत में अधिक उत्पादन। जल और उर्वरकों की बचत। उच्च गुणवत्ता वाले फल। समय पर कीट एवं रोग नियंत्रण। श्रम की आवश्यकता में कमी। पर्यावरण संरक्षण। किसानों की आय में वृद्धि। बाजार की माँग के अनुसार उत्पादन।

**भारत में स्मार्ट बागवानी की संभावनाएँ-** भारत में डिजिटल कृषि, स्टार्टअप, कृषि विश्वविद्यालयों और सरकारी योजनाओं के सहयोग से स्मार्ट बागवानी तेजी से विकसित हो रही है। उच्च घनत्व बागवानी, ड्रिप सिंचाई, संरक्षित खेती और डिजिटल सलाह सेवाओं का विस्तार किसानों को आधुनिक तकनीकों से जोड़ रहा है।

**चुनौतियाँ-** स्मार्ट बागवानी अपनाने में कुछ बाधाएँ भी हैं– प्रारंभिक निवेश अधिक होना। छोटे किसानों की सीमित आर्थिक क्षमता। तकनीकी जानकारी का अभाव। इंटरनेट और बिजली की उपलब्धता। उपकरणों का रखरखाव।इन चुनौतियों को प्रशिक्षण, किसान उत्पादक संगठनों (FPOs), सरकारी सहायता और सरल तकनीकों के माध्यम से काफी हद तक दूर किया जा सकता है।

**भविष्य की दिशा-** आने वाले वर्षों में स्मार्ट बागवानी में रोबोट, स्वचालित सिंचाई, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन लर्निंग, ड्रोन, डिजिटल मौसम पूर्वानुमान और डेटा-आधारित निर्णय प्रणाली का उपयोग और बढ़ेगा। इससे फल उत्पादन अधिक लाभकारी, टिकाऊ और जलवायु-अनुकूल बनेगा।

**निष्कर्ष**-स्मार्ट बागवानी आधुनिक विज्ञान और डिजिटल तकनीक का ऐसा समन्वय है जो फल उत्पादन को नई दिशा दे रहा है। यह किसानों को कम संसाधनों में अधिक उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता और अधिक लाभ प्राप्त करने में सहायता करती है। साथ ही यह जल, मिट्टी और पर्यावरण के संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यदि भारत को पोषण सुरक्षा, किसानों की आय में वृद्धि और टिकाऊ कृषि के लक्ष्य प्राप्त करने हैं, तो स्मार्ट बागवानी को व्यापक स्तर पर अपनाना आवश्यक है। वैज्ञानिक संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों, प्रसार तंत्र और किसानों के संयुक्त प्रयासों से स्मार्ट बागवानी भविष्य की फल उत्पादन प्रणाली का मजबूत आधार बन सकती है।

# मानसून में पशुपालन, चुनौतियाँ और समाधान

रवि सिकरोडिया, जोयसी जोगी
दलजीत छाबड़ा, राखी गांगिल
राकेश शारदा पशुचिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार है। दूध, मांस, अंडे, ऊन तथा कृषि कार्यों के लिए पशुधन का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्षा ऋतु या मानसून किसानों और पशुपालकों के लिए कई अवसर लेकर आती है। इस मौसम में हरे चारे की उपलब्धता बढ़ जाती है, जल स्रोत भर जाते हैं तथा पशुओं को पोषणयुक्त आहार प्राप्त होता है। दूसरी ओर, अधिक नमी, जलभराव, कीट-पतंगों की वृद्धि तथा संक्रामक रोगों के फैलाव के कारण यह मौसम पशुपालकों के लिए अनेक चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करता है। यदि मानसून के दौरान पशुओं की उचित देखभाल, आवास प्रबंधन, पोषण तथा रोग नियंत्रण पर ध्यान दिया जाए, तो पशुओं की उत्पादकता बनाए रखने के साथ-साथ आर्थिक हानि से भी बचा जा सकता है। अतः मानसून में पशुपालन की चुनौतियों और उनके समाधानों को समझना अत्यंत आवश्यक है।

**मानसून में प्रमुख रोग**-मानसून के दौरान वातावरण में नमी और आर्द्रता का स्तर काफी बढ़ जाता है, जिससे विभिन्न प्रकार के जीवाणु, विषाणु तथा परजीवी तेजी से पनपने लगते हैं। ऐसी परिस्थितियाँ पशुओं में संक्रामक रोगों के प्रसार के लिए अत्यंत अनुकूल होती हैं। वर्षा ऋतु में खुरपका-मुंहपका, गलघोंटू, लंगड़ा बुखार, ब्रूसेलोसिस, मास्टाइटिस, दस्त तथा आंत्र संक्रमण, त्वचा रोग एवं फंगल संक्रमण जैसी बीमारियों का प्रकोप सामान्यतः अधिक देखने को मिलता है। इन रोगों के कारण पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर पड़ जाती है, दुग्ध उत्पादन में कमी आती है, वृद्धि दर प्रभावित होती है तथा कई मामलों में पशुओं की मृत्यु तक हो सकती है। परिणामस्वरूप पशुपालकों को गंभीर आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है। अतः मानसून से पहले समस्त आवश्यक टीके पशुओं को लगवाना चाहिए

**परजीवी नियंत्रण**-मानसून में पशुओं में आंतरिक तथा बाह्य दोनों प्रकार के परजीवी संक्रमणों की समस्या अधिक देखने को मिलती है। आंतरिक परजीवियों में मुख्य रूप से गोल कृमि, फीता कृमि तथा लिवर फ्लूक शामिल हैं, जो पशुओं के पाचन तंत्र एवं अन्य आंतरिक अंगों को प्रभावित करते हैं। वहीं बाह्य परजीवियों में जूँ, किलनी (टिक्स), मक्खियाँ और मच्छर प्रमुख हैं, जो पशुओं का रक्त चूसने के साथ-साथ कई संक्रामक रोगों के वाहक के रूप में भी कार्य करते हैं। इन परजीवियों के संक्रमण से पशुओं में कमजोरी, रक्ताल्पता (एनीमिया), शरीर के वजन में कमी, भूख न लगना तथा दुग्ध उत्पादन में गिरावट जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। गंभीर संक्रमण की स्थिति में पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता भी प्रभावित होती है, जिससे वे अन्य रोगों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। पशुओं में नियमित कृमिनाशन करवाना चाहिए। गोबर एवं कचरे का उचित निस्तारण करें तथा किलनी, जूँ और मक्खियों के नियंत्रण के लिए अनुशंसित उपाय अपनाएं। पशुशाला के आसपास पानी जमा न होने दें, क्योंकि स्थिर पानी मच्छरों के प्रजनन का प्रमुख स्रोत है।

**पशुशाला प्रबंधन**-मानसून के दौरान पशुशाला में अत्यधिक नमी और जलभराव की समस्या सामान्य रूप से देखने को मिलती है। लगातार वर्षा होने के कारण यदि पशुशाला में पानी जमा हो जाए या फर्श लंबे समय तक गीला रहे, तो इसका प्रतिकूल प्रभाव पशुओं के स्वास्थ्य पर पड़ता है। गीले और अस्वच्छ वातावरण में रहने से पशुओं में खुर संबंधी रोग, त्वचा संक्रमण, फंगल संक्रमण तथा जोड़ों की समस्याएँ विकसित हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त, अत्यधिक नमी के कारण रोगजनक सूक्ष्मजीवों तथा परजीवियों की वृद्धि भी तेज हो जाती है, जिससे विभिन्न संक्रामक रोगों का खतरा बढ़ जाता है। ऐसी परिस्थितियों में पशु तनावग्रस्त हो सकते हैं, उनकी उत्पादकता प्रभावित हो सकती है तथा दुग्ध उत्पादन में भी कमी आ सकती है। मानसून शुरू होने से पहले छत, दीवार और नालियों की मरम्मत कर लें। पशुशाला में पर्याप्त वेंटिलेशन होना चाहिए ताकि नमी कम रहे और ताजी हवा का आवागमन बना रहे।

**चारा एवं पोषण प्रबंधन**-मानसून के दौरान पशुओं के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बनाए रखने में संतुलित आहार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उचित पोषण पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत बनाने में सहायता करता है। संतुलित आहार में हरा चारा, सूखा चारा, दाना मिश्रण, खनिज मिश्रण तथा नमक का समुचित समावेश होना चाहिए। हरा चारा विटामिन एवं खनिजों का अच्छा स्रोत होता है, जबकि सूखा चारा पाचन क्रिया को संतुलित बनाए रखने में सहायक होता है। दाना मिश्रण पशुओं को आवश्यक ऊर्जा एवं प्रोटीन प्रदान करता है तथा खनिज मिश्रण और नमक शरीर की विभिन्न जैविक क्रियाओं के सुचारु संचालन के लिए आवश्यक होते हैं। प्रजनन क्षमता में सुधार आता है तथा उनके शारीरिक विकास और कार्यक्षमता को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार उचित पोषण प्रबंधन मानसून के दौरान पशुधन को स्वस्थ एवं उत्पादक बनाए रखने का आधार है। अतिरिक्त हरे चारे को वैज्ञानिक तरीके से साइलेज बनाकर सुरक्षित किया जा सकता है। पशुओं के आहार में हरे चारे के साथ सूखा चारा, दाना मिश्रण, खनिज मिश्रण और नमक उचित मात्रा में शामिल करें।

**मानसून में प्रजनन प्रबंधन**-वर्षा ऋतु पशुओं के प्रजनन के लिए अपेक्षाकृत अनुकूल मानी जाती है, क्योंकि इस मौसम में तापमान सामान्य रहता है तथा हरे चारे की पर्याप्त उपलब्धता के कारण पशुओं की शारीरिक स्थिति में सुधार होता है। परिणामस्वरूप कई पशुओं में प्रजनन गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं और वे अधिक स्पष्ट रूप से उष्णावस्था (हीट) के लक्षण प्रदर्शित करते हैं। हालांकि, यदि इस अवधि में पशुओं को संतुलित पोषण न मिले या वे किसी संक्रामक अथवा परजीवी रोग से प्रभावित हो जाएँ, तो उनकी प्रजनन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। खराब पोषण के कारण गर्भधारण की संभावना कम हो सकती है, जबकि संक्रमण की स्थिति में गर्भपात, बांझपन तथा अन्य प्रजनन संबंधी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। इसलिए मानसून के दौरान प्रजनन प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इसलिए पशुओं को संतुलित आहार दें और समय पर गर्भजांच करवाएं। ब्रुसेलोसिस एवं अन्य प्रजनन संबंधी रोगों से बचाव के लिए आवश्यक टीकाकरण एवं स्वास्थ्य प्रबंधन अपनाएं। गर्भित पशुओं की विशेष देखभाल करें।

**निष्कर्ष**-मानसून का मौसम पशुपालन के लिए अनेक अवसरों और चुनौतियों का संगम है। एक ओर इस मौसम में हरे एवं पौष्टिक चारे की प्रचुर उपलब्धता पशुओं के पोषण स्तर में सुधार करती है, वहीं दूसरी ओर बढ़ी हुई आर्द्रता, जलभराव तथा गंदगी के कारण संक्रामक रोगों, परजीवी संक्रमणों और विभिन्न स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का जोखिम भी बढ़ जाता है। यदि इन परिस्थितियों में पशुओं की देखभाल और प्रबंधन पर विशेष ध्यान न दिया जाए, तो उनकी उत्पादकता, प्रजनन क्षमता तथा समग्र स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए मानसून के दौरान पशुपालकों को अधिक सतर्क और जागरूक रहने की आवश्यकता होती है।

**किसान के लिए जरूरी सावधानियाँ** * मानसून से पहले आवश्यक टीकाकरण करवाएं। * नियमित रूप से कृमिनाशन करें। * पशुशाला को साफ, सूखा और हवादार रखें। * जलभराव बिल्कुल न होने दें। * बीमार पशु को तुरंत अलग करें। * केवल स्वच्छ एवं फफूंद रहित चारा खिलाएं। * पशुओं को साफ और सुरक्षित पेयजल दें। * गोबर एवं कचरे का उचित निस्तारण करें। * गर्भित एवं दुग्धारू पशुओं की विशेष देखभाल करें। * बीमारी के लक्षण दिखाई देने पर तुरंत पशुचिकित्सक से संपर्क करें।

12/2025-26

डॉ. शिप्रा सिंह परमार, डॉ. रंजीत रेड्डी
डॉ. पुष्पेन्द्र कुमार, डॉ. दिव्या पांडेय
डॉ. वर्तिका सिंह

बागवानी विभाग, कृषि विद्यालय, आईटीएम विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

# जलीय पालक की खेती: किसानों के लिए कम लागत में अधिक लाभ का नया विकल्प

पत्तेदार सब्जियों में कलमी साग (Water Spinach), जिसे विभिन्न क्षेत्रों में करेमुआ साग, कलमुआ, नारी साग अथवा जलीय पालक के नाम से जाना जाता है, एक ऐसी बहुउपयोगी फसल है जो कम लागत, कम समय एवं न्यूनतम देखभाल में उच्च गुणवत्ता वाला हरा जैवभार प्रदान करती है। इसका वानस्पतिक नाम Ipomoea aquatica है। परंपरागत रूप से इसकी खेती तालाबों, पोखरों एवं आर्द्र क्षेत्रों में की जाती रही है, किन्तु आधुनिक उत्पादन तकनीकों तथा उन्नत किस्मों के विकास के कारण अब इसे सामान्य खेतों (अपलैंड), गमलों तथा जलभराव वाले क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा विकसित 'काशी मनु' जैसी उन्नत किस्मों ने इस फसल को अर्ध-शुष्क एवं शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों के लिए भी उपयुक्त बना दिया है। मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, बिहार, झारखंड एवं उत्तर प्रदेश सहित देश के अनेक राज्यों में किसान इसकी खेती कर रहे हैं।

स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर, आईटीएम विश्वविद्यालय, ग्वालियर में किए गए प्रायोगिक उत्पादन एवं प्रदर्शन से यह सिद्ध हुआ है कि ग्वालियर की अर्ध-शुष्क उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में भी कलमी साग का सफल उत्पादन किया जा सकता है। विश्वविद्यालय में प्राप्त परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि उचित उत्पादन तकनीकों को अपनाकर यह फसल किसानों के लिए आय एवं पोषण सुरक्षा का एक प्रभावी विकल्प बन सकती है।

## उन्नत उत्पादन तकनीक

कलमी साग वर्षभर पत्तेदार जैवभार उत्पादन करने वाली फसल है। इसे गमलों, आर्द्रभूमि, सामान्य खेत (अपलैंड) तथा जलभराव वाली परिस्थितियों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसकी अनुशंसित बीज दर 20-25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है, जिससे भूमि का प्रभावी उपयोग होने के साथ-साथ उत्पादन लागत भी कम रहती है। इस फसल में अत्यधिक शाकीय वृद्धि होती है तथा पौधों पर 10-12 सेमी लंबी एवं 6-8 सेमी चौड़ी मुलायम, कोमल और आकर्षक हरी पत्तियाँ विकसित होती हैं, जिनकी बाजार में अच्छी मांग रहती है। बुवाई के 20-25 दिनों बाद पहली कटाई की जा सकती है तथा इसके बाद प्रत्येक 10-15 दिनों के अंतराल पर लगातार कटाई संभव होती है। इससे किसानों को पूरे मौसम नियमित उत्पादन एवं निरंतर आय प्राप्त होती है।कलमी साग की सबसे बड़ी विशेषता इसकी उच्च ताप एवं जलभराव सहनशीलता है। यह लगभग 48एष्ट तक के तापमान को सहन करने के साथ-साथ लंबे समय तक जलभराव की स्थिति में भी अच्छी वृद्धि करता है। यही कारण है कि यह जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से प्रभावित क्षेत्रों के लिए एक उपयुक्त एवं टिकाऊ फसल के रूप में उभर रही है।

## पोषणीय गुणवत्ता एवं स्वास्थ्य लाभ

कलमी साग को "पोषण का खजाना" कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसकी कोमल पत्तियाँ एवं तने प्रोटीन, आहार रेशा (डाइटरी फाइबर), विटामिन-A, विटामिन-C, कैल्शियम, आयरन तथा पोटैशियम जैसे आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। इसमें उपलब्ध उच्च लौह तत्व रक्ताल्पता (एनीमिया) की रोकथाम में सहायक माना जाता है। विटामिन-A नेत्र स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है, जबकि विटामिन-C शरीर की प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पर्याप्त मात्रा में आहार रेशा होने से यह पाचन तंत्र को स्वस्थ रखने में सहायक है तथा पोटैशियम की उपस्थिति रक्तचाप के संतुलन में योगदान देती है। पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में इसकी पत्तियों के काढ़े का उपयोग मौसमी खांसी एवं सामान्य सर्दी-जुकाम में भी किया जाता रहा है।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

प्रो. एस.के. तिवारी, डॉ. सत्येन्द्र शर्मा
डॉ. आदित्य प्रताप सिंह
सेज यूनिवर्सिटी, इंदौर (म.प्र.)

# मानव जीवन में कार्बन क्रेडिट का महत्व

## स्वच्छ पर्यावरण और टिकाऊ भविष्य की ओर एक कदम

**परिचय:** आज पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन और बढ़ते प्रदूषण की समस्या का सामना कर रही है। वाहनों, कारखानों, बिजली उत्पादन, निर्माण और अन्य गतिविधियों से बड़ी मात्रा में ग्रीनहाउस गैसें निकलती हैं। इनमें कार्बन डाइऑक्साइड ($CO^2$) एक महत्वपूर्ण गैस है। अधिक उत्सर्जन से पृथ्वी का तापमान बढ़ता है और इसका असर मौसम, पानी, खेती, पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों और मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है।

इस समस्या को कम करने के लिए दुनिया में कई उपाय किए जा रहे हैं। कार्बन क्रेडिट भी ऐसा ही एक उपाय है। इसका उद्देश्य उत्सर्जन कम करने वाली गतिविधियों को प्रोत्साहित करना और स्वच्छ तकनीक तथा टिकाऊ विकास को बढ़ावा देना है।

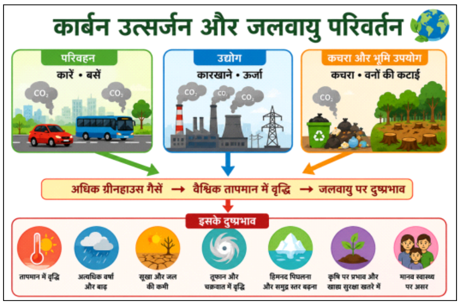


**चित्र 1. मानव गतिविधियाँ ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को बढ़ा सकती हैं।**

**कार्बन क्रेडिट क्या है?:** सरल भाषा में, कार्बन क्रेडिट एक ऐसा प्रमाण या बाजार आधारित साधन है जो किसी निश्चित मात्रा में ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन में कमी, बचाव या हटाने को दर्शाता है। कई व्यवस्थाओं में एक कार्बन क्रेडिट लगभग एक टन कार्बन डाइऑक्साइड समतुल्य (1 टन $CO2e$) के बराबर माना जाता है।

उदाहरण के लिए, यदि कोई परियोजना सौर ऊर्जा अपनाकर या ऊर्जा की बचत करके उत्सर्जन कम करती है और वह कमी उचित तरीके से मापी तथा सत्यापित की जाती है, तो संबंधित व्यवस्था के नियमों के अनुसार उससे कार्बन क्रेडिट बन सकते हैं।

**कार्बन क्रेडिट क्यों महत्वपूर्ण है?:** कार्बन क्रेडिट का महत्व केवल पैसे या व्यापार तक सीमित नहीं है। इसका मुख्य उद्देश्य ऐसी गतिविधियों को बढ़ावा देना है जिनसे पर्यावरण को लाभ हो और कार्बन उत्सर्जन कम हो।

1. **जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद:** कार्बन क्रेडिट कंपनियों और संस्थानों को अपने उत्सर्जन को मापने और कम करने के लिए प्रेरित कर सकता है। जब उत्सर्जन कम करने वाली गतिविधियों को आर्थिक महत्व मिलता है, तो स्वच्छ तकनीक अपनाने में रुचि बढ़ सकती है। इससे ग्लोबल वार्मिंग को नियंत्रित करने के प्रयासों को मदद मिलती है।

2. **स्वच्छ और नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा:** सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा और अन्य स्वच्छ ऊर्जा परियोजनाएँ जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता कम कर सकती हैं। कार्बन बाजार और अन्य जलवायु वित्त व्यवस्थाएँ ऐसी परियोजनाओं में निवेश के लिए अतिरिक्त प्रोत्साहन दे सकती हैं। इससे भविष्य में अधिक स्वच्छ ऊर्जा उपलब्ध कराने में मदद मिल सकती है।

3. **मानव स्वास्थ्य के लिए लाभ:** स्वच्छ हवा और कम प्रदूषण का सीधा संबंध अच्छे स्वास्थ्य से है। जब ऊर्जा उत्पादन और परिवहन में स्वच्छ तकनीक का उपयोग बढ़ता है, तो कई प्रकार के वायु प्रदूषण को कम करने में मदद मिल सकती है। इस प्रकार जलवायु कार्रवाई का लाभ केवल प्रकृति को नहीं, बल्कि मानव जीवन को भी मिलता है।

4. **पेड़-पौधों और प्रकृति की सुरक्षा-** पेड़ वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं। इसलिए वृक्षारोपण, वन संरक्षण और खराब हो चुकी भूमि का पुनर्विकास जैसी गतिविधियाँ जलवायु संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। इससे जैव विविधता, मिट्टी और जल संसाधनों को भी लाभ मिल सकता है।

5. **नई तकनीक और हरित रोजगार को बढ़ावा-** कार्बन उत्सर्जन कम करने के लिए नई तकनीकों की आवश्यकता होती है। ऊर्जा दक्षता, सौर ऊर्जा, इलेक्ट्रिक वाहन, कचरा प्रबंधन, मीथेन नियंत्रण और अन्य हरित तकनीकों के विकास से नए कौशल और रोजगार के अवसर भी पैदा हो सकते हैं।

**चित्र: कार्बन क्रेडिट की सरल कार्यप्रणाली**

**कार्बन क्रेडिट और हमारे दैनिक जीवन का संबंध:** कई लोगों को लगता है कि कार्बन क्रेडिट केवल बड़ी कंपनियों के लिए है। वास्तव में इसका संबंध हमारे दैनिक जीवन से भी है। हम बिजली का उपयोग करते हैं, वाहन से यात्रा करते हैं, सामान खरीदते हैं और कचरा पैदा करते हैं। इन गतिविधियों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन हो सकता है। हम बिजली बचाकर, छोटी दूरी के लिए पैदल या साइकिल से जाकर, सार्वजनिक परिवहन का उपयोग करके, वस्तुओं का पुनः उपयोग करके और कचरा कम करके अपने कार्बन फुटप्रिंट को कम कर सकते हैं।

**उद्योगों और संस्थानों की भूमिका:** उद्योगों और बड़े संस्थानों की जिम्मेदारी महत्वपूर्ण है क्योंकि उनकी गतिविधियों से काफी मात्रा में उत्सर्जन हो सकता है। उन्हें सबसे पहले अपने उत्सर्जन को मापना चाहिए, फिर ऊर्जा की बचत, स्वच्छ ऊर्जा, बेहतर तकनीक और कम कचरे जैसे उपायों से उत्सर्जन घटाना चाहिए। कार्बन क्रेडिट इन प्रयासों को प्रोत्साहित करने का एक साधन हो सकता है, लेकिन केवल क्रेडिट खरीदना अपने उत्सर्जन को कम करने का विकल्प नहीं होना चाहिए।

**ग्रीन कैंपस में कार्बन क्रेडिट की भूमिका:** शैक्षणिक संस्थान विद्यार्थियों को पर्यावरण के प्रति जिम्मेदार बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। ग्रीन कैंपस में सौर ऊर्जा, ऊर्जा बचत, वर्षा जल संचयन, कचरा पृथक्करण, कंपोस्टिंग, वृक्षारोपण, हरित परिवहन और पर्यावरण जागरूकता जैसे कार्यक्रम किए जा सकते हैं। विद्यार्थी और शिक्षक मिलकर कैंपस की ऊर्जा खपत और कार्बन फुटप्रिंट का अध्ययन कर सकते हैं। इसके आधार पर उत्सर्जन कम करने की योजना बनाई जा सकती है। इस तरह ग्रीन कैंपस केवल एक सुंदर परिसर नहीं, बल्कि पर्यावरण के प्रति जिम्मेदार जीवनशैली का उदाहरण बन सकता है।

**हम क्या कर सकते हैं?** पर्यावरण संरक्षण के लिए हर व्यक्ति का योगदान महत्वपूर्ण है। हम छोटे-छोटे कदम उठाकर शुरुआत कर सकते हैं-

**हमारे पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिए किए जा सकने वाले सरल उपाय।**

* अनावश्यक बिजली और पानी की बचत करें।
* जहाँ संभव हो, पैदल चलें या साइकिल का उपयोग करें।
* सार्वजनिक परिवहन या साझा वाहन का उपयोग करें।
* Reduce, Reuse और Recycle को अपनाएँ।
* अधिक पेड़ लगाएँ और लगाए गए पेड़ों की देखभाल करें।
* प्लास्टिक और अनावश्यक वस्तुओं के उपयोग को कम करें।
* ऊर्जा-कुशल उपकरणों और स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा दें।
* परिवार, मित्रों और विद्यार्थियों को पर्यावरण के बारे में जागरूक करें।

**कार्बन क्रेडिट की सीमाएं:** कार्बन क्रेडिट उपयोगी है, लेकिन हर कार्बन क्रेडिट समान गुणवत्ता का नहीं होता। यह जरूरी है कि उत्सर्जन में कमी को सही तरीके से मापा जाए, उसके दावे की जाँच हो और प्रक्रिया पारदर्शी हो। इसलिए कार्बन क्रेडिट को वास्तविक उत्सर्जन में कमी का विकल्प नहीं, बल्कि जलवायु कार्रवाई का एक अतिरिक्त साधन समझना चाहिए।

**निष्कर्ष:** कार्बन क्रेडिट एक ऐसा माध्यम है जो उत्सर्जन कम करने वाली गतिविधियों को आर्थिक प्रोत्साहन दे सकता है। इससे स्वच्छ ऊर्जा, ऊर्जा दक्षता, वृक्षारोपण, प्रकृति संरक्षण और हरित तकनीक को बढ़ावा मिल सकता है। मानव जीवन के लिए इसका वास्तविक महत्व कार्बन क्रेडिट खरीदने या बेचने में नहीं, बल्कि उस पर्यावरणीय कार्य में है जिससे वास्तव में कार्बन उत्सर्जन कम होता है। यदि सरकार, उद्योग, विश्वविद्यालय, समुदाय और आम नागरिक मिलकर ऊर्जा बचत, स्वच्छ तकनीक, वृक्षारोपण और जिम्मेदार जीवनशैली अपनाएँ, तो हम एक स्वच्छ और सुरक्षित भविष्य की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं। कार्बन क्रेडिट केवल एक आर्थिक साधन नहीं है; यह बेहतर पर्यावरण और आने वाली पीढ़ियों के लिए हमारी जिम्मेदारी को मजबूत करने का एक माध्यम हो सकता है।

✍ **नरेंद्र पाटीदार** एमडीओ (मैनकाइंड एग्रीटेक), दलौदा मंदसौर (म.प्र.)

# बीज उपचार: स्वस्थ फसल की पहली और सबसे महत्वपूर्ण सीढ़ी

**परिचय-बीज उपचार क्यों है अनिवार्य?:** कृषि में सफलता की शुरुआत बीज से होती है। एक स्वस्थ, मजबूत बीज ही उस पौधे को जन्म देता है जो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी बेहतर उपज देता है। लेकिन क्या आप जानते हैं कि बिना उपचारित बीज मिट्टी में पड़ते ही अनेकों खतरों से घिर जाता है- भूमिगत कीट, फफूंद जनित रोग, और सूक्ष्म जीव जो अंकुरण से पहले ही बीज को नष्ट कर देते हैं? बीज उपचार इस समस्या का सबसे सरल, किफायती और प्रभावी समाधान है। ICAR के अध्ययनों के अनुसार, सही बीज उपचार अकेले उपज (germination) को 10 से 15 प्रतिशत तक बढ़ा सकता है । यह बीमारियों, कीटों और शुरुआती तनाव से युवा पौधे की रक्षा करता है, जिससे फसल को एक मजबूत शुरुआत मिलती है

बीज उपचार के मुख्य लाभ

| लाभ | विवरण |
|---|---|
| रोग संरक्षण | बीजजनित एवं मृदाजनित रोगों से बचाव |
| कीट नियंत्रण | शुरुआती कीट आक्रमण एवं जड़ ग्रब से सुरक्षा |
| बेहतर अंकुरण | अंकुरण प्रतिशत एवं फसल स्थापन में सुधार |
| मजबूत पौध | प्रारंभिक पौध वृद्धि एवं ताकत में वृद्धि |

**रासायनिक बीज उपचार: तीन शक्तिशाली साथी**

आधुनिक बीज उपचार में तीन प्रमुख रसायनों का विशेष स्थान है– Pyraclostrobin, Thiram, और Clothianidin। इन तीनों का एक साथ उपयोग (जैसे कि SEEDKIND TCP फॉर्मूलेशन में) एक शक्तिशाली "ऑल-इन-वन" समाधान प्रदान करता है।

**1.Pyraclostrobin–कवकनाशी एवं वृद्धि उत्तेजक**

Pyraclostrobin एक व्यापक-स्पेक्ट्रम कवकनाशी है जो स्ट्रोबिल्यूरिन समूह से संबंधित है। यह कवक की माइटोकॉन्ड्रियल श्वसन (Mitochondrial respiration) को अवरुद्ध करके कार्य करता है ।

**विशेष विशेषताएँ:**

* **सुरक्षात्मक एवं उपचारात्मक-** यह न केवल रोगों से बचाता है, बल्कि प्रारंभिक अवस्था के संक्रमण को ठीक करने में भी सहायक है
* **पत्ती-प्रवेशी गुण-** पौधे में प्रवेश करके पूरे पौधे की रक्षा करता है
* **Nitrate Reductase को बढ़ाता है -** जिससे नाइट्रोजन उपयोग क्षमता बेहतर होती है और पौधे की वृद्धि तीव्र होती है
* **जड़ विकास में सहायक-** अधिक जड़ ग्रंथियाँ (Root Nodules) एवं गहरी जड़ प्रणाली

**मुख्य लक्षित रोग:** फ्यूजेरियम, राइज़ोक्टोनिया, पाइथियम सहित विभिन्न मृदाजनित कवक

**2. Thiram – पारंपरिक एवं विश्वसनीय कवकनाशी**

Thiram (डाइमिथाइल डाइथियोकार्बामेट) एक पुराना, सिद्ध और अत्यंत प्रभावी संपर्क कवकनाशी है। यह बीज की सतह पर एक सुरक्षात्मक परत बनाता है ।

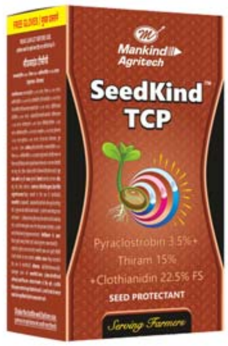


**कार्यप्रणाली:**

* बीज सड़न (Seed Rot) एवं डैम्पिंग-ऑफ (अंकुर गलन) रोग से बचाव
* थायरोल समूह की सक्रियता को बाधित कर कवक की वृद्धि रोकता है
* विशेष रूप से फ्यूजेरियम एवं पाइथियम जनित रोगों में कारगर

**विशेषताएँ:**

* 1.5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से प्रयोग
* अन्य कवकनाशियों जैसे कार्बोक्सिन या कार्बेन्डाजिम के साथ मिश्रण में अत्यधिक प्रभावी
* बीजोपचार के पहले चरण के रूप में उपयोग (प्राथमिकता)

**3. Clothianidin – शक्तिशाली कीटनाशी**

Clothianidin एक नियोनिकोटिनोइड (Neonicotinoid) समूह का कीटनाशी है, जो कीटों के केंद्रीय तंत्रिका तंत्र ( रिसेप्टर) को अवरुद्ध करता है।

**विशेष विशेषताएँ:**

* **प्रणालीगत (Systemic) –** बीज उपचार के बाद पौधे की जड़ों द्वारा तुरंत अवशोषित होकर पूरे पौधे में फैल जाता है
* **दीर्घकालिक सुरक्षा –** शुरुआती 3-4 सप्ताह तक कीटों से बचाव
* चूसने वाले कीट (Sucking Pests), दीमक (Termites), और मृदा-जनित कीटों पर प्रभावी

**मुख्य लक्षित कीट:** थ्रिप्स, एफिड्स, व्हाइटग्रब, और सूत्रकृमि

तकनीकी मिश्रण: TCP

**TCP एक लोकप्रिय व्यावसायिक फॉर्मूलेशन है जो इन तीनों को एक साथ मिलाता है:**

| घटक | सांद्रता |
|---|---|
| Pyraclostrobin | 3.5% |
| Thiram | 15.0% |
| Clothianidin | 22.5% |

**उपयोग दर:** 1.5 मिली प्रति किलो बीज

**प्रमुख लाभ:**

* बीज एवं पौध की सुरक्षा
* अंकुरण में सुधार
* अधिक जड़ विकास एवं हरियाली
* सभी फसलों के लिए उपयुक्त (अनाज, दलहन, तिलहन, सब्जियाँ)

**सही बीज उपचार की प्रक्रिया**

बहु-उत्पाद उपचार में क्रम (Step-by-Step Protocol)

**जब बीज पर कई उत्पादों का उपयोग करना हो, तो यह क्रम अनिवार्य है :**

**1.पहले फफूंदनाशी (Fungicide) –** उदा. Thiram, Carbendazim, Pyraclostrobin

**2.फिर कीटनाशी (Insecticide)–**उदा. Clothianidin, Imidacloprid

**3.अंत में जैविक एजेंट (Bio-agent)–** उदा. Trichoderma, Rhizobium

4.रासायनिक एवं जैविक चरण के बीच कम से कम 24 घंटे का अंतराल रखें

**उपचार विधि**

1.साफ बर्तन या बीज ड्रम का उपयोग करें

2.चिपकने में सहायता हेतु कुछ बूंद पानी मिलाएँ

3.धीरे-धीरे मिलाएँ ताकि बीज समान रूप से लेपित हों

4.बुआई से पहले छाया में सुखाएँ - धूप में न सुखाएँ

5.उपचारित बीज 24-48 घंटे के भीतर बोएँ

**सावधानियाँ एवं सुरक्षा निर्देश**

**रासायनिक बीज उपचार अत्यंत प्रभावी है, परंतु इसके लिए सावधानी आवश्यक है:**

* सुरक्षा उपकरण- दस्ताने, मास्क, लंबी आस्तीन और जूते पहनें
* उपचार के दौरान भोजन, पेय या धूम्रपान न करें
* उपचारित बीज को मानव उपभोग, पशु आहार या पीसने के लिए उपयोग न करें
* उपचारित बीज को बच्चों, जानवरों और भोजन से दूर रखें
* बुआई के बाद तुरंत मिट्टी से ढकें ङ्ग पक्षी एवं अन्य जीवों से बचाव हेतु
* जल स्रोतों (तालाब, नदी) से दूरी बनाए रखें
* प्रत्येक उत्पाद के लेबल निर्देशों का पालन करें

**निष्कर्ष:** बीज उपचार कृषि का वह 'गुप्त हथियार' है जिसे अक्सर नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है, जबकि यह फसल की सफलता की पहली और सबसे महत्वपूर्ण सीढ़ी है। Pyraclostrobin, Thiram, और Clothianidin जैसे आधुनिक रसायन, जब सही अनुपात और सही विधि से उपयोग किए जाते हैं, तो बीज को सुरक्षा कवच प्रदान करते हैं ङ्ग रोगों से, कीटों से, और पर्यावरणीय तनाव से। यह छोटा सा निवेश फसल को एक मजबूत शुरुआत देता है, जो अंततः बेहतर अंकुरण, मजबूत पौध, और अधिक उपज में परिवर्तित होता है ।

**"एक बार उपचार करें, पूरी फसल का लाभ उठाएँ– यही है स्मार्ट किसान की पहचान!"**

# कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) और पशुपालन

डॉ. आशुतोष तिवारी, डॉ. नमिता शुक्ला,
डॉ. आर. सी. रामटेके, डॉ. दीप्ति किरण बरवा,
डॉ. शिवेश देशमुख, डॉ. निशिमा सिंह
डॉ. रजनी फ्लोरा कुजूर, डॉ. जागृति कृषान
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय अंजोरा
दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनू विश्वविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

**प्रस्तावना**-वर्तमान समय विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। प्रत्येक क्षेत्र में आधुनिक तकनीकों का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। पशुपालन भी इससे अछूता नहीं है। आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence – AI) पशुपालन को अधिक वैज्ञानिक, लाभकारी एवं टिकाऊ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता ऐसी तकनीक है जिसके माध्यम से कंप्यूटर एवं मशीनें मनुष्य की तरह सोचने, सीखने, निर्णय लेने तथा समस्याओं का समाधान करने में सक्षम होती हैं। AI, मशीन लर्निंग (Machine Learning), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), सेंसर तकनीक, ड्रोन, रोबोटिक्स तथा बिग डेटा विश्लेषण के माध्यम से पशुओं की स्वास्थ्य निगरानी, पोषण प्रबंधन, प्रजनन, दुग्ध उत्पादन तथा रोग नियंत्रण को अधिक प्रभावी बनाती है।

## पशुपालन में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का महत्व

**1. पशुओं के स्वास्थ्य की निगरानी**-AI आधारित स्मार्ट सेंसर एवं पहनने योग्य उपकरण (Wearable Devices) पशुओं के शरीर का तापमान, हृदय गति, श्वसन दर, जुगाली, गतिविधि तथा भोजन ग्रहण करने की जानकारी निरंतर रिकॉर्ड करते हैं। यदि किसी पशु के व्यवहार या स्वास्थ्य में असामान्य परिवर्तन होता है तो प्रणाली तुरंत पशुपालक को सूचना भेज देती है। इससे रोगों की प्रारंभिक अवस्था में पहचान संभव हो जाती है और समय पर उपचार मिलने से मृत्यु दर कम होती है।

**2. रोगों की शीघ्र पहचान**-AI एल्गोरिद्म पशुओं के लक्षणों, फोटो, वीडियो तथा प्रयोगशाला रिपोर्ट का विश्लेषण करके अनेक संक्रामक एवं गैर-संक्रामक रोगों की शीघ्र पहचान कर सकते हैं। इससे रोगों के फैलाव को रोका जा सकता है तथा उपचार की लागत भी कम होती है।

**3. दुग्ध उत्पादन में वृद्धि**-स्वचालित दुग्ध दुहन प्रणाली (Automatic Milking System) एवं AI आधारित मिल्क एनालाइज़र दूध की मात्रा, गुणवत्ता, वसा प्रतिशत, प्रोटीन तथा सोमेटिक सेल काउंट का विश्लेषण करते हैं। इससे प्रत्येक पशु की उत्पादकता का मूल्यांकन कर उचित प्रबंधन किया जा सकता है, जिससे दुग्ध उत्पादन एवं गुणवत्ता दोनों में सुधार होता है।

**4. प्रजनन प्रबंधन**-AI पशुओं में हीट (Estrus) की सही पहचान करने में अत्यंत उपयोगी है। सेंसर पशु की गतिविधियों, शरीर के तापमान एवं व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों का विश्लेषण करके गर्भाधान के सर्वोत्तम समय की जानकारी देते हैं। इससे गर्भधारण की सफलता बढ़ती है तथा प्रजनन संबंधी समस्याएँ कम होती हैं।

**5. पोषण प्रबंधन**-AI प्रत्येक पशु की आयु, वजन, उत्पादन क्षमता एवं स्वास्थ्य के अनुसार संतुलित आहार की योजना तैयार करता है। इससे चारे का अपव्यय कम होता है, उत्पादन बढ़ता है तथा पशुओं का स्वास्थ्य बेहतर रहता है।

**6. व्यवहार विश्लेषण**-कृत्रिम बुद्धिमत्ता कैमरों एवं सेंसरों की सहायता से पशुओं की गतिविधियों का विश्लेषण करती है। यदि कोई पशु सामान्य से कम चल रहा हो, कम खा रहा हो या असामान्य व्यवहार कर रहा हो, तो वह तुरंत इसकी सूचना देता है। इससे रोग या तनाव की प्रारंभिक पहचान संभव हो जाती है।

**7. फार्म प्रबंधन में सहायता**-AI आधारित फार्म मैनेजमेंट सॉफ्टवेयर पशुओं का पूरा रिकॉर्ड जैसे जन्म, टीकाकरण, दुग्ध उत्पादन, गर्भधारण, उपचार एवं आर्थिक विवरण सुरक्षित रखते हैं। इससे पशुपालक वैज्ञानिक निर्णय ले सकते हैं तथा फार्म का संचालन अधिक व्यवस्थित होता है।

**8. आनुवंशिक सुधार (Genetic Improvement)**-AI लाखों पशुओं के आनुवंशिक आंकड़ों का विश्लेषण करके श्रेष्ठ नस्लों के चयन में सहायता करता है। इससे अधिक दूध देने वाले, रोग प्रतिरोधी तथा उच्च उत्पादकता वाले पशुओं का विकास संभव होता है।

**9. श्रम एवं लागत में कमी**-रोबोटिक मिल्किंग मशीन, स्वचालित फीडर तथा सफाई उपकरणों के उपयोग से श्रम की आवश्यकता कम होती है। इससे समय की बचत होती है तथा उत्पादन लागत में कमी आती है।

**10. आपदा एवं महामारी प्रबंधन**-AI मौसम, रोगों के प्रसार एवं पर्यावरणीय परिस्थितियों का विश्लेषण करके संभावित खतरों की पूर्व चेतावनी देता है। इससे महामारी नियंत्रण तथा पशुओं की सुरक्षा बेहतर ढंग से की जा सकती है।

**भारत में AI की संभावनाएँ**-भारत विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश है। यहाँ अधिकांश पशुपालन छोटे एवं सीमांत किसानों द्वारा किया जाता है। AI आधारित तकनीकों के माध्यम से पशुपालकों को मोबाइल ऐप, सेंसर, स्मार्ट कॉलर, डिजिटल हेल्थ रिकॉर्ड तथा टेलीमेडिसिन सेवाएँ उपलब्ध कराई जा रही हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में भी वैज्ञानिक पशुपालन को बढ़ावा मिल रहा है। विशेष रूप से डेयरी, भैंस पालन, गौपालन, बकरी पालन एवं पोल्ट्री उद्योग में AI का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है।

**चुनौतियाँ**-यद्यपि AI अत्यंत उपयोगी है, फिर भी इसके व्यापक उपयोग में कुछ चुनौतियाँ हैं–* आधुनिक उपकरणों की अधिक लागत। * ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट एवं बिजली की सीमित उपलब्धता। * तकनीकी ज्ञान एवं प्रशिक्षण का अभाव। * डेटा सुरक्षा एवं गोपनीयता की समस्या। * छोटे किसानों की सीमित आर्थिक क्षमता।

इन चुनौतियों को सरकारी सहायता, प्रशिक्षण कार्यक्रम, डिजिटल अवसंरचना तथा कम लागत वाली स्वदेशी तकनीकों के विकास द्वारा दूर किया जा सकता है।

**भविष्य की संभावनाएं**-भविष्य में AI आधारित स्मार्ट कॉलर, ड्रोन निगरानी, रोबोटिक दुग्ध दुहन, स्वचालित फीडिंग सिस्टम, चेहरे की पहचान द्वारा पशुओं की पहचान, रोग पूर्वानुमान प्रणाली तथा इंटरनेट ऑफ मेडिकल थिंग्स (IoMT) जैसी तकनीकें पशुपालन को पूरी तरह डिजिटल एवं स्मार्ट बना देंगी। इससे उत्पादन बढ़ेगा, पशु कल्याण में सुधार होगा तथा किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि होगी।

**निष्कर्ष**- कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधुनिक पशुपालन की आधारशिला बनती जा रही है। यह पशुओं के स्वास्थ्य, पोषण, प्रजनन, उत्पादन एवं प्रबंधन के प्रत्येक क्षेत्र में वैज्ञानिक, सटीक एवं त्वरित निर्णय लेने में सहायता करती है। AI के उपयोग से न केवल पशुओं की उत्पादकता एवं स्वास्थ्य में सुधार होता है, बल्कि किसानों की आय, संसाधनों की दक्षता तथा पशु कल्याण भी बढ़ता है। यदि भारत में AI आधारित तकनीकों का व्यापक स्तर पर प्रसार किया जाए तथा किसानों को उचित प्रशिक्षण एवं तकनीकी सहायता प्रदान की जाए, तो पशुपालन क्षेत्र आत्मनिर्भर, लाभकारी एवं वैश्विक स्तर पर अधिक प्रतिस्पर्धी बन सकता है। इस प्रकार, कृत्रिम बुद्धिमत्ता भविष्य के स्मार्ट, टिकाऊ और वैज्ञानिक पशुपालन की सबसे महत्वपूर्ण तकनीक सिद्ध होगी।

01/2025-26

डॉ. थानेश्वर कुमार (सहायक प्राध्यापक)
शहीद गुंडाधुर कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, जगदलपुर, बस्तर (छ.ग.)
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

# मिट्टी का स्वास्थ्य, फसल की समृद्धि: एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

**प्रस्तावना:** कृषि उत्पादन में मिट्टी की उर्वरता और पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों की पर्याप्त उपलब्धता का महत्वपूर्ण स्थान है। पौधों को नाइट्रोजन (N), फास्फोरस (P), पोटाश (K), सल्फर, कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा जिंक, आयरन, मैंगनीज, कॉपर, बोरॉन और मोलिब्डेनम जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इनमें से किसी एक पोषक तत्व की कमी होने पर फसल की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। वर्तमान समय में लगातार बढ़ती जनसंख्या और खाद्यान्न की मांग को पूरा करने के लिए अधिक उत्पादन आवश्यक है। इसके साथ ही मिट्टी की उर्वरता को लंबे समय तक बनाए रखना भी जरूरी है। केवल रासायनिक उर्वरकों पर निर्भर रहने के बजाय रासायनिक उर्वरक, जैविक खाद, हरी खाद, फसल अवशेष, जैव उर्वरक तथा अन्य पोषक तत्व स्रोतों का संतुलित एवं वैज्ञानिक उपयोग करना अधिक प्रभावी तरीका है। इसी समन्वित दृष्टिकोण को एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन कहा जाता है।

**एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन क्या है?** एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन वह वैज्ञानिक पद्धति है जिसमें मिट्टी की उर्वरता, फसल की आवश्यकता और स्थानीय संसाधनों को ध्यान में रखते हुए जैविक, अकार्बनिक तथा जैविक उर्वरक स्रोतों का समन्वित और संतुलित उपयोग किया जाता है, ताकि फसल को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराने के साथ-साथ मिट्टी की उर्वरता एवं उत्पादकता को लंबे समय तक बनाए रखा जा सके।

**सरल शब्दों में—** "खेत की जरूरत के अनुसार जैविक खाद + रासायनिक उर्वरक + जैव उर्वरक + फसल अवशेष का उचित एवं संतुलित उपयोग ही एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन है।"

**एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की आवश्यकता क्यों है?** लगातार एक ही खेत में फसल लेने से मिट्टी से पोषक तत्वों का लगातार निष्कासन होता रहता है। यदि इन पोषक तत्वों की पूर्ति उचित तरीके से नहीं की जाती है, तो मिट्टी की उर्वरता धीरे-धीरे कम हो सकती है। दूसरी ओर, आवश्यकता से अधिक उर्वरक डालने से भी लाभ नहीं बढ़ता। इससे उत्पादन लागत बढ़ने के साथ पोषक तत्वों का नुकसान और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव हो सकता है।

**एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन अपनाने की प्रमुख आवश्यकता निम्नलिखित है—**

* मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखना। * फसल को संतुलित पोषण उपलब्ध कराना। * रासायनिक उर्वरकों की उपयोग दक्षता बढ़ाना। * उर्वरकों पर होने वाले अनावश्यक खर्च को कम करना। * जैविक खादों एवं स्थानीय संसाधनों का बेहतर उपयोग करना। * मिट्टी में जैविक कार्बन को बढ़ाने में सहायता करना। * मिट्टी की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणवत्ता में सुधार करना। * फसल की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में सुधार करना। * पोषक तत्वों के नुकसान को कम करना। * पर्यावरण संरक्षण एवं टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देना। * लंबे समय तक भूमि की उत्पादकता बनाए रखना।

**एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के प्रमुख लाभ**

**मिट्टी के लिए लाभ** * मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में सहायता। * जैविक कार्बन बढ़ाने में योगदान। * मिट्टी की संरचना में सुधार। * जल धारण क्षमता में सुधार। * लाभकारी सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ावा।

**फसल के लिए लाभ** * संतुलित पोषण। * पौधों की बेहतर वृद्धि। * जड़ विकास में सुधार। * उपज एवं गुणवत्ता में सुधार। * पोषक तत्व उपयोग दक्षता में वृद्धि।

**किसान के लिए लाभ** * उर्वरक लागत को तर्कसंगत बनाने में सहायता। * स्थानीय जैविक संसाधनों का उपयोग। * लंबे समय में मिट्टी की उत्पादकता बनाए रखने में सहायता। * टिकाऊ उत्पादन प्रणाली को बढ़ावा। * कृषि आय में सुधार की संभावना।

**पर्यावरण के लिए लाभ**-* पोषक तत्वों के अनावश्यक नुकसान को कम करने में सहायता। * फसल अवशेष जलाने की आवश्यकता कम करना। * मिट्टी के जैविक स्वास्थ्य को बढ़ावा। * कृषि प्रणाली को अधिक टिकाऊ बनाना।

**एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के प्रमुख घटक**

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन में मुख्य रूप से निम्न स्रोतों का उपयोग किया जाता है।

**1 रासायनिक उर्वरक**-रासायनिक उर्वरक पौधों को पोषक तत्वों की शीघ्र उपलब्धता प्रदान करते हैं। यूरिया, DAP, SSP, MOP आदि इसके उदाहरण हैं। इनका उपयोग मृदा परीक्षण और फसल की अनुशंसित पोषक तत्व आवश्यकता के आधार पर करना चाहिए।

**उदाहरण के लिए—**

* यूरिया * मुख्यतः नाइट्रोजन
* DAP * नाइट्रोजन एवं फास्फोरस
* SSP * फास्फोरस एवं सल्फर
* MOP * पोटाश

**ध्यान रखें**- उर्वरक की मात्रा अधिक डालने से हमेशा अधिक उत्पादन नहीं मिलता। सही मात्रा और सही समय पर उर्वरक देना अधिक महत्वपूर्ण है।

**2.जैविक खादों का उपयोग**-जैविक खाद INM का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इनमें प्रमुख हैं– * गोबर की खाद (FYM) * कम्पोस्ट * वर्मी कम्पोस्ट * नाडेप कम्पोस्ट * हरी खाद * फसल अवशेष * अन्य स्थानीय जैविक संसाधन

जैविक खादों के प्रयोग से मिट्टी में जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ाने में सहायता मिलती है। इससे मिट्टी की संरचना, जल धारण क्षमता और सूक्ष्मजीव गतिविधि में सुधार हो सकता है।

**अच्छी गोबर की खाद कैसी हो?** अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद का उपयोग करना चाहिए। अधपकी खाद के प्रयोग से खरपतवार के बीज और कुछ अवांछित समस्याएँ हो सकती हैं।

**3.वर्मी कम्पोस्ट**-केंचुओं की सहायता से तैयार की गई जैविक खाद को वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं। इसमें पौधों के लिए आवश्यक कई पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं तथा यह मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ाने में उपयोगी है।

**वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग—** * सब्जियों * फलदार पौधों * धान * गेहूँ * दलहनी फसलों * बागवानी फसलों में स्थानीय कृषि अनुशंसा के अनुसार किया जा सकता है।

**4. हरी खाद** - हरी खाद के लिए ढैंचा, सनई आदि फसलों का उपयोग किया जा सकता है। इन फसलों को उचित अवस्था में मिट्टी में पलटने से जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है और मिट्टी के पोषण में योगदान मिलता है। हरी खाद विशेष रूप से उन क्षेत्रों में उपयोगी है जहाँ जैविक खाद पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है।

**हरी खाद के लाभ** * मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ाने में सहायता। * मिट्टी की संरचना में सुधार। * सूक्ष्मजीव गतिविधि को बढ़ावा। * पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण में सहायता। * मिट्टी की जल धारण क्षमता में सुधार।

**5. फसल अवशेषों का प्रबंधन**-धान का पुआल, गेहूँ का भूसा, मक्का के डंठल और अन्य फसल अवशेषों में भी पोषक तत्व होते हैं। इन्हें जलाने के बजाय उचित तरीके से खेत में मिलाने या कम्पोस्ट बनाने में उपयोग करना चाहिए। फसल अवशेषों को खेत में मिलाने से पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण होता है और मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ाने में मदद मिलती है। किसानों को फसल अवशेष जलाने से बचना चाहिए।

**6. जैव उर्वरकों का उपयोग**- जैव उर्वरक ऐसे उपयोगी सूक्ष्मजीवी स्रोत हैं जो पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध कराने या उनकी उपलब्धता बढ़ाने में सहायता करते हैं।

**प्रमुख जैव उर्वरक हैं—**

**i. राइजोबियम**-मुख्यतः दलहनी फसलों में वायुमंडलीय नाइट्रोजन के जैविक स्थिरीकरण में सहायता करता है।

**ii. एजोटोबैक्टर**-दलहन के अतिरिक्त कई फसलों में नाइट्रोजन पोषण में योगदान कर सकता है।

iii. PSB Phosphate Solubilizing Bacteria मिट्टी में मौजूद कम उपलब्ध फास्फोरस को पौधों के लिए अधिक उपलब्ध रूप में बदलने में सहायता कर सकते हैं।

# बेहतर नस्ल, बेहतर मुनाफा : सही प्रजनन पशु का चुनाव कैसे करें

✍डॉ. प्रतिमा घृतलहरे, डॉ. केशर परवीन
पशु आनुवांशिकी एवं प्रजनन विभाग, दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनु विश्वविद्यालय , दुर्ग (छत्तीसगढ़ )

पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए गाय-भैंस पालन आय का एक स्थायी स्रोत बन सकता है, बशर्ते सही नस्ल और सही प्रजनन पशु (ब्रीडिंग एनिमल) का चुनाव किया जाए। दुर्भाग्य से आज भी अधिकांश किसान प्रजनन के लिए जो सांड या नर पशु इस्तेमाल करते हैं, उसका चुनाव वैज्ञानिक आधार पर नहीं बल्कि ÷जो पास में उपलब्ध है÷ के आधार पर करते हैं। इसका सीधा असर अगली पीढ़ी के दूध उत्पादन, स्वास्थ्य और आय पर पड़ता है। इस लेख में हम समझेंगे कि एक अच्छा प्रजनन पशु चुनने के वैज्ञानिक आधार क्या हैं, और छत्तीसगढ़ की परिस्थितियों में इसे व्यवहारिक रूप से कैसे लागू किया जाए।

**प्रजनन पशु का चुनाव इतना महत्वपूर्ण क्यों है?**

किसी भी पशु की उत्पादन क्षमता – जैसे दूध की मात्रा, वसा (फैट) प्रतिशत, रोग प्रतिरोधक क्षमता, और शारीरिक बनावट – काफी हद तक आनुवंशिकता (जेनेटिक्स) पर निर्भर करती है। एक सामान्य अंदाज़ा यह है कि पशु की उत्पादकता में लगभग आधा योगदान उसकी नस्ल और आनुवंशिक गुणों का होता है, और बाकी आधा चारा-पानी, देखभाल और प्रबंधन का। इसलिए यदि शुरुआत ही कमज़ोर प्रजनन पशु से हो, तो चाहे कितनी भी अच्छी देखभाल कर ली जाए, अगली पीढ़ी की क्षमता सीमित रह जाएगी। एक अच्छा सांड (bull) या पाड़ा (buffalo bull) सैकड़ों बछड़े-बछड़ियां पैदा कर सकता है – इसलिए एक गलत चुनाव का नुकसान झुंड की कई पीढ़ियों तक चलता है, जबकि एक सही चुनाव का फायदा भी उतनी ही दूर तक जाता है।

**सही प्रजनन पशु चुनने के वैज्ञानिक आधार**

1.वंशावली (पेडिग्री) और उत्पादन रिकॉर्ड देखें- केवल पशु को देखकर उसकी दूध क्षमता का अंदाज़ा नहीं लगाया जा सकता, खासकर नर पशु का – क्योंकि सांड खुद दूध नहीं देता। इसलिए उसकी माँ और नानी की दूध उत्पादन क्षमता का रिकॉर्ड ज़रूर देखें। यदि सांड किसी सरकारी पशु प्रजनन फार्म या कृत्रिम गर्भाधान (आर्टिफिशियल इन्सेमिनेशन/AI) केंद्र से लिया जा रहा है, तो वहां हर सांड का "सायर इंडेक्स" या प्रदर्शन रिकॉर्ड उपलब्ध होता है – यह ज़रूर मांगें।

**2.शारीरिक बनावट (कन्फर्मेशन)**

**एक स्वस्थ प्रजनन पशु में ये लक्षण देखें-**

* चौड़ी और गहरी छाती, मज़बूत पीठ और सीधे पैर * साफ, चमकदार त्वचा और बाल, बिना घाव या फोड़े के * सक्रिय स्वभाव और तेज़ चाल – सुस्त पशु आमतौर पर कमज़ोर प्रजनन क्षमता का संकेत देते हैं * मादा पशु में सही आकार का, सुडौल थन (अधिक झुका हुआ या असामान्य थन भविष्य में दूध निकालने में दिक्कत देता है)

* **उम्र और यौन परिपक्वता** - बहुत कम उम्र के या बूढ़े पशु को प्रजनन के लिए इस्तेमाल न करें। देसी गाय की नस्लों में सामान्यतः 2.5-3 वर्ष और भैंस में 3-3.5 वर्ष की उम्र तक पहला गर्भाधान उपयुक्त माना जाता है। बहुत जल्दी प्रजनन कराने से मादा पशु का स्वयं का विकास रुक जाता है और अगली पीढ़ी भी कमज़ोर रहती है।

* **रोग-मुक्त होना अनिवार्य है- प्रजनन से पहले पशु की जांच अवश्य कराएं** — विशेषकर ब्रुसेलोसिस, तपेदिक (टीबी) और जननांग संक्रमण जैसी बीमारियों के लिए, क्योंकि ये संक्रामक रोग प्रजनन के ज़रिए और दूध के ज़रिए तेज़ी से फैल सकते हैं और मनुष्यों को भी प्रभावित कर सकते हैं (ज़ूनोटिक रोग)। नज़दीकी पशु चिकित्सालय या कृषि विज्ञान केंद्र से नियमित जांच कराएं।

**आनुवंशिक विविधता बनाए रखें** — इनब्रीडिंग से बचें- छोटे गांवों में अक्सर एक ही सांड का इस्तेमाल पूरे झुंड और आसपास के कई सालों तक होता है, जिससे माँ-बेटी, भाई-बहन जैसे करीबी रिश्तों में प्रजनन (इनब्रीडिंग) हो जाता है। इसका परिणाम कमज़ोर प्रतिरोधक क्षमता, कम प्रजनन दर और विकृतियों के रूप में सामने आता है। इससे बचने के लिए हर 2-3 वर्ष में सांड बदलें, या कृत्रिम गर्भाधान (ढ्ढ) सेवा का इस्तेमाल करें जिसमें दूर के, बेहतर परखे हुए सांड़ों का वीर्य उपलब्ध होता है।

**छत्तीसगढ़ के संदर्भ में क्या ध्यान रखें**

**छत्तीसगढ़ की जलवायु** — गर्म और आर्द्र ग्रीष्म, भारी वर्षा वाला मानसून – पशु चयन को प्रभावित करती है। यहां के लिए ये बातें विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं-

**स्थानीय अनुकूलित नस्लों को प्राथमिकता दें-** कोसली (छत्तीसगढ़ी) गाय जैसी स्थानीय नस्लें यहां की गर्मी, कम गुणवत्ता वाले चारे और मौसमी बीमारियों के अनुकूल विकसित हुई हैं। इन्हें पूरी तरह छोड़कर सिर्फ विदेशी संकर नस्ल (जर्सी, होल्स्टीन-फ्रीज़ियन) अपनाने से पहले सोचें–संकर नस्लें अधिक दूध देती हैं, पर उन्हें बेहतर चारा, छांव और देखभाल चाहिए, जो हर किसान के लिए आसान नहीं। बेहतर विकल्प अक्सर योजनाबद्ध संकरण (क्रॉसब्रीडिंग) होता है – जिसमें स्थानीय नस्ल की रोग-प्रतिरोधक क्षमता और संकर नस्ल की अधिक उत्पादन क्षमता, दोनों का संतुलन बनाया जाता है।

**सरकारी योजनाओं और संसाधनों का उपयोग करें-** छत्तीसगढ़ शासन के पशुधन विकास विभाग द्वारा गोठानों, कृत्रिम गर्भाधान केंद्रों और नस्ल सुधार कार्यक्रमों के ज़रिए किसानों को प्रमाणित/जांचे हुए सांड़ का वीर्य रियायती दर पर उपलब्ध कराया जाता है। गोधन न्याय योजना और संबंधित गोठान नेटवर्क के अंतर्गत भी पशु स्वास्थ्य शिविर लगते हैं – इनका लाभ ज़रूर उठाएं, क्योंकि निजी स्रोत से बिना जांचे सांड़ लेने से बेहतर, प्रमाणित AI सेवा कहीं अधिक भरोसेमंद और सस्ती पड़ती है।

**मानसून और बरसाती बीमारियों का ध्यान रखें-** बरसात के मौसम में खुरपका-मुंहपका (FMD) जैसी बीमारियां तेज़ी से फैलती हैं। प्रजनन से पहले टीकाकरण का पूरा रिकॉर्ड जांच लें, और गर्भाधान का समय ऐसा रखें कि बच्चे का जन्म भारी बारिश या भीषण गर्मी के महीनों में न पड़े – इससे नवजात पशु की जीवन दर बेहतर रहती है।

**भैंस पालकों के लिए-** छत्तीसगढ़ में भैंस पालन भी व्यापक है। भैंस में मुर्रा जैसी उन्नत नस्ल के पाड़े का इस्तेमाल स्थानीय भैंसों के साथ योजनाबद्ध ढंग से करने पर दूध उत्पादन में उल्लेखनीय सुधार देखा गया है, बशर्ते पाड़े का चयन प्रमाणित स्रोत से हो।

**व्यवहारिक सुझाव- किसान क्या करें-**प्रजनन के लिए हमेशा नज़दीकी पशु चिकित्सा अधिकारी या कृत्रिम गर्भाधान (AI) कार्यकर्ता से सलाह लें।

**जहां संभव हो, प्राकृतिक प्रजनन की बजाय कृत्रिम गर्भाधान को प्राथमिकता दें** — यह अधिक सुरक्षित, रोगमुक्त और वैज्ञानिक रूप से बेहतर परखे हुए सांड़ों तक पहुंच देता है।

**अपने पशुओं का एक साधारण रिकॉर्ड रखें** — कब गर्भाधान हुआ, किस सांड/वीर्य से हुआ, दूध कितना मिला। यह रिकॉर्ड आगे चलकर सही निर्णय लेने में मदद करता है।

पड़ोसी किसानों के साथ मिलकर सामूहिक रूप से अच्छी नस्ल के सांड़ या AI सेवा का प्रबंध करें – इससे लागत भी बंटती है और गुणवत्ता भी बेहतर मिलती है।

किसी भी नए पशु को झुंड में शामिल करने से पहले पशु चिकित्सक से स्वास्थ्य जांच अवश्य कराएं।

**निष्कर्ष-**बेहतर नस्ल की नींव सही प्रजनन पशु के चुनाव से पड़ती है। यह एक ऐसा निवेश है जिसका फल तुरंत नहीं, बल्कि अगली कई पीढ़ियों में दिखता है – बेहतर दूध उत्पादन, कम बीमारी, और अंततः बेहतर मुनाफा। छत्तीसगढ़ के किसानों के लिए सबसे व्यवहारिक रास्ता है- स्थानीय अनुकूलित नस्लों को आधार बनाकर, सरकारी कृत्रिम गर्भाधान सेवाओं और पशु चिकित्सा सलाह का भरपूर उपयोग करते हुए, वैज्ञानिक सोच के साथ प्रजनन पशु का चुनाव करना। थोड़ी सी सजगता आज, आने वाले वर्षों में झुंड को स्वस्थ, उत्पादक और लाभदायक बना सकती है।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला–ग्वालियर (म.प्र.)

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका


# कृषि में टिकाऊ जल संसाधन प्रबंधन: एक हरित भविष्य के लिए एक महत्वपूर्ण अनिवार्यता

**नारायण दत्त मिश्र, अनामिका पटेल, भावना सैनी, आशीष यादव, नितिन सिंह**
सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

**सुधांशु मौर्य** एम.एससी., सस्य विज्ञान प्रभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली

**प्रस्तावना:** जल जीवन का स्रोत है, यह एक सीमित प्राकृतिक संसाधन है जिसका पारिस्थितिक तंत्र को बनाए रखने के लिए बहुत महत्व है, उदाहरण के लिए, कृषि उत्पादन, पशुधन, समग्र उत्पादन, मानव जीवन को बनाए रखने और आर्थिक विकास के लिए। हालाँकि, जनसंख्या में तेजी से वृद्धि, शहरीकरण, जलवायु परिवर्तन तथा पानी की आवश्यकता वाले क्षेत्रों की बढ़ती संख्या के कारण, जल प्रबंधन एक अत्यंत आवश्यक विषय बन गया है। इस लेख में, मैं कृषि में जल प्रबंधन के महत्व और चुनौतियों पर चर्चा, विश्लेषण और तर्क प्रस्तुत करूँगा।

**कृषि में जल संसाधन प्रबंधन की चुनौतियां**-कई चुनौतियाँ जल संसाधन प्रबंधन को प्रभावित करती हैं; उनमें से कुछ पर नीचे चर्चा की गई है-

**जल की कमी:** बढ़ती जनसंख्या के कारण, प्राकृतिक जल संसाधन मानवीय माँगों और आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपर्याप्त हैं। जल की कमी पारिस्थितिक तंत्र के लिए एक महत्वपूर्ण तनाव कारक है और इसके कृषि उत्पादन तथा प्राकृतिक समुदायों पर नकारात्मक परिणाम हो सकते हैं। जल की कमी न केवल बड़ी जनसंख्या के कारण होती है, बल्कि इस कारण भी होती है कि लोग आवश्यकता से अधिक जल संसाधनों का उपयोग करते हैं। ताजे पानी की कमी पारिस्थितिक तंत्र के कामकाज में गिरावट ला सकती है और प्रजातियों के अस्तित्व को प्रभावित कर सकती है। पानी की कमी का एक महत्वपूर्ण कारण जलवायु परिवर्तन और उससे जुड़े सूखे हैं।

**जल प्रदूषण:** औद्योगिक उद्यम, औद्योगिक सुविधाएँ, खेत और शहर हानिकारक पदार्थों से होने वाले जल प्रदूषण के स्रोत हैं। औद्योगिक अपशिष्ट, कीटनाशक, उर्वरक और अनुपचारित सीवेज जलीय पारिस्थितिक तंत्र, मनुष्यों और अन्य जीवित जीवों के लिए खतरनाक हैं। इस समस्या के समाधान के लिए, विशिष्ट विनियामक और कानूनी रणनीतियों को विकसित करने और लागू करने की आवश्यकता है, साथ ही जल प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए नई तकनीकों को विकसित करने और लागू करने की भी आवश्यकता है।

**अप्रभावी सिंचाई विधियां:** पारंपरिक सिंचाई विधियाँ जैसे बाढ़ सिंचाई वाष्पीकरण या अन्य प्रक्रियाओं के माध्यम से भारी जल बर्बादी से जुड़ी हैं। कृषि में जल संसाधनों के उपयोग को नियंत्रित करने के लिए सिंचाई और जल प्रबंधन की अधिक कुशल विधियों को लागू करना आवश्यक है।

**जल संसाधन प्रबंधन और समानता:** असमान जल संसाधन सामाजिक समूहों के बीच असमानता को जन्म देते हैं, साथ ही इन संसाधनों के वितरण से जुड़े संघर्षों का कारण भी बनते हैं। इन समस्याओं को रोकने के लिए, पारदर्शी और निष्पक्ष जल संसाधन प्रबंधन प्रणालियाँ बनाना और इस मुद्दे को सुलझाने में सभी इच्छुक हितधारकों को शामिल करना आवश्यक है।

**टिकाऊ कृषि में टिकाऊ जल प्रबंधन के लिए योजना**

**सटीक कृषि:** आधुनिक वैश्विक तकनीकों का उपयोग करके, कृषि को टिकाऊ विकास का अवसर दिया जा सकता है। सटीक खेती का उपयोग करके कृषि क्षेत्र में पानी के उपयोग की निगरानी और प्रबंधन करना संभव है। उदाहरण के लिए, सटीक सिंचाई का उपयोग करके, मिट्टी के गुणों, जल व्यवस्था और मौसम की स्थिति की निगरानी करना और उसके अनुसार पौधों की देखभाल करना संभव है।

**जल-बचत तकनीकों का उपयोग:** शहरों और कृषि क्षेत्र दोनों में जल-बचत तकनीकों का उपयोग किया जाना चाहिए। जल-बचत तकनीकों में ड्रिप सिंचाई प्रणाली, जल बचाने वाले उपकरण और बहुत कुछ शामिल हैं। कृषि क्षेत्र में जल संसाधनों को बनाए रखने और संरक्षित करने के लिए टिकाऊ मृदा प्रबंधन तकनीकों का उपयोग करना आवश्यक है।

**फसल विविधीकरण और चक्रीकरण:** फसल चक्रण भी पानी का टिकाऊ प्रबंधन करने का एक अच्छा तरीका है। विभिन्न फसलों की पानी की आवश्यकताएं भिन्न होती हैं, इसलिए कम पानी वाली फसलों का उपयोग करना फायदेमंद होता है। इसके अलावा, कुछ फसलें, उदाहरण के लिए, फलियां, मिट्टी को मूल्यवान पोषक तत्वों से समृद्ध करने में मदद करती हैं, वे बीमारी की संभावना और उर्वरकों की आवश्यकता को भी कम करती हैं। इस प्रकार, फसल चक्रण जल संसाधनों को नियंत्रित और संरक्षित करने में मदद करेगा।

**जल का पुन: उपयोग/पुनर्चक्रण:** नवीन जल पुनर्चक्रण तकनीकों का उपयोग करके, कृषि में पुनः उपयोग के लिए अपशिष्ट जल को शुद्ध करना संभव है। ऐसी विधियाँ बहुत उपयोगी और आशाजनक हैं क्योंकि वे एक साथ कई समस्याओं का समाधान करती हैं- जल संसाधनों की बचत करती हैं, कृषि में पानी के उपयोग को स्थायी रूप से नियंत्रित और प्रबंधित करती हैं, और स्वच्छ पानी की कमी की समस्या को हल करती हैं। उदाहरण के लिए, खेतों में जल संसाधनों को विनियमित करने और पुनः उपयोग करने के लिए ऐसे तरीकों का उपयोग किया जाता है।

**प्रकृति-आधारित समाधान-** जल संसाधनों के संरक्षण और सुरक्षा का एक अन्य तरीका इस प्रक्रिया में मदद के लिए प्रकृति का उपयोग करना है। स्वाभाविक रूप से, कई पारिस्थितिक तंत्रों में स्व-नियमन क्षमताएं होती हैं; वे प्राकृतिक रूप से पानी को नियंत्रित और साफ करते हैं। उदाहरण के लिए, प्राकृतिक आर्द्रभूमि पानी के फिल्टर के रूप में कार्य करती हैं। जंगल की बहाली और प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र की रक्षा करने से पानी के उपयोग और जल संसाधन प्रबंधन को विनियमित करने में काफी मदद मिल सकती है।

**नवाचार और आगे का रास्ता**

**स्मार्ट सिंचाई तकनीकें:** स्मार्ट सिंचाई प्रणालियों को विशिष्ट संकेतकों के आधार पर फसलों तक पहुंचाए जाने वाले पानी की मात्रा को नियंत्रित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। इस प्रकार, स्मार्ट सिंचाई प्रणालियाँ सिंचाई और पानी के उपयोग को अनुकूलित करने में मदद करती हैं। इसके अलावा, वे पानी और जल संसाधनों को बचाने का एक शानदार तरीका हैं। वे आपको समय, प्रयास और पैसा बचाने की भी अनुमति देते हैं क्योंकि सिस्टम स्वचालित होते हैं और उन्हें निरंतर निगरानी तथा समायोजन की आवश्यकता नहीं होती है।

**सूखा प्रतिरोधी फसल किस्में:** वैज्ञानिक ऐसी नई प्रतिरोधी फसल किस्में विकसित करने पर काम कर रहे हैं जो सूखे की अवधि का सामना कर सकती हैं और उनके उचित विकास एवं वृद्धि के लिए आवश्यक पानी की मात्रा को कम कर सकती हैं। ऐसी तकनीकें पानी की कमी की समस्या को सुलझाने और टिकाऊ कृषि उत्पादन प्रदान करने में मदद कर सकती हैं।

**एक्वापोनिक्स:** क्लोज्ड-लूप जलीय कृषि प्रणालियाँ जो बिना मिट्टी वाले माध्यम में पौधों को उगाने के लिए मछली पालन के पानी का उपयोग करती हैं, पानी के उपयोग को अनुकूलित करने का एक शानदार तरीका हैं। ऐसी प्रणालियाँ बहुत अच्छी हैं क्योंकि वे आपको पौधों और मछलियों को पालते समय पानी को रीसायकल करने की अनुमति देती हैं, और इसलिए वे एक साथ दो समस्याओं को हल करने में मदद करती हैं।

**निष्कर्ष:** इस लेख में टिकाऊ कृषि में जल संसाधन प्रबंधन के महत्व पर चर्चा की गई। यह लेख उन तरीकों और तकनीकों को प्रस्तुत करता है जो जल संसाधन प्रबंधन की वर्तमान समस्याओं को हल करने में मदद कर सकते हैं। संक्षेप में, टिकाऊ कृषि उत्पादन सुनिश्चित करने और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए टिकाऊ कृषि में जल संसाधन प्रबंधन आवश्यक और अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह लेख यह भी दर्शाता है कि जल संसाधन प्रबंधन के लिए अभिनव और प्रभावी तरीकों को विकसित करना और लागू करना, साथ ही मौजूदा तकनीकों और रणनीतियों का उपयोग करना महत्वपूर्ण है।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253

खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं

पता: अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

01/205-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका


# श्रीअन्न (मिलेट्स): पोषण, स्वास्थ्य और सत्त जीवनशैली का अनमोल खजाना

रिंकू कुमार, खुर्शीद आलम सहायक प्राध्यापक, कृषि विज्ञान संकाय, के. एम. विश्वविद्यालय, मथुरा, उत्तर प्रदेश-281123

राजपाल सिंह सहायक प्राध्यापक, कृषि विज्ञान विभाग, अमर सिंह कॉलेज, लखावटी, बुलंदशहर, उत्तर प्रदेश-203407

श्रीअन्न, घास परिवार की सबसे प्राचीन घरेलू फसलों में से एक है, पोषण की दृष्टि से अत्यंत लाभकारी माना जाता है। इसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, डाइटरी फाइबर, कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, आयरन तथा विभिन्न प्रकार के विटामिन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, यह छोटे गोल आकार का अनाज ग्लूटेन-फ्री होता है तथा इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स भी कम होता है, जिससे यह स्वास्थ्य के लिए अत्यंत उपयोगी माना जाता है। श्रीअन्न की एक विशेषता यह भी है कि यह बीमारियों और कीटों के प्रति अधिक प्रतिरोधी होता है। इसमें पाए जाने वाले फीनॉलिक यौगिक रोगजनकों एवं कीटों को रोकने में सहायक होते हैं। इसके दानों की कठोरता तथा उनमें उपस्थित स्टोरेज प्रोटीन (जैसे प्रोलैम्मिस) कीटों एवं फफूंद के प्रभाव को कम करते हैं। यही कारण है कि यह फसल कम उपजाऊ एवं शुष्क मिट्टी में भी आसानी से उगाई जा सकती है तथा लगभग 70 से 80 दिनों में तैयार हो जाती है।

जलवायु परिवर्तन के दौर में श्रीअन्न एक अत्यंत महत्वपूर्ण फसल के रूप में उभरकर सामने आया है, क्योंकि यह कठिन परिस्थितियों में भी अच्छी उपज देने में सक्षम है। पोषण की दृष्टि से यह गेहूं और चावल जैसे अन्य अनाजों की तुलना में अधिक लाभकारी माना जाता है। एशिया और अफ्रीका के शुष्क एवं अर्ध-शुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में यह प्रमुख खाद्यान्न फसल के रूप में उपयोग किया जाता है। यह न केवल मानव आहार का महत्वपूर्ण हिस्सा है, बल्कि पशुओं के चारे के रूप में भी उपयोगी है। इतिहास के अनुसार, श्रीअन्न का उपयोग लगभग 7000 वर्षों से मानव आहार में किया जा रहा है। इसकी विभिन्न प्रजातियों का उद्भव उत्तरी चीन, अफ्रीका, मध्य-पूर्व और यूरोप जैसे क्षेत्रों में हुआ तथा बाद में यह विश्वभर में फैल गया।

**श्रीअन्न (मिलेट्स) के प्रकार:** श्रीअन्न को उनके दानों के आकार के आधार पर मुख्य और गौण मिलेट्स में वर्गीकृत किया गया है। इसके अतिरिक्त, एक अन्य वर्ग भी है, जिसे 'स्यूडो-मिलेट्स के नाम से जाना जाता है, जिसमें ऐमरैंथ और बकव्हीट शामिल हैं। चूंकि यह समूह 'पोएसी' कुल से संबंधित नहीं है, जिसमें 'असली' अनाज शामिल होते हैं, इसलिए इन्हें स्यूडो-मिलेट्स कहा जाता है। तथापि, इनमें भी असली मिलेट्स की भांति उच्च पोषण गुण पाए जाते हैं, जैसे उच्च प्रोटीन, डाइटरी फाइबर, खनिज तथा विटामिन की प्रचुर मात्रा। चित्र 1 में श्रीअन्न (मिलेट्स) के विभिन्न प्रकार को दर्शाया गया है।

**श्रीअन्न (मिलेट्स) का पोषणीय महत्व:** श्रीअन्न, जैसे कि ज्वार, बाजरा, रागी, कोदो, प्रोसो मिलेट्स, फॉक्सटेल मिलेट, लिटिल मिलेट और बार्न्यार्ड मिलेट, विश्वभर में लाखों लोगों के लिए महत्वपूर्ण मुख्य खाद्य पदार्थ हैं। सामान्यतः ये वर्षा आधारित फसलें हैं, जो कम वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाई जाती हैं, इसलिए सतत् कृषि और खाद्य सुरक्षा के लिए इनका महत्व और भी बढ़ जाता है। लगभग सभी प्रकार के मिलेट्स विकासशील देशों में मानव उपभोग के लिए प्रयोग किए जाते हैं, जबकि विकसित देशों में इनका उपयोग मुख्य रूप से पशु चारे तक ही सीमित है। पोषण की दृष्टि से श्रीअन्न प्रमुख अनाजों के तुल्य है तथा यह प्रोटीन, सूक्ष्म पोषक तत्वों और फाइटोकैमिकल्स का उत्तम स्रोत है

तालिका 1 : 100 ग्राम सूखे अनाजों में पोषण तत्वों की मात्रा

| विवरण | प्रोटीन (ग्रा.) | कार्बोहाइड्रेट (ग्रा.) | वसा (ग्रा.) | खनिज (ग्रा.) | फाइबर (ग्रा.) | कैल्शियम (मि.ग्रा.) | फॉस्फोरस (मि.ग्रा.) | आयरन (मि.ग्रा.) | ऊर्जा (किलो कैलोरी) | थायमिन (मि.ग्रा.) | नायसिन (मि.ग्रा.) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| काकुन | 12.3 | 60.2 | 4.3 | 4.0 | 6.7 | 31 | 290 | 2.8 | 351 | 0.59 | 3.2 |
| कुटकी | 7.7 | 67.0 | 4.7 | 1.7 | 7.6 | 17 | 220 | 9.3 | 329 | 0.30 | 3.2 |
| कोदो | 8.3 | 65.9 | 1.4 | 2.6 | 5.2 | 35 | 188 | 1.7 | 353 | 0.15 | 2.0 |
| चीना/प्रोसो | 12.5 | 70.4 | 1.1 | 1.9 | 5.2 | 8 | 206 | 2.9 | 354 | 0.41 | 4.5 |
| सावां | 6.2 | 65.5 | 4.8 | 3.7 | 13.6 | 22 | 280 | 18.6 | 300 | 0.33 | 4.2 |
| ज्वार | 10.4 | 70.7 | 3.1 | 1.2 | 2.0 | 25 | 222 | 5.4 | 329 | 0.38 | 4.3 |
| बाजरा | 11.8 | 67.0 | 4.8 | 2.2 | 2.3 | 42 | 240 | 11.0 | 363 | 0.38 | 2.8 |
| रागी/मंडुआ | 7.3 | 72.0 | 1.3 | 2.7 | 3.6 | 344 | 283 | 3.9 | 336 | 0.42 | 1.1 |
| चावल | 6.8 | 78.2 | 0.5 | 0.6 | 1.0 | 33 | 160 | 1.8 | 362 | 0.41 | 4.3 |
| गेहूं | 11.8 | 71.2 | 1.5 | 1.5 | 2.0 | 30 | 306 | 3.5 | 348 | 0.41 | 5.1 |

*स्रोत : एन.आई.एन., हैदराबाद*

## मिलेट्स के पोषणीय गुण

**कार्बोहाइड्रेट की प्रचुर मात्रा:** मिलेट्स जटिल कार्बोहाइड्रेट के समद्ध स्रोत हैं और इनके शुष्क भार का लगभग 65-75 प्रतिशत भाग कार्बोहाइड्रेट से बना होता है। ये कार्बोहाइड्रेट मानव शरीर के लिए मुख्य ऊर्जा स्रोत के रूप में कार्य करते हैं तथा उपचायी क्रियाओं को सुचारू रूप से संचालित करने में सहायक होते हैं। मिलेट्स के कार्बोहाइड्रेट को गैर-संरचनात्मक (शर्करा, स्टार्च और फ्रक्टोसन) तथा संरचनात्मक (सेल्यूलोज, हेमिसेल्यूलोज और पेक्टिन पदार्थ) भागों में वर्गीकत किया जाता है। इनके स्टार्च की जटिल संरचना के कारण इनका ग्लाइसेमिक इंडेक्स परिष्कृत अनाजों की तुलना में कम होता है।

**डाइटरी फाइबर का अच्छा स्रोत:** मिलेट्स में 8-15 प्रतिशत तक डाइटरी फाइबर पाया जाता है, जो पाचन तंत्र को सुदृढ़ बनाने, आंतों के स्वास्थ्य को बेहतर करने और कब्ज जैसी समस्याओं को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

**प्रोटीन का उत्तम स्रोत:** मिलेट्स में 7-12 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है, जिसमें अमीनो अम्लों का संतुलित संयोजन होता है। इसमें मेथयोनीन और सिस्टीन जैसे गन्धकयुक्त अमीनो अम्ल भी पाए जाते हैं, जो अन्य अनाजों में सामान्यतः कम पाए जाते हैं। इस कारण मिलेट्स शाकाहारी और पौधा-आधारित आहार के लिए बहुत उपयोगी हैं।

**सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर:** मिलेट्स आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, पोटैशियम और जस्ता जैसे खनिज तत्वों के उत्तम स्रोत हैं। इसके साथ ही इसमें विटामिन बी-कॉम्पलेक्स, जैसे नायसिन, थायमिन और राइबोफ्लेविन भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए रागी में कैल्शियम की मात्रा बहुत अधिक (344 मि.ग्रा./100 ग्रा.) पाई जाती है, जबकि बाजरा और सावां आयरन और जस्ता के अच्छे स्रोत हैं।

**कम वसा युक्त आहार:** मिलेट्स प्राकतिक रूप से कम वसा वाला आहार है। इसकी एक कप मात्रा में केवल 1.7 ग्राम वसा पाई जाती है। इसमें अधिकांश वसा पॉलीअनसैचुरेटेड (0.9 ग्राम) होती है, जबकि कुछ मात्रा मोनोअनसैचुरेटेड (0.3 ग्राम) और संतप्त वसा (0.3 ग्राम) के रूप में पाई जाती है। यह हृदय के लिए स्वास्थ्यवर्धक विकल्प है।

**प्राकतिक रूप से ग्लूटेन-फ्री:** सभी प्रमुख मिलेट्स ग्लूटेन-फ्री होते हैं, इसलिए ये सीलिएक रोग या ग्लूटेन असहिष्णुता से पीड़ित व्यक्तियों के लिए उपयुक्त विकल्प हैं। यह गुण पोषण विविधता और आंतों की सहनसशीलता को बढ़ाता है।

**एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों से युक्त:** मिलेट्स में विभिन्न प्रकार के एंटीऑक्सीडेंट यौगिक, जैसे फीनॉलिक अम्ल, फ्लेवोनोइड और टैनिन पाए जाते हैं, जो कोशिकाओं को ऑक्सीडेटिव क्षति से बचाने, बढ़ती उम्र के प्रभाव को कम करने और कैंसर तथा मधुमेह जैसे दीर्घकालीन रोगों के जोखिम को घटाने में सहायक होते हैं।

**कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स ( जी.आई.):** मिलेट्स का ग्लाइसेमिक इंडेक्स 33-65 के बीच होता है , जिसका अर्थ है कि ये रक्त में ग्लूकोज को धीरे-धीरे छोड़ते हैं। यह गुण रक्त शर्करा स्तर को नियंत्रित रखने में सहायक होता है और मधुमेह तथा प्री-डायबिटिक व्यक्तियों के लिए यह उत्तम आहार विकल्प है।

**आसानी से पचने योग्य:** मिलेट्स की विशिष्ट स्टार्च संरचना और धीरे पचने वाले तथा रेजिस्टेंट स्टार्च के कारण ये आसानी से पच जाते हैं। ये गुण लंबे समय तक तृप्ति का अनुभव कराने और बेहतर उपचायी नियंत्रण बनाए रखने में सहायक होते हैं।

**तालिका 2- मिलेट्स का ग्लाइसेमिक इंडेक्स**

| मिलेट्स | लगभग ग्लाइसेमिक इंडेक्स ( जी.आई.) | | |
|---|---|---|---|
| ककुन | 50-60 | कुटकी | 52-57 |
| केदो | 52-65 | चीना/प्रोसो | 52-70 |
| सवां | 41-50 | रागी/मंडुआ | 54-68 |
| बजरा | 54-60 | ज्वार | 62-70 |
| ब्राउनटॉप | 55-58 | | |

स्त्रोत- Millet Advisor – Glycemic Index of Millets

* कम जी.आई. वाले खाद्य पदार्थो का जी.आई. मान = 55 होता है। * मध्यम जी.आई. वाले खाद्य पदार्थो का जी.आई. मान 56-69 होता है। * उच्च जी.आई. वाले खाद्य पदार्थो का जी.आई. मान = 70 होता है। * जी.आई. मान प्रसंस्करण, पकाने की विधि, पॉलिशिंग तथा खाद्य संयोजनों के आधार पर बदल सकते हैं।

**निष्कर्ष**-श्रीअन्न (मिलेट्स) पोषण से भरपूर एवं स्वास्थ्यवर्धक अनाज हैं, जो पाचन, मधुमेह नियंत्रण और शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक हैं। इनके नियमित उपयोग से स्वस्थ जीवनशैली और बेहतर स्वास्थ्य को बढ़ावा मिलता है। अपने बहुआयामी पोषण गुणों और उपयोगिता के कारण श्रीअन्न को हमारे दैनिक आहार में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए।

# बुंदेलखंड में वर्षा आधारित कृषि : मृदा जल एवं उर्वरता प्रबंधन

**मयंक कुमार** पीएच.डी. शोध छात्र
**डॉ. अनिल कुमार सिंह** सह-प्राध्यापक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, चन्द्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

बुंदेलखंड क्षेत्र की कृषि मुख्यतः वर्षा पर निर्भर है। अनियमित मानसून, वर्षा की असमानता, लंबे शुष्क काल, मृदा क्षरण तथा जल उपलब्धता में कमी के कारण यहाँ कृषि उत्पादन में वर्ष-दर-वर्ष काफी उतार-चढ़ाव देखा जाता है। वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन के कारण अत्यधिक वर्षा, कम वर्षा और तापमान में वृद्धि जैसी परिस्थितियाँ वर्षा आधारित कृषि के लिए अतिरिक्त चुनौती उत्पन्न कर रही हैं। ऐसी स्थिति में मृदा जल संरक्षण और मृदा उर्वरता प्रबंधन को एक साथ अपनाना आवश्यक है। वर्षा जल को खेत में रोकना, मृदा में नमी बनाए रखना, जैविक पदार्थों का उपयोग, संतुलित उर्वरक प्रयोग, फसल अवशेष प्रबंधन और फसल विविधीकरण जैसी तकनीकें बुंदेलखंड की कृषि को अधिक टिकाऊ बना सकती हैं।

## परिचय

बुंदेलखंड उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में विस्तृत कृषि क्षेत्र है, जहाँ वर्षा आधारित खेती का विशेष महत्व है। क्षेत्र में वर्षा की मात्रा और वितरण में असमानता के कारण खेतों में उपलब्ध जल का प्रभावी उपयोग कृषि उत्पादन की प्रमुख आवश्यकता है। वर्षा के दौरान कम समय में अधिक पानी प्राप्त होने पर सतही बहाव एवं मृदा कटाव बढ़ सकता है, जबकि वर्षा के बाद लंबे समय तक नमी की कमी फसल वृद्धि को प्रभावित कर सकती है। वर्तमान कृषि परिदृश्य में केवल अधिक उर्वरक या अधिक सिंचाई पर निर्भर रहने के बजाय "कम पानी में अधिक एवं स्थिर उत्पादन" की दिशा में प्रयास करना आवश्यक है। इसके लिए मृदा में उपलब्ध नमी का संरक्षण तथा पोषक तत्वों की संतुलित उपलब्धता दोनों पर समान ध्यान देना होगा।

## मृदा जल संरक्षण का महत्व

वर्षा आधारित कृषि में फसल उत्पादन का सबसे महत्वपूर्ण निर्धारक उपलब्ध मृदा नमी है। वर्षा जल को खेत में रोककर उसकी मृदा में अंतःप्रविष्टि बढ़ाने से फसल को लंबे समय तक नमी उपलब्ध कराई जा सकती है। बुंदेलखंड में कंटूर बंडिंग, खेत तालाब, मेड़बंदी, चेकडैम, रेनवाटर हार्वेस्टिंग, मल्चिंग और संरक्षण कृषि जैसी तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। फसल अवशेषों को खेत में बनाए रखने से मृदा की सतह से वाष्पीकरण कम करने और मृदा में नमी बनाए रखने में सहायता मिलती है। जहाँ सिंचाई उपलब्ध हो, वहाँ ड्रिप एवं स्प्रिंकलर जैसी सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों का उचित उपयोग जल उपयोग दक्षता बढ़ा सकता है। इस प्रकार वर्षा जल संरक्षण को खेत स्तर के साथ-साथ सामुदायिक जल प्रबंधन से जोड़ना आवश्यक है।

## मृदा उर्वरता प्रबंधन

जल संरक्षण के साथ मृदा की उर्वरता बनाए रखना भी आवश्यक है। बुंदेलखंड के वर्षा आधारित क्षेत्रों में पोषक तत्वों का प्रबंधन मृदा परीक्षण आधारित होना चाहिए। नाइट्रोजन,

फास्फोरस और पोटैशियम के साथ सल्फर तथा आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता पर भी ध्यान देना चाहिए। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन (INM) इस दिशा में प्रभावी विकल्प है। इसमें रासायनिक उर्वरकों के साथ गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी-कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष और जैव उर्वरकों का संतुलित उपयोग किया जाता है। जैविक पदार्थों के प्रयोग से मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ाने, मृदा संरचना सुधारने तथा जल धारण क्षमता को बेहतर बनाने में सहायता मिल सकती है। दलहनी फसलों को फसल चक्र में शामिल करना भी उपयोगी है। इससे फसल विविधीकरण के साथ मृदा में जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण को बढ़ावा मिल सकता है।

## वर्तमान समय में आवश्यक समन्वित रणनीति

वर्तमान जलवायु परिस्थितियों में बुंदेलखंड की वर्षा आधारित कृषि के लिए केवल एक तकनीक पर्याप्त नहीं होगी। जल संरक्षण + मृदा स्वास्थ्य + संतुलित पोषण + फसल विविधीकरण पर आधारित समन्वित दृष्टिकोण अधिक प्रभावी हो सकता है। किसानों को स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार सूखा-सहिष्णु एवं कम अवधि वाली फसलों, मोटे अनाज और दलहनी फसलों को शामिल करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। इसके साथ मृदा परीक्षण, मौसम आधारित कृषि सलाह, फसल अवशेष प्रबंधन तथा जलवायु-स्मार्ट कृषि तकनीकों का विस्तार आवश्यक है। डिजिटल कृषि, रिमोट सेंसिंग और मोबाइल आधारित मौसम एवं कृषि सलाह जैसी आधुनिक तकनीकें भी किसानों को सही समय पर निर्णय लेने में सहायता कर सकती हैं।

## प्रमुख चुनौतियाँ

बुंदेलखंड में इस प्रकार की कृषि प्रणाली अपनाने में कई चुनौतियाँ हैं। इनमें छोटे एवं सीमांत किसानों की अधिक संख्या, सिंचाई संसाधनों की सीमित उपलब्धता, गुणवत्तापूर्ण जैविक इनपुट की कमी, तकनीकी जानकारी का अभाव तथा जलवायु की अनिश्चितता प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त, जल संरक्षण संरचनाओं का निर्माण और उनका सामुदायिक स्तर पर उचित रखरखाव भी आवश्यक है। इसलिए कृषि विभाग, कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केंद्र और स्थानीय किसान समूहों के बीच बेहतर समन्वय आवश्यक है।

## निष्कर्ष

बुंदेलखंड में वर्षा आधारित कृषि को अधिक उत्पादक और टिकाऊ बनाने के लिए मृदा जल संरक्षण एवं मृदा उर्वरता प्रबंधन को एकीकृत रूप से अपनाना वर्तमान समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। खेत में वर्षा जल को रोकना, मृदा में नमी बनाए रखना, जैविक पदार्थों का उपयोग, मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक प्रबंधन, फसल विविधीकरण और संरक्षण कृषि जैसी तकनीकें कृषि की स्थिरता बढ़ा सकती हैं। भविष्य में यदि जल संरक्षण को एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन और जलवायु-स्मार्ट कृषि के साथ जोड़ा जाए, तो बुंदेलखंड में कम वर्षा और अनिश्चित जलवायु के बावजूद अधिक स्थिर कृषि उत्पादन प्राप्त करने की संभावनाएँ बढ़ सकती हैं। इस दिशा में स्थानीय संसाधनों का बेहतर उपयोग, किसान प्रशिक्षण और वैज्ञानिक तकनीकों का खेत स्तर तक विस्तार सबसे महत्वपूर्ण कदम होंगे।

02/2025-26

✍ **आशीष कुमार** (सहायक प्रोफ़ेसर),विधि विभाग,
APEX UNIVERSITY,(जयपुर राजस्थान)302020

# एआई इन कृषि: डेटा गोपनीयता, स्वामित्व और किसानों के अधिकार

## परिचय

आज के दौर में, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) ने कृषि क्षेत्र में क्रांति ला दी है। यह तकनीक किसानों की जीवनशैली, फसल उत्पादन और संसाधनों के प्रबंधन को बदल रही है। हालांकि, इस प्रगति के साथ ही कई महत्वपूर्ण सवाल भी उठते हैं। इनमें से सबसे प्रमुख हैं डेटा गोपनीयता, स्वामित्व और किसानों के अधिकार। इन मुद्दों पर चर्चा करना आवश्यक है, ताकि हम सुनिश्चित कर सकें कि तकनीक का लाभ सभी को समान रूप से मिले। इस लेख में, हम इन विषयों का विस्तार से विश्लेषण करेंगे। साथ ही, यह भी देखेंगे कि कैसे इन चुनौतियों का समाधान किया जा सकता है। अंततः, हम यह समझेंगे कि किसानों का अधिकार सुरक्षित रहना क्यों जरूरी है।

## एआई का कृषि में योगदान

सबसे पहले, यह समझना जरूरी है कि एआई ने कृषि क्षेत्र में क्या बदलाव किए हैं। मशीन लर्निंग और डेटा एनालिटिक्स के माध्यम से, किसान अब बेहतर निर्णय ले सकते हैं। उदाहरण के लिए, फसल की देखभाल, सिंचाई, और उर्वरक का सही उपयोग अब आसान हो गया है। इसके अलावा, रोग और कीट का पता लगाने में भी एआई ने मदद की है। इससे न केवल उत्पादन बढ़ा है, बल्कि लागत भी कम हुई है। इन सबके बावजूद, इन तकनीकों का उपयोग करने के लिए डेटा की आवश्यकता होती है। यह डेटा किसानों से, उनके उपकरणों से, और कृषि प्रणालियों से प्राप्त होता है।

## डेटा गोपनीयता- एक महत्वपूर्ण मुद्दा

अब सवाल उठता है कि इस डेटा का संरक्षण कैसे किया जाए? डेटा गोपनीयता का अर्थ है कि किसानों का व्यक्तिगत और व्यावसायिक डेटा सुरक्षित रहे। यदि यह डेटा गलत हाथों में चला जाए, तो इससे किसानों को नुकसान हो सकता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई कंपनी किसानों की फसल की जानकारी का दुरुपयोग करे, तो यह उनके हितों के खिलाफ हो सकता है। इसलिए, डेटा सुरक्षा के लिए मजबूत नियम और कानून बनाना आवश्यक है। इसके साथ ही, किसानों को भी जागरूक होना चाहिए कि वे अपने डेटा को कैसे सुरक्षित रखें।

## डेटा स्वामित्व का विवाद

दूसरा बड़ा मुद्दा है डेटा का स्वामित्व। सवाल यह है कि क्या किसान अपने डेटा के मालिक हैं या फिर तकनीक कंपनियों का नियंत्रण है? कई बार, कंपनियां किसानों का डेटा अपने लाभ के लिए उपयोग करती हैं। इससे किसानों का अधिकार खतरे में पड़ जाता है। यदि किसानों को अपने डेटा पर पूर्ण अधिकार मिलें, तो वे अपनी जानकारी का सही उपयोग कर सकते हैं। इसके लिए, कानूनी प्रावधानों की आवश्यकता है, जो किसानों को उनके डेटा पर स्वामित्व का अधिकार दें। साथ ही, उन्हें यह भी अधिकार होना चाहिए कि वे अपने डेटा को कहीं भी साझा कर सकते हैं या नहीं।

## किसानों के अधिकार और नैतिक जिम्मेदारी

किसानों के अधिकारों की रक्षा करना अत्यंत आवश्यक है। उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनकी जानकारी का दुरुपयोग न हो। इसके अलावा, उन्हें यह भी अधिकार है कि वे नई तकनीकों का उपयोग करने या न करने का निर्णय स्वयं लें। सरकार और संबंधित संस्थान को चाहिए कि वे किसानों को शिक्षित करें और उनके अधिकारों का सम्मान करें। साथ ही, तकनीक कंपनियों को भी नैतिक जिम्मेदारी निभानी चाहिए। उन्हें चाहिए कि वे किसानों के हितों का ध्यान रखें और उनके डेटा का सही उपयोग करें।

## कानूनी और नीतिगत पहल

कानूनी ढांचे का निर्माण इन मुद्दों का समाधान करने में मदद कर सकता है। उदाहरण के लिए, डेटा संरक्षण अधिनियम जैसी नीतियां बनाई जानी चाहिए। इन नीतियों में स्पष्ट रूप से लिखा होना चाहिए कि डेटा का उपयोग कैसे किया जाएगा, किसके द्वारा, और कब तक। इसके अलावा, किसानों को उनके अधिकारों के बारे में जागरूक करना भी जरूरी है। सरकार को चाहिए कि वह किसानों के हित में नियम बनाए और उनका पालन सुनिश्चित करे। साथ ही, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी इन मुद्दों पर चर्चा होनी चाहिए, ताकि मानक तय किए जा सकें।

## तकनीकी समाधान और भविष्य की दिशा

तकनीकी दृष्टिकोण से, डेटा सुरक्षा के लिए कई समाधान मौजूद हैं। उदाहरण के लिए, एन्क्रिप्शन, ब्लॉकचेन और सुरक्षित डेटा प्रबंधन प्रणालियां। इन तकनीकों का उपयोग कर, हम किसानों का डेटा सुरक्षित कर सकते हैं। इसके अलावा, किसानों को भी चाहिए कि वे अपने डेटा की सुरक्षा के लिए जागरूक हों। भविष्य में, हमें ऐसी नीतियों और तकनीकों का विकास करना चाहिए, जो किसानों के अधिकारों की रक्षा करें। साथ ही, हमें यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि तकनीक का लाभ सभी वर्गों तक पहुंचे। इससे न केवल कृषि क्षेत्र में सुधार होगा, बल्कि किसानों का जीवन भी बेहतर होगा।

## निष्कर्ष

अंत में, यह कहा जा सकता है कि एआइ ने कृषि क्षेत्र में नई संभावनाएं खोली हैं। हालांकि, इन प्रगति के साथ ही डेटा गोपनीयता, स्वामित्व और किसानों के अधिकार जैसे मुद्दे भी सामने आए हैं। इन चुनौतियों का समाधान तभी संभव है, जब हम कानूनी, तकनीकी और नैतिक पहलुओं पर ध्यान दें। किसानों का अधिकार सुरक्षित रहना चाहिए, ताकि वे नई तकनीकों का सही लाभ उठा सकें। इसके लिए, सरकार, कंपनियां और किसान सभी को मिलकर काम करना होगा। तभी हम एक स्थायी और समावेशी कृषि प्रणाली का निर्माण कर सकते हैं। भविष्य में, यदि हम इन मुद्दों का समाधान कर लेते हैं, तो निश्चित ही हम एक बेहतर और अधिक सुरक्षित कृषि क्षेत्र की ओर बढ़ेंगे।

## समापन

अंत में, यह जरूरी है कि हम एआई के साथ-साथ किसानों के अधिकारों का भी सम्मान करें। तकनीक का सही उपयोग तभी संभव है, जब हम डेटा की सुरक्षा, स्वामित्व और नैतिक जिम्मेदारी को प्राथमिकता दें। इससे न केवल किसानों का जीवन बेहतर होगा, बल्कि पूरे देश की कृषि अर्थव्यवस्था भी मजबूत होगी। इसलिए, हमें चाहिए कि हम इन मुद्दों पर गंभीरता से विचार करें और उचित कदम उठाएं। तभी हम एक समृद्ध और सुरक्षित कृषि भविष्य की ओर बढ़ सकते हैं।

01/2025-26

# आधुनिक विधि से धान की सीधी बुआई

**शाडिण्जय सिंह, आर.के. दोहरे, संदीप चौहान**
कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

**प्रस्तावना:** धान भारत की सबसे महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसलों में से एक है और देश की खाद्य सुरक्षा में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। भारत विश्व के प्रमुख धान उत्पादक देशों में शामिल है, जहाँ करोड़ों किसान अपनी आजीविका के लिए इस फसल पर निर्भर हैं। परंपरागत रूप से धान की खेती नर्सरी तैयार करके पौधों की रोपाई द्वारा की जाती है, जिसमें अधिक श्रम, अधिक पानी तथा अधिक समय की आवश्यकता होती है। वर्तमान समय में कृषि क्षेत्र कई चुनौतियों का सामना कर रहा है, जिनमें कृषि श्रमिकों की कमी, सिंचाई के जल की उपलब्धता में गिरावट, उत्पादन लागत में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन प्रमुख हैं। इन चुनौतियों के समाधान के रूप में धान की सीधी बुआई एक आधुनिक, वैज्ञानिक एवं टिकाऊ तकनीक के रूप में तेजी से लोकप्रिय हो रही है।

धान की सीधी बुआई ऐसी विधि है जिसमें धान की नर्सरी तैयार करने तथा पौधों की रोपाई करने के बजाय उपचारित बीजों को सीधे खेत में बोया जाता है। यह कार्य आधुनिक डीएसआर मशीन, जीरो टिल सीड ड्रिल अथवा मल्टीक्रॉप प्लांटर की सहायता से किया जाता है। यह तकनीक किसानों का समय बचाने के साथ-साथ श्रम एवं सिंचाई की लागत को भी कम करती है तथा फसल उत्पादन को अधिक लाभकारी बनाती है।

**धान की सीधी बुआई क्या है?** धान की सीधी बुआई एक ऐसी आधुनिक कृषि तकनीक है जिसमें बीजों को सीधे मुख्य खेत में निश्चित दूरी और गहराई पर बोया जाता है। इस विधि में पौधशाला (नर्सरी) तैयार करने, पौध उखाड़ने तथा रोपाई करने की आवश्यकता नहीं होती। खेत में पर्याप्त नमी होने पर मशीन द्वारा बीजों की समान गहराई पर बुआई की जाती है, जिससे अंकुरण अच्छा होता है तथा पौधों की वृद्धि समान रूप से होती है। यह तकनीक विशेष रूप से उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त मानी जाती है जहाँ श्रमिकों की कमी है, सिंचाई का पानी सीमित है तथा किसान कम लागत में अधिक उत्पादन प्राप्त करना चाहते हैं।

**आधुनिक विधि से धान की सीधी बुआई की प्रक्रिया**-धान की सीधी बुआई अपनाने के लिए वैज्ञानिक ढंग से निम्नलिखित चरणों का पालन करना चाहिए.

1. **खेत का चयन एवं समतलीकरण**- सफल डीएसआर तकनीक का पहला आधार खेत का समतलीकरण है। खेत पूरी तरह समतल होना चाहिए ताकि सिंचाई का पानी समान रूप से फैले और कहीं भी जलभराव या सूखे की स्थिति न बने। लेजर लैंड लेवलर द्वारा खेत समतल करने से इस तकनीक की सफलता और अधिक बढ़ जाती है।

2. **बीज का चयन एवं उपचार**- उच्च गुणवत्ता वाले, प्रमाणित तथा अनुशंसित किस्मों के बीजों का चयन करना चाहिए। बुआई से पहले बीजों का फफूंदनाशी एवं जैव उर्वरकों से उपचार करने पर बीजजनित रोगों का प्रकोप कम होता है तथा अंकुरण बेहतर होता है।

3. **उचित समय पर बुआई**-धान की सीधी बुआई का समय क्षेत्र एवं जलवायु के अनुसार निर्धारित किया जाता है। उत्तर भारत में सामान्यतः जून के प्रथम से अंतिम सप्ताह तक बुआई उपयुक्त मानी जाती है। समय पर बुआई करने से फसल की वृद्धि अच्छी होती है तथा कीट एवं रोगों का प्रभाव भी कम रहता है।

4. **आधुनिक मशीनों का उपयोग**-डीएसआर मशीन या जीरो टिल सीड ड्रिल की सहायता से बीजों को लगभग 2.3 सेंटीमीटर की गहराई पर बोया जाता है। मशीन द्वारा बुआई करने से बीजों का वितरण समान होता है तथा पौधों की संख्या संतुलित रहती है।

5. **सिंचाई प्रबंधन**-सीधी बुआई में खेत को लगातार पानी से भरे रखने की आवश्यकता नहीं होती। अंकुरण के समय पर्याप्त नमी बनाए रखना आवश्यक होता है, जबकि बाद में आवश्यकता के अनुसार हल्की सिंचाई की जाती है। इससे सिंचाई के पानी की पर्याप्त बचत होती है।

6. **पोषक तत्व प्रबंधन**-मिट्टी परीक्षण के आधार पर नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन को विभाजित मात्रा में देने से पौधों की वृद्धि बेहतर होती है तथा उर्वरकों की उपयोग दक्षता बढ़ती है।

7. **खरपतवार प्रबंधन**-सीधी बुआई में खरपतवार नियंत्रण अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों का नियंत्रण नहीं किया गया तो उत्पादन में उल्लेखनीय कमी आ सकती है। इसलिए बुआई के तुरंत बाद तथा आवश्यकता अनुसार अनुशंसित शाकनाशियों का प्रयोग करना चाहिए। साथ ही समय-समय पर खेत का निरीक्षण एवं यांत्रिक निराई भी करनी चाहिए।

8. **कीट एवं रोग प्रबंधन**-फसल की नियमित निगरानी आवश्यक है। कीट या रोग दिखाई देने पर समेकित कीट प्रबंधन के सिद्धांतों का पालन करते हुए जैविक एवं रासायनिक उपायों का संतुलित उपयोग करना चाहिए।

**धान की सीधी बुआई के प्रमुख लाभ**-आधुनिक डीएसआर तकनीक किसानों को अनेक आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय लाभ प्रदान करती है। * नर्सरी तैयार करने एवं रोपाई की आवश्यकता समाप्त हो जाती है। * श्रम लागत में उल्लेखनीय कमी आती है। * सिंचाई के पानी की लगभग 15.25% तक बचत होती है। * खेती की कुल लागत कम होती है। * बुआई का कार्य कम समय में पूरा हो जाता है। * अगली फसल समय पर बोने में सुविधा मिलती है। * मशीनों के उपयोग से कृषि का आधुनिकीकरण बढ़ता है। * समय पर वैज्ञानिक प्रबंधन अपनाने पर अच्छी एवं स्थिर उपज प्राप्त होती है। * जल संरक्षण एवं प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग को बढ़ावा मिलता है। * कार्बन उत्सर्जन में कमी लाकर पर्यावरण संरक्षण में भी सहायता मिलती है।

**सावधानियां**-धान की सीधी बुआई अपनाते समय कुछ महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

* खेत पूरी तरह समतल होना चाहिए। * केवल प्रमाणित एवं उपचारित बीजों का प्रयोग करें। * बुआई के समय पर्याप्त नमी सुनिश्चित करें। * खरपतवार नियंत्रण में किसी प्रकार की लापरवाही न करें। * संतुलित उर्वरक प्रबंधन अपनाएँ। * फसल का नियमित निरीक्षण करते रहें। * स्थानीय कृषि विश्वविद्यालय एवं कृषि विभाग की अनुशंसित तकनीकों का पालन करें।

**भविष्य की संभावनाएं**-भारत में जल संकट और कृषि श्रमिकों की लगातार कमी को देखते हुए धान की सीधी बुआई का महत्व आने वाले वर्षों में और अधिक बढ़ेगा। सरकार द्वारा कृषि यंत्रीकरण, डीएसआर मशीनों पर अनुदान तथा जल संरक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से इस तकनीक को बढ़ावा दिया जा रहा है। यदि किसानों को पर्याप्त प्रशिक्षण, तकनीकी मार्गदर्शन तथा गुणवत्तापूर्ण कृषि यंत्र उपलब्ध कराए जाएँ, तो यह तकनीक धान उत्पादन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकती है।

**निष्कर्ष**-धान की सीधी बुआई आधुनिक कृषि की एक प्रभावी, वैज्ञानिक एवं संसाधन-संरक्षण तकनीक है। यह केवल खेती की लागत कम करने का माध्यम नहीं है, बल्कि जल संरक्षण, समय प्रबंधन और टिकाऊ कृषि प्रणाली की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम भी है। उचित खेत तैयारी, गुणवत्तापूर्ण बीज, संतुलित पोषण, प्रभावी खरपतवार नियंत्रण तथा वैज्ञानिक प्रबंधन के साथ यह तकनीक किसानों को अधिक लाभ और बेहतर उत्पादन प्रदान कर सकती है। वर्तमान परिस्थितियों में, जब कृषि को कम संसाधनों में अधिक उत्पादन की आवश्यकता है, तब धान की सीधी बुआई भविष्य की स्मार्ट और टिकाऊ कृषि का सशक्त विकल्प बनकर उभर रही है।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार
खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335
01/2025-26

# संतुलित आहार: स्वास्थ्य का आधार

**कु. आरती गौतम** शोधार्थी, खाद्य विज्ञान एवं पोषण विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय (CSAUA&T) कानपुर (उ.प्र.)

**डॉ. विनिता सिंह** एसोसिएट प्रोफेसर, खाद्य विज्ञान एवं पोषण विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय CSAUA&T) कानपुर

**कु. अंजलि चौधरी** शोधार्थी, खाद्य विज्ञान एवं पोषण विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय CSAUA&T) कानपुर।

**प्रस्तावना:** "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है।" अच्छे स्वास्थ्य के लिए केवल स्वादिष्ट भोजन करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि ऐसा भोजन करना आवश्यक है जिसमें शरीर की जरूरत के सभी पोषक तत्व उचित मात्रा और सही अनुपात में मौजूद हों। स्वास्थ्य ही सबसे बड़ा धन है।" स्वस्थ और सक्रिय जीवन के लिए संतुलित आहार अत्यंत आवश्यक है। संतुलित आहार वह भोजन है जिसमें शरीर की आवश्यकता के अनुसार कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, खनिज, रेशे और पानी उचित मात्रा में शामिल हों। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वस्थ आहार कुपोषण से बचाने के साथ-साथ मधुमेह, हृदय रोग, स्ट्रोक और कैंसर जैसी गैर-संचारी बीमारियों के जोखिम को कम करने में सहायक होता है।

**मुख्य शब्द:** स्वस्थ शरीर, मस्तिष्क, पोषक तत्व, संतुलित आहार, कुपोषण, विश्व स्वास्थ्य संगठन

**संतुलित आहार का महत्व:** संतुलित आहार हमारे शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है और शरीर की वृद्धि, विकास तथा विभिन्न अंगों के सुचारु संचालन में सहायता करता है। यह रोग-प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करने, स्वस्थ वजन बनाए रखने और शरीर को सक्रिय रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

**संतुलित आहार में मुख्य रूप से निम्न पोषक तत्त्व पाए जाते हैं**

1. **कार्बोहाइड्रेट :** शरीर को ऊर्जा प्रदान करते हैं।
2. **प्रोटीन :** शरीर की वृद्धि और ऊतकों की मरम्मत में सहायक।
3. **वसा :** ऊर्जा देती है और शरीर को गर्म रखने में मदद करती है।
4. **विटामिन :** शरीर को रोगों से बचाने और विभिन्न क्रियाओं को सुचारु रखने में सहायक।
5. **खनिज लवण:** हड्डियों, दाँतों, रक्त आदि के लिए आवश्यक।
6. **जल :** शरीर का तापमान नियंत्रित करता है और पाचन में सहायता करता है।
7. **रेशा (फाइबर) :** पाचन तंत्र को स्वस्थ रखने में मदद करता है।

हमारे भोजन में हरी सब्जियाँ, मौसमी फल, साबुत अनाज, दालें, दूध या उसके विकल्प, मेवे तथा आवश्यकतानुसार अन्य प्रोटीनयुक्त खाद्य पदार्थ शामिल होने चाहिए। भोजन में पर्याप्त मात्रा में पानी और रेशेदार पदार्थ भी होने चाहिए। अलग-अलग खाद्य समूहों से विविध भोजन लेना शरीर को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराने का अच्छा तरीका है। कार्बोहाइड्रेट शरीर को ऊर्जा प्रदान करते हैं, जबकि प्रोटीन शरीर के ऊतकों के निर्माण और मरम्मत में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वसा भी शरीर के लिए आवश्यक है, लेकिन असंतृप्त वसा को प्राथमिकता देना और संतृप्त तथा ट्रांस वसा का सेवन सीमित करना चाहिए। विटामिन और खनिज शरीर की विभिन्न जैविक प्रक्रियाओं तथा सामान्य वृद्धि और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।

**संतुलित आहार का महत्व:** हमारे शरीर को ऊर्जा प्राप्त करने, वृद्धि करने और विभिन्न अंगों को सुचारु रूप से कार्य करने के लिए अनेक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। दालें, साबुत अनाज, हरी सब्जियाँ, फल, दूध एवं दुग्ध उत्पाद, मेवे और बीज जैसे विविध खाद्य पदार्थों को भोजन में शामिल करने से पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता मिलती है। स्वस्थ आहार में पर्याप्त विविधता और पोषण का होना आवश्यक है।

**तैयारी, प्रसंस्करण एवं मिलिंग के समय पोषक तत्वों को नष्ट होने से बचाने के उपाय**

1. **धोना:** अनाज/दाल को बार-बार न धोएँ, क्योंकि जल में घुलनशील विटामिन व खनिज कम हो सकते हैं।
2. **काटना:** सब्जियों को पकाने से ठीक पहले बड़े टुकड़ों में काटें और लंबे समय तक पानी में न भिगोएँ।
3. **पकाना:** कम पानी में, कम समय तक और ढककर पकाएँ। चावल में अतिरिक्त पानी डालकर बाद में फेंकने से बचें।
4. **प्रसंस्करण:** अत्यधिक तापमान, लंबे समय तक गर्म करने और अनावश्यक प्रसंस्करण से बचें, क्योंकि इससे कुछ विटामिन व अन्य पोषक तत्वों की हानि होती है।
5. **मिलिंग:** अनाज की अधिक पॉलिश/रिफाइनिंग न करें और साबुत या कम-पॉलिश अनाज का उपयोग करें। मिलिंग में बाहरी पोषक-समृद्ध परतें हट सकती हैं।
6. **पारबॉयलिंग:** चावल में मिलिंग से पहले पारबॉयलिंग करने से कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों को संरक्षित करने में मदद मिलती है।
7. **अंकुरण/किण्वन:** जहाँ उपयुक्त हो, अंकुरण और किण्वन अपनाने से पाचनशीलता तथा कुछ पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ सकती है।

ICMR–NIN RDA 2020 के आधार पर एक सामान्य स्वस्थ वयस्क के लिए 1 दिन का डाइट प्लान और प्रमुख RDA दिए हैं। RDA उम्र, लिंग, काम/शारीरिक गतिविधि और गर्भावस्था आदि के अनुसार बदलता है।

1 दिन का संतुलित आहार प्लान

| समय | भोजन | अनुमानित मात्रा |
|---|---|---|
| सुबह उठकर | गुनगुना पानी | 1 गिलास |
| नाश्ता | 2 मूंग/बेसन चीला + दही | 2 चीला + 1 कटोरी |
| बीच में | कोई मौसमी फल | 1 |
| दोपहर का भोजन | रोटी + दाल + सब्जी + सलाद + दही | 2–3 रोटी + 1 कटोरी दाल + 1 कटोरी सब्जी |
| शाम | भुना चना/मखाना + चाय/दूध | 1 मुट्ठी |
| रात का भोजन | रोटी + सब्जी + दाल/पनीर | 2 रोटी + 1 कटोरी सब्जी + 1 कटोरी प्रोटीन |
| सोने से पहले | दूध | 1 गिलास |

दूध आवश्यक नहीं है यदि दिन में पर्याप्त डेयरी/अन्य पोषक स्त्रोत मिल रहे हों।

ICMR–NIN RDA 2020 के प्रमुख मान

वयस्क पुरुष (संदर्भ वजन 65 kg):

**प्रोटीन:** 54 g/दिन (sedentary), moderate काम में 54 g और heavy काम में 50 g

**आहार फाइबर:** 40 g/दिन (moderate काम के लिए), कैल्शियम: 1000 mg/दिन

**आयरन:** 19 mg/दिन, जिंक: 17 mg/दिन, आयोडीन: 140 µg/दिन

**विटामिन C:** 80 mg/दिन, विटामिन A: 1000 µg/दिन, विटामिन D: 600 I/दिन

वयस्क महिला (संदर्भ वजन 55 kg):

**आहार फाइबर:** 25 g/दिन (sedentary), 30 g moderate, 40 g heavy

**कैल्शियम:** 1000 mg/दिन , प्रोटीन: 46 g/दिन , **आयरन:** 29 mg/दिन ,जिंक: 13.2 mg/दिन

**आयोडीन:** 140 µg/दिन, विटामिन C: 65 mg/दिन, विटामिन A: 840 µg/दिन

**विटामिन D:** 600 I/दिन

ICMR-NIN के अनुसार RDA वह दैनिक पोषक-तत्व मात्रा है जो लगभग सभी स्वस्थ व्यक्तियों की आवश्यकता पूरी करने के लिए निर्धारित की जाती है

**अस्वस्थ भोजन से बचाव:** आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में लोग फास्ट फूड, तले-भुने खाद्य पदार्थ, अधिक चीनी और अधिक नमक वाले भोजन का सेवन बढ़ा रहे हैं। ऐसे खाद्य पदार्थों का अधिक सेवन स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक हो सकता है। इसलिए भोजन में नमक, चीनी और तेल की मात्रा सीमित रखना तथा अत्यधिक प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों का सेवन कम करना चाहिए।

**निष्कर्ष:** संतुलित आहार स्वस्थ जीवन की मजबूत नींव है। केवल बीमारी होने पर ही स्वास्थ्य की चिंता करने के बजाय हमें प्रतिदिन पौष्टिक और संतुलित भोजन को अपनी आदत बनाना चाहिए। उचित आहार के साथ नियमित व्यायाम, पर्याप्त नींद और स्वच्छता अपनाकर हम स्वस्थ, सक्रिय और खुशहाल जीवन जी सकते हैं। इसलिए यह कहना बिल्कुल उचित है कि "संतुलित आहार ही अच्छे स्वास्थ्य का आधार है।"

**संदर्भ**

1.विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO), Healthy Diet, 26 जनवरी 2026

2.विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO), Healthy Diet – Health Topic.

3.WHO/FAO, What are healthy diets. – स्वस्थ आहार के पोषण संबंधी सिद्धांत।

4.भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद-राष्ट्रीय पोषण संस्थान। (2024) भारतीयों हेतु आहार संबंधी दिशा निर्देश (Dietary Guidelines for Indians)Ð ICMR-NIN.

5.Food and Agriculture Organization of the United Nations. (1993). Rice in human nutrition: Post-harvest processing, parboiling and home preparation. FAO.

6.Food and Agriculture Organization of the United Nations. (n.d.). Micronutrient fortification of foodÑ Technology and quality control. FAO.

हरिओम मिश्र (विषय वस्तु विशेषज्ञ)
कृषि विज्ञान केन्द्र, बस्ती (उ.प्र.)

एस.के. तोमर वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, बस्ती (उ.प्र.)

डी.के. श्रीवास्तव विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केंद्र, मनकापुर, गोंडा (उ.प्र.)

# लीफ कलर चार्ट (एल. सी.सी.) धान में सटीक पोषक तत्व प्रबंधन

**फसल की वास्तविक मांग के आधार पर उर्वरक उपलब्ध कराने को 'सटीक पोषक तत्व प्रबंधन' कहा जाता है। हालाँकि इसके लिए ग्रीन सीकर और क्लोरोफिल मीटर जैसे उन्नत उपकरण मौजूद हैं, लेकिन धान, गेहूं और मक्का जैसी प्रमुख फसलों में नाइट्रोजन प्रबंधन के लिए लीफ कलर चार्ट एक बहुत ही सरल, कम लागत वाला और अत्यधिक व्यावहारिक विकल्प है। पौधे में पत्ती का हरापन सीधे तौर पर नाइट्रोजन की मात्रा का प्रतीक है। गहरे हरे रंग का मतलब है पर्याप्त नाइट्रोजन, जबकि हल्के हरे रंग का मतलब है नाइट्रोजन की मांग (कमी)।**

लीफ कलर चार्ट में हल्के हरे रंग से लेकर गहरे हरे रंग तक कई शेड्स होते हैं, और आसानी से मिलान करने के लिए हर शेड के नीचे एक विशिष्ट अंक (स्कोर) दिया रहता है।

## रीडिंग कैसे और कब लें

- धान की फसल के लिए, जब फसल लगभग 15 से 20 दिन की हो जाए तब लीफ कलर चार्ट से रीडिंग लेना शुरू करना चाहिए, और लगभग हर 7 दिन में इस प्रक्रिया को दोहराना चाहिए।
- यदि आपका खेत काफी बड़ा है, तो इसे 4 से 5 भागों में बांट लें। प्रत्येक भाग से कम से कम 10 नई और स्वस्थ पत्तियों का चुनाव करें, जो कीटों और बीमारियों से पूरी तरह मुक्त हों।
- रीडिंग लेने का सबसे सही समय सुबह 7:00 से 8:00 बजे के बीच होता है।
- पत्ती का चार्ट से मिलान करते समय यह ध्यान रखें कि पत्ती या लीफ कलर चार्ट पर सूर्य का सीधा प्रकाश न पड़ रहा हो, क्योंकि इससे रंग पहचानने में गलती हो सकती है। जरूरत पड़ने पर अपने शरीर की छाया में रीडिंग लें।
- यह सलाह दी जाती है कि मानवीय त्रुटियों (गलतियों) को कम करने के लिए एक ही व्यक्ति पूरे खेत से लीफ कलर चार्ट की रीडिंग ले।

## स्कोर को समझना और नाइट्रोजन का उपयोग

- फसल की जरूरत को तय करने के लिए, चुनी गई पत्तियों का चार्ट के शेड्स के साथ मिलान करें।
- **बासमती किस्मों के लिए:** यदि चुनी गई 10 पत्तियों में से 6 (50% से अधिक पत्तियों) का स्कोर 3.5 या उससे कम आता है, तो आपको प्रति हेक्टेयर 25 किलोग्राम नाइट्रोजन (उर्वरक) डालना चाहिए।
- **संकर किस्मों के लिए:** यदि 10 में से 6 पत्तियों का स्कोर 4 या उससे कम आता है, तो आपको प्रति हेक्टेयर लगभग 35 किलोग्राम नाइट्रोजन उपलब्ध कराना होगा।
- यदि किसी पत्ती का रंग चार्ट के किन्हीं दो शेड्स के बीच का लगता है, तो आप उस स्थिति में उन दोनों अंकों का औसत भी ले सकते हैं।

## रीडिंग लेने का अनुशंसित समय

- **परंपरागत रोपाई वाले धान के लिए:** लगभग 15 दिन, 45 दिन और 60 से 65 दिन के आसपास लीफ कलर चार्ट रीडिंग जरूर लें।
- **धान की सीधी बुवाई वाले खेत के लिए:** लगभग 20 से 25 दिन, 40 दिन के आसपास और फिर 60 से 65 दिन पर रीडिंग लें।
- यदि 60-65 दिनों के बाद भी चार्ट में नाइट्रोजन की मांग दिखाई देती है, तो बासमती धान में करीब 20 किलोग्राम और संकर किस्मों के लिए 30-35 किलोग्राम नाइट्रोजन की मात्रा दी जा सकती है।

## लीफ कलर चार्ट के उपयोग के लाभ

- धान-गेहूं फसल चक्र पर हुए शोध से यह पाया गया है कि नाइट्रोजन प्रबंधन के लिए लीफ कलर चार्ट का उपयोग करने से उपज में कोई कमी आए बिना 20% से 30% तक नाइट्रोजन की बचत होती है। जिससे उर्वरक आयत एवं राष्ट्रीय मुद्रा की बचत एवं नाइट्रोजन उपयोग दक्षता में भी काफी बढ़ोतरी होती है, साथ ही साथ रोग एवं बीमारियों में कमी आती है।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका


**शिवम कुमार पाठक, अभिषेक सिंह**
सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

**डॉ. ललित कुमार सनोदिया**

**डॉ. अखिलेश कुमार सिंह** सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

# कृषि : भारतीय अर्थव्यवस्था और ग्रामीण जीवन की आधारशिला

**प्रस्तावना:** भारत को लंबे समय से कृषि प्रधान देश कहा जाता है। यद्यपि समय के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था में उद्योग और सेवा क्षेत्र का महत्व तेजी से बढ़ा है, फिर भी कृषि आज भी देश की अर्थव्यवस्था, खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण रोजगार और सामाजिक संरचना का एक महत्वपूर्ण आधार बनी हुई है। खेतों में किसान के श्रम से पैदा होने वाला अनाज केवल लोगों की भूख मिटाने का साधन नहीं है, बल्कि यह अनेक उद्योगों, व्यापारिक गतिविधियों और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी गति प्रदान करता है।

भारत की भौगोलिक विविधता, विभिन्न प्रकार की मिट्टी, जलवायु और वर्षा की परिस्थितियाँ देश में अनेक प्रकार की फसलों के उत्पादन को संभव बनाती हैं। धान, गेहूँ, मक्का, ज्वार, बाजरा, दलहन, तिलहन, गन्ना, कपास, चाय, कॉफी, मसाले, फल और सब्जियाँ भारतीय कृषि की विविधता को दर्शाती हैं। इसलिए कृषि को भारतीय जीवन और अर्थव्यवस्था की आधारशिला के रूप में समझना आवश्यक है।

**भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व:** कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को आपस में जोड़ने का कार्य करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि से होने वाली आय स्थानीय बाजारों में मांग पैदा करती है, जिससे छोटे व्यापार, परिवहन, निर्माण और सेवा क्षेत्र को भी लाभ मिलता है।

**कृषि का महत्व निम्नलिखित क्षेत्रों में विशेष रूप से देखा जा सकता है—**

1. **खाद्य सुरक्षा:** किसी भी देश की आर्थिक और सामाजिक स्थिरता के लिए पर्याप्त खाद्य उत्पादन आवश्यक है। भारत की विशाल आबादी के लिए पर्याप्त मात्रा में अनाज, दाल, तेल, फल और सब्जियों का उत्पादन कृषि के माध्यम से ही संभव होता है। कृषि उत्पादन में वृद्धि देश की खाद्य सुरक्षा को मजबूत करती है और खाद्य पदार्थों की उपलब्धता सुनिश्चित करने में सहायता करती है।

2. **रोजगार का प्रमुख स्रोत:** ग्रामीण भारत में कृषि प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से बड़ी संख्या में लोगों को रोजगार उपलब्ध कराती है। खेती के अतिरिक्त पशुपालन, डेयरी, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन, बागवानी और कृषि-आधारित छोटे व्यवसाय भी रोजगार के अवसर पैदा करते हैं। कृषि में रोजगार का महत्व विशेष रूप से उन ग्रामीण परिवारों के लिए अधिक है जिनके पास सीमित औपचारिक रोजगार के अवसर उपलब्ध होते हैं।

3. **उद्योगों के लिए कच्चा माल:** कई उद्योग कृषि पर निर्भर हैं। कपड़ा उद्योग को कपास और जूट जैसे उत्पादों की आवश्यकता होती है। चीनी उद्योग गन्ने पर निर्भर है, जबकि वनस्पति तेल उद्योग तिलहन से जुड़ा हुआ है। चाय, कॉफी, मसाले, खाद्य प्रसंस्करण और डेयरी उद्योग भी कृषि उत्पादन से सीधे जुड़े हैं। इस प्रकार कृषि और उद्योग एक-दूसरे के पूरक हैं। कृषि उत्पादन बढ़ने पर कृषि-आधारित उद्योगों के विकास की संभावनाएँ भी बढ़ती हैं।

4. **ग्रामीण बाजार का विकास:** किसानों की आय बढ़ने पर ग्रामीण क्षेत्रों में वस्तुओं और सेवाओं की मांग बढ़ती है। किसान कृषि उपकरण, कपड़े, मोटरसाइकिल, घरेलू सामान, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च करते हैं। इससे ग्रामीण बाजार मजबूत होता है और स्थानीय व्यापार को प्रोत्साहन मिलता है।

**ग्रामीण जीवन में कृषि की भूमिका:** भारत के ग्रामीण समाज में कृषि केवल आजीविका का साधन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन से भी गहराई से जुड़ी हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक त्योहार, परंपराएँ और सामाजिक गतिविधियाँ कृषि चक्र से संबंधित रही हैं। बुवाई, सिंचाई, फसल की देखभाल और कटाई जैसे कार्य ग्रामीण जीवन की दैनिक गतिविधियों को प्रभावित करते हैं। फसल की अच्छी पैदावार ग्रामीण परिवारों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करती है, जबकि प्राकृतिक आपदाओं या फसल खराब होने की स्थिति में परिवारों पर आर्थिक दबाव बढ़ सकता है।

**भारतीय कृषि की विविधता:** भारत में अलग-अलग भौगोलिक परिस्थितियों के कारण कृषि के अनेक रूप देखने को मिलते हैं। कहीं सिंचित कृषि प्रमुख है तो कहीं किसान मुख्य रूप से वर्षा पर निर्भर रहते हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में बागवानी और कुछ विशेष फसलों का महत्व है, जबकि मैदानी क्षेत्रों में गेहूँ, धान और अन्य खाद्यान्नों की खेती व्यापक रूप से की जाती है।

**भारत में प्रमुख कृषि गतिविधियों में—** * खाद्यान्न उत्पादन * दलहन एवं तिलहन उत्पादन * बागवानी * पशुपालन * डेयरी * मत्स्य पालन * मधुमक्खी पालन * फूलों की खेती * मसाला उत्पादन * जैविक एवं प्राकृतिक खेती शामिल हैं।

कृषि की यह विविधता किसानों को आय के विभिन्न स्रोत उपलब्ध कराने में मदद कर सकती है।

**भारतीय कृषि की प्रमुख समस्याएं:** कृषि का महत्व बहुत अधिक होने के बावजूद भारतीय किसानों को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

1. **मानसून पर निर्भरता:** देश के कई क्षेत्रों में कृषि अभी भी वर्षा पर निर्भर है। वर्षा कम होने पर सूखे की स्थिति उत्पन्न हो सकती है और अत्यधिक वर्षा से बाढ़ तथा जलभराव की समस्या पैदा हो सकती है। जलवायु में हो रहे परिवर्तन ने इन चुनौतियों को और जटिल बनाया है।

2. **छोटे और सीमांत किसान:** भारत में बड़ी संख्या में किसानों के पास अपेक्षाकृत छोटी जोतें हैं। छोटी भूमि पर आधुनिक मशीनरी का उपयोग करना और बड़े पैमाने पर उत्पादन करना कई बार कठिन होता है। छोटे किसानों के लिए उत्पादन लागत, बाजार तक पहुँच और भंडारण की व्यवस्था भी चुनौती बन सकती है।

3. **उत्पादन लागत में वृद्धि:** बीज, उर्वरक, कीटनाशक, डीजल, बिजली, मशीनरी और श्रम की लागत बढ़ने से किसानों पर आर्थिक दबाव पड़ सकता है। यदि उत्पादन लागत की तुलना में फसल का बाजार मूल्य पर्याप्त न हो, तो किसान की आय प्रभावित होती है।

4. **भंडारण और विपणन की समस्या:** कई क्षेत्रों में पर्याप्त गोदाम, कोल्ड स्टोरेज और प्रसंस्करण सुविधाओं की कमी के कारण किसानों को फसल जल्दी बेचनी पड़ सकती है। इससे उन्हें अपनी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त करने में कठिनाई हो सकती है।

5. **मिट्टी और जल संसाधनों पर दबाव:** रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का असंतुलित उपयोग, भूजल का अत्यधिक दोहन और एक ही फसल पर लगातार निर्भरता मिट्टी तथा जल संसाधनों पर दबाव डाल सकती है। इसलिए कृषि विकास के साथ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी आवश्यक है।

**आधुनिक कृषि और तकनीकी परिवर्तन:** विज्ञान और तकनीक ने कृषि क्षेत्र में नए अवसर पैदा किए हैं। आधुनिक कृषि मशीनरी, उन्नत बीज, मौसम संबंधी जानकारी, उपग्रह तकनीक, ड्रोन, डिजिटल बाजार और कृषि सलाह सेवाएँ किसानों को अधिक वैज्ञानिक तरीके से खेती करने में सहायता कर सकती हैं।

**कृषि यंत्रीकरण:** ट्रैक्टर, हार्वेस्टर, पंप और अन्य कृषि मशीनें खेती के काम को तेज और अधिक प्रभावी बनाती हैं। विशेष रूप से श्रम की कमी वाले क्षेत्रों में यंत्रीकरण उपयोगी साबित हो सकता है।

**आधुनिक सिंचाई:** ड्रिप और स्प्रिंकलर जैसी सिंचाई प्रणालियाँ पानी के अधिक कुशल उपयोग में सहायता करती हैं। जल संरक्षण की दृष्टि से ऐसी तकनीकों का महत्व बढ़ रहा है।

**डिजिटल कृषि:** मोबाइल फोन और इंटरनेट के माध्यम से किसान मौसम, बाजार मूल्य, कृषि तकनीक और सरकारी योजनाओं से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। भविष्य में डेटा आधारित कृषि और कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी तकनीकों का उपयोग खेती को और अधिक सटीक बनाने में मदद कर सकता है।

**जैविक और प्राकृतिक खेती:** कृषि को टिकाऊ बनाने के लिए जैविक तथा प्राकृतिक खेती पर भी ध्यान दिया जा रहा है। इन पद्धतियों में मिट्टी की गुणवत्ता, जैव विविधता और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर जोर दिया जाता है।

हालाँकि, किसी भी कृषि पद्धति को अपनाते समय स्थानीय जलवायु, मिट्टी, बाजार और किसान की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखना आवश्यक है। केवल उत्पादन बढ़ाना ही पर्याप्त नहीं है; खेती को लाभकारी और पर्यावरण के अनुकूल बनाना भी जरूरी है।

# जैव उर्वरकों की भूमिका : मृदा स्वास्थ्य सुधार में योगदान

**राम लखन सोनी** (P.hd Scholer), मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग
**अनुराग सिंह** (M.Sc. Scholer), मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग
**आदेश कुमार** (प्रोफेसर), मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग
**आनंद सिंह** (सहायक प्रोफेसर), मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग
**दीपक कुमार** (P.hd Scholer), मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

**परिचय-** कृषि उत्पादन की स्थिरता और दीर्घकालिक लाभ के लिए मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। आधुनिक कृषि में रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणवत्ता प्रभावित हुई है। इस परिप्रेक्ष्य में जैव उर्वरक (Biofertilizers) एक पर्यावरणअनुकूल विकल्प के रूप में उभरे हैं। ये सूक्ष्मजीव आधारित उत्पाद पौधों को पोषण उपलब्ध कराने के साथसाथ मृदा की जैविक सक्रियता और दीर्घकालिक उत्पादकता को भी बढ़ाते हैं। जैव उर्वरकों की परिभाषा एवं प्रकार- जैव उर्वरक वे सूक्ष्मजीव आधारित उत्पाद हैं जो पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराने में सहायक होते हैं। इनमें मुख्यतः नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु (Rhizobium, Azotobacter, Azospirillum), फॉस्फोरस घुलनशीलक जीवाणु (PSB), पोटाश घुलनशीलक जीवाणु (KSB) तथा माइकोराइज़ा कवक सम्मिलित हैं। इन सूक्ष्मजीवों की सक्रियता मृदा में पोषक तत्वों के चक्रण को तीव्र करती है और पौधों की जड़ों तक पोषण पहुँचाती है।

**पोषक तत्व उपलब्धता में वृद्धि-** जैव उर्वरक मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु वायुमंडलीय नाइट्रोजन को पौधों के लिए उपयोगी रूप में परिवर्तित करते हैं। फॉस्फोरस घुलनशीलक जीवाणु अघुलनशील फॉस्फेट को घुलनशील रूप में बदलते हैं, जिससे पौधों को फॉस्फोरस आसानी से उपलब्ध होता है। इसी प्रकार पोटाश घुलनशीलक जीवाणु मृदा में उपस्थित पोटाश को मुक्त कर पौधों की जड़ों तक पहुँचाते हैं।

**जैविक सक्रियता में वृद्धि:** जैव उर्वरक मृदा में कार्बनिक पदार्थों का विघटन कर सूक्ष्मजीवों की संख्या और विविधता बढ़ाते हैं। इससे मृदा में एंजाइम गतिविधि जैसे डिहाइड्रोजनेज और यूरेज सक्रिय होती है, जो पोषक तत्वों के चक्रण को तीव्र करती है। सूक्ष्मजीवों की बढ़ी हुई सक्रियता मृदा की जैविक गुणवत्ता को सुधारती है और पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करती है।

**मृदा की भौतिक संरचना में सुधार:** जैव उर्वरक कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ाकर मृदा की संरचना को स्थिर करते हैं। इससे मृदा की जलधारण क्षमता, वायु संचार और पोरोसिटी में सुधार होता है। अच्छी संरचना वाली मृदा पौधों की जड़ों को गहराई तक फैलने और पोषण अवशोषण में मदद करती है।

**रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि:** जैव उर्वरक पौधों की जड़ों के आसपास लाभकारी सूक्ष्मजीवों का समुदाय बनाते हैं, जो हानिकारक रोगजनकों को दबाते हैं। माइकोराइज़ा कवक पौधों को रोगों से बचाने के साथसाथ पोषक तत्वों के अवशोषण में भी मदद करते हैं। इस प्रकार जैव उर्वरक पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं और फसल की गुणवत्ता सुधारते हैं।

**पर्यावरणीय लाभ-** जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करते हैं, जिससे जल प्रदूषण और मृदा प्रदूषण घटता है। इनके प्रयोग से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी आती है और सतत कृषि को बढ़ावा मिलता है। जैव उर्वरक पर्यावरणअनुकूल होने के कारण दीर्घकालिक कृषि उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं।

| जैव उर्वरक का प्रकार | प्रमुख सूक्ष्मजीव | मुख्य कार्य |
|---|---|---|
| नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जैव उर्वरक | Rhizobium, Azotobacter, Azospirillum | वायुमंडलीय नाइट्रोजन को पौधों के लिए उपयोगी रूप में परिवर्तित करते हैं। |
| फॉस्फोरस घुलनशीलक जैव उर्वरक (PSB) | Bacillus megaterium, Pseudomonas striata | अघुलनशील फॉस्फेट को घुलनशील रूप में बदलकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। |
| पोटाश घुलनशीलक जैव उर्वरक (KSB) | Frateuria aurantia | मृदा में उपस्थित पोटाश को मुक्त कर पौधों की जड़ों तक पहुँचाते हैं। |
| माइकोराइजा (Mycorrhiza) | Glomus spp., Gigaspora spp. | पौधों की जड़ों के साथ सहजीवी संबंध बनाकर पोषक तत्वों और जल का अवशोषण बढ़ाते हैं। |
| सल्फर ऑक्सीकरण करने वाले जीवाणु | Thiobacillus spp. | सल्फर को ऑक्सीकरण कर पौधों के लिए उपलब्ध कराते हैं। |
| जैविक अपघटक (Decomposer microbes) | Trichoderma, Aspergillus, Penicillium | कार्बनिक पदार्थों का विघटन कर मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते हैं। |

**1.नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जैव उर्वरक:** नाइट्रोजन पौधों की वृद्धि के लिए सबसे आवश्यक पोषक तत्वों में से एक है। वायुमंडल में नाइट्रोजन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, लेकिन यह पौधों के लिए सीधे उपयोगी नहीं होता। Rhizobium, Azotobacter और Azospirillum जैसे जीवाणु वायुमंडलीय नाइट्रोजन को अमोनिया या अन्य उपयोगी रूपों में परिवर्तित करते हैं। Rhizobium विशेष रूप से दलहनी फसलों की जड़ों में गांठें बनाकर नाइट्रोजन स्थिरीकरण करता है, जबकि Azotobacter और Azospirillum स्वतंत्र रूप से मृदा में सक्रिय रहते हैं। इन जैव उर्वरकों के प्रयोग से रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है और मृदा की उर्वरता दीर्घकालिक रूप से बनी रहती है।

**2. फॉस्फोरस घुलनशीलक जैव उर्वरक (PSB):** फॉस्फोरस पौधों की जड़ों के विकास, ऊर्जा स्थानांतरण और फूलफल बनने के लिए आवश्यक है। मृदा में अधिकांश फॉस्फोरस अघुलनशील रूप में पाया जाता है, जिसे पौधे सीधे अवशोषित नहीं कर सकते। Bacillus megaterium और Pseudomonas striata जैसे जीवाणु अघुलनशील फॉस्फेट को घुलनशील रूप में परिवर्तित करते हैं। इससे पौधों को फॉस्फोरस आसानी से उपलब्ध होता है और उनकी वृद्धि बेहतर होती है। PSB का प्रयोग मृदा में फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाकर दीर्घकालिक उर्वरता को बनाए रखता है।

**3. पोटाश घुलनशील जैव उर्वरक (KSB):** पोटाश पौधों में जल संतुलन, एंजाइम सक्रियता और रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए आवश्यक है। मृदा में पोटाश प्रायः अघुलनशील खनिजों के रूप में पाया जाता है। Frateuria aurantia जैसे जीवाणु इन खनिजों को घुलनशील रूप में बदलकर पौधों की जड़ों तक पहुँचाते हैं। KSB के प्रयोग से पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है और फसल की गुणवत्ता में सुधार होता है।

**4. माइकोराइज़ा (Mycorrhiza):** माइकोराइज़ा कवक पौधों की जड़ों के साथ सहजीवी संबंध बनाते हैं। ये कवक जड़ों की सतह क्षेत्र को बढ़ाकर पोषक तत्वों और जल का अवशोषण अधिक करते हैं। विशेष रूप से फॉस्फोरस और सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता में माइकोराइज़ा का योगदान महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त, ये पौधों को रोगों से बचाने और प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवित रहने की क्षमता भी प्रदान करते हैं।

**5. सल्फर ऑक्सीकरण करने वाले जीवाणु:** सल्फर पौधों में प्रोटीन संश्लेषण और एंजाइम गतिविधि के लिए आवश्यक है। मृदा में सल्फर प्रायः सल्फाइड रूप में पाया जाता है, जिसे पौधे सीधे उपयोग नहीं कर सकते। Thiobacillus जैसे जीवाणु सल्फर को ऑक्सीकरण कर सल्फेट में परिवर्तित करते हैं, जो पौधों के लिए उपयोगी होता है। इससे फसल की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों में सुधार होता है।

**6. जैविक अपघटक (Decomposer Microbes):** Trichoderma, Aspergillus और Penicillium जैसे अपघटक जीवाणु मृदा में कार्बनिक पदार्थों का विघटन करते हैं। इससे मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है और सूक्ष्मजीवों की सक्रियता में वृद्धि होती है। ये जीवाणु मृदा की संरचना को सुधारते हैं और पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं। वैज्ञानिक अध्ययनों से प्रमाण- कई वैज्ञानिक अध्ययनों ने जैव उर्वरकों के लाभों को प्रमाणित किया है। जांगिर et al. (2017) ने पाया कि एक ही फसल मौसम में जैव उर्वरकों का प्रयोग मृदा की भौतिक गुणों में उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं करता, परंतु दीर्घकालिक प्रयोग से लाभ स्पष्ट होता है। कुमारी et al. (2022) ने बताया कि 75% RDF + वर्मी कम्पोस्ट + Azotobacter + PSB के प्रयोग से मृदा की उर्वरता और सूक्ष्मजीव सक्रियता में वृद्धि हुई। प्रशांति et al. (2026) ने यह निष्कर्ष निकाला कि FYM, वर्मी कम्पोस्ट और जीवामृत जैसे कार्बनिक स्रोत सूक्ष्मजीवों को ऊर्जा और पोषण प्रदान कर उनकी संख्या और गतिविधि बढ़ाते हैं। मिश्रा et al. (2026) ने मेटाजेनोमिक अध्ययन द्वारा सिद्ध किया कि प्राकृतिक खेती में जीवामृत के प्रयोग से मृदा में लाभकारी जीवाणुओं और कवकों की संख्या बढ़ती है, जिससे पोषक तत्व उपलब्धता और रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार होता है।

**निष्कर्ष:** जैव उर्वरक मृदा स्वास्थ्य सुधार के लिए एक सशक्त और टिकाऊ विकल्प हैं। ये न केवल पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं बल्कि मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता को भी दीर्घकालिक रूप से सुधारते हैं। नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु, फॉस्फोरस एवं पोटाश घुलनशीलक जीवाणु, माइकोराइज़ा कवक, सल्फर ऑक्सीकरण करने वाले जीवाणु तथा अपघटक सूक्ष्मजीव सभी मिलकर मृदा में पोषक तत्वों के प्राकृतिक चक्रण को सक्रिय करते हैं। इनके प्रयोग से मृदा की संरचना स्थिर होती है, जलधारण क्षमता और वायु संचार में सुधार होता है, साथ ही रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है। जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करते हैं, जिससे जल एवं मृदा प्रदूषण घटता है और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी आती है। यह पर्यावरणअनुकूल तकनीक सतत कृषि उत्पादन को बढ़ावा देती है और किसानों को दीर्घकालिक लाभ प्रदान करती है। वैज्ञानिक अध्ययनों ने भी सिद्ध किया है कि जैव उर्वरकों का नियमित प्रयोग मृदा की उर्वरता, सूक्ष्मजीव सक्रियता और फसल की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार करता है। अतः यह स्पष्ट है कि सतत कृषि और पर्यावरण संरक्षण के लिए जैव उर्वरकों का प्रयोग अत्यंत आवश्यक है। भविष्य की कृषि प्रणाली में इनका समावेश न केवल उत्पादन क्षमता को बढ़ाएगा बल्कि मृदा स्वास्थ्य को भी सुरक्षित रखेगा।

# 'वन हेल्थ' दृष्टिकोण में मृदा स्वास्थ्य की भूमिका

सिद्धार्थ मिश्रा, अनंत शर्मा
शोध छात्र सस्य विज्ञान संकाय

राहुल कुमार कृषि प्रसार शिक्षा विभाग,
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उ.प्र.)

रितु यादव सस्य विज्ञान संकाय, सैम
हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी और विज्ञान
विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

**प्रस्तावना:** वर्तमान समय में मानव स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याएँ केवल चिकित्सकीय या जैविक कारणों तक सीमित नहीं हैं। जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता में कमी, भूमि क्षरण, मृदा प्रदूषण, जल संकट, उभरते संक्रामक रोग तथा एंटीमाइक्रोबियल रेजिस्टेंस जैसी चुनौतियाँ मानव, पशु और पर्यावरणीय स्वास्थ्य के बीच गहरे संबंध को स्पष्ट करती हैं। इसी संदर्भ में 'वन हेल्थ' एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक दृष्टिकोण के रूप में विकसित हुआ है, जिसका मूल सिद्धांत यह है कि मनुष्य, पशु, पौधे और पर्यावरण का स्वास्थ्य परस्पर जुड़ा हुआ है तथा किसी एक घटक की स्थिति में परिवर्तन दूसरे घटकों को प्रभावित कर सकता है। इस प्रणाली में मृदा को एक महत्वपूर्ण 'इकोलॉजिकल इंटरफेस' माना जा सकता है। मृदा वह माध्यम है जहाँ जैविक और अजैविक प्रक्रियाएँ एक साथ संचालित होती हैं। पौधों की वृद्धि, पोषक तत्वों का चक्रण, जल का पुनर्भरण, कार्बन का भंडारण और सूक्ष्मजीवों की विविधता जैसी प्रक्रियाएँ सीधे मृदा स्वास्थ्य से जुड़ी हैं। इसलिए, यदि मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता में गिरावट आती है, तो उसका प्रभाव केवल कृषि उत्पादकता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि खाद्य गुणवत्ता, पशु स्वास्थ्य, मानव पोषण और पर्यावरणीय संतुलन पर भी पड़ता है।

**मृदा स्वास्थ्य की वैज्ञानिक अवधारणा:** मृदा स्वास्थ्य का अर्थ मृदा की उस क्षमता से है, जिसके माध्यम से वह एक जीवित पारिस्थितिक तंत्र के रूप में अपनी उत्पादकता, पर्यावरणीय कार्यों और जैव विविधता को बनाए रखते हुए पौधों, पशुओं और मानव समुदायों के लिए आवश्यक सेवाएँ प्रदान कर सके। वैज्ञानिक रूप से मृदा स्वास्थ्य को तीन प्रमुख आयामों, भौतिक, रासायनिक और जैविक, गुणवत्ता के आधार पर समझा जाता है। भौतिक स्वास्थ्य में मृदा संरचना, स्थिर समुच्चय, जल धारण क्षमता, जल निकास, थोक घनत्व और वायु संचार महत्वपूर्ण हैं। रासायनिक स्वास्थ्य में पी.एच. विद्युत चालकता, जैविक कार्बन, उपलब्ध नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम तथा सूक्ष्म पोषक तत्व शामिल हैं। जैविक स्वास्थ्य में सूक्ष्मजीव विविधता, माइक्रोबियल बायोमास, एंजाइम गतिविधि, केंचुओं तथा अन्य मृदा जीवों की सक्रियता और मृदा खाद्य जाल महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन तीनों घटकों के बीच संतुलन ही एक कार्यशील और स्वस्थ मृदा का निर्माण करता है। अतः 'वन हेल्थ' के संदर्भ में मृदा स्वास्थ्य को केवल फसल उत्पादन का सूचक न मानकर पारिस्थितिक एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य का आधारभूत संकेत को समझना आवश्यक है।

**वन हेल्थ' और मृदा स्वास्थ्य का अंतर्संबंध:** वन हेल्थ' में मृदा की भूमिका को समझने के लिए मृदा, पौधा, पशु, मानव, पर्यावरण के चक्रीय संबंध को समझना आवश्यक है। मृदा से पोषक तत्व पौधों तक पहुँचते हैं, पौधे खाद्य और चारे का आधार बनते हैं, खाद्य एवं चारे के माध्यम से पोषक तत्व मानव और पशुओं तक पहुँचते हैं तथा पशुओं और मानव से उत्पन्न जैविक अपशिष्ट पुनः मृदा में लौटकर पोषक तत्व चक्र को पूरा करते हैं। यदि यह चक्र संतुलित रहता है, तो मृदा की उर्वरता, कृषि उत्पादकता और पारिस्थितिक स्थिरता बनी रहती है। इसके विपरीत, यदि मृदा में भारी धातुओं, कीटनाशक अवशेषों या अन्य प्रदूषकों का संचय होता है, तो वे पौधों द्वारा अवशोषित होकर खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर सकते हैं। इस प्रकार मृदा प्रदूषण अप्रत्यक्ष रूप से मानव और पशु स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है। इसी प्रकार, पशुधन उत्पादन में प्रयुक्त एंटीबायोटिक दवाओं के अवशेष और प्रतिरोधी सूक्ष्मजीव पशु अपशिष्ट के माध्यम से कृषि भूमि में पहुँच सकते हैं। इससे मृदा में एंटीमाइक्रोबियल रेजिस्टेंस जीन के प्रसार का

जोखिम बढ़ सकता है। इसलिए मृदा 'वन हेल्थ' प्रणाली में एक महत्वपूर्ण जैव-भौगोलिक संपर्क क्षेत्र के रूप में कार्य करती है।

**मृदा माइक्रोबायोम और 'वन हेल्थ':** मृदा पृथ्वी के सबसे अधिक जैव विविधता वाले पारिस्थितिक तंत्रों में से एक है। इसमें बैक्टीरिया, कवक, आर्किया, प्रोटोजोआ तथा अन्य सूक्ष्मजीवों की विशाल विविधता पाई जाती है। ये सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थों के अपघटन, नाइट्रोजन स्थिरीकरण, फास्फोरस घुलनशीलता और पोषक तत्वों के चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मृदा माइक्रोबायोम पौधों की जड़ों के आसपास राइजोस्फीयर में विशेष रूप से सक्रिय रहता है। लाभकारी सूक्ष्मजीव पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थ उत्पन्न कर सकते हैं तथा कुछ रोगजनक जीवों के विरुद्ध जैविक नियंत्रण प्रदान कर सकते हैं। माइकोराइजा जैसे सहजीवी कवक पौधों की पोषक तत्वों और जल अवशोषण क्षमता को बढ़ाते हैं। इस प्रकार स्वस्थ मृदा माइक्रोबायोम पौधों की रोग प्रतिरोधकता और उत्पादकता को बढ़ाकर खाद्य सुरक्षा में योगदान देता है। दूसरी ओर, अत्यधिक रासायनिक इनपुट, मृदा अम्लीकरण, लवणीयता और जैविक पदार्थ की कमी मृदा माइक्रोबियल विविधता को प्रभावित कर सकती है। इसलिए 'वन हेल्थ' के अंतर्गत मृदा माइक्रोबायोम की निगरानी और संरक्षण भविष्य के लिए महत्वपूर्ण अनुसंधान क्षेत्र है।

**मृदा स्वास्थ्य और खाद्य एवं पोषण सुरक्षा:** मानव स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण आधार सुरक्षित और पोषक खाद्य है। खाद्य उत्पादन की पूरी प्रक्रिया मृदा से प्रारंभ होती है। मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा और संतुलन सीधे फसल की पोषण गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। जिंक, आयरन, सेलेनियम और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी वाली मृदाओं में उत्पादित खाद्य पदार्थों में भी इन तत्वों की कमी हो सकती है, जिससे मानव पोषण पर प्रभाव पड़ सकता है। इस संदर्भ में बायोफोर्टिफिकेशन, संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन और मृदा स्वास्थ्य सुधार महत्वपूर्ण रणनीतियाँ हैं। यदि मृदा में जैविक पदार्थ और पोषक तत्व संतुलित मात्रा में उपलब्ध हों, तो पौधों की वृद्धि तथा पोषण गुणवत्ता में सुधार हो सकता है। इस प्रकार मृदा स्वास्थ्य को केवल 'अधिक उत्पादन' के संदर्भ में नहीं बल्कि 'अधिक पोषणयुक्त और सुरक्षित उत्पादन' के संदर्भ में देखना आवश्यक है।

**मृदा स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन:** मृदा वैश्विक कार्बन चक्र का एक प्रमुख घटक है। स्वस्थ मृदा में जैविक कार्बन का संचय वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को हटाने में योगदान कर सकता है। संरक्षण कृषि, फसल अवशेष प्रबंधन, कवर क्रॉप, जैविक संशोधन, कृषि वानिकी और पुनर्योजी कृषि जैसी प्रणालियाँ मृदा कार्बन को बढ़ाने में सहायक हो सकती हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण सूखा, अत्यधिक तापमान और अनियमित वर्षा जैसी घटनाएँ मृदा स्वास्थ्य को प्रभावित कर रही हैं। दूसरी ओर, खराब मृदा प्रबंधन से कार्बन उत्सर्जन और भूमि क्षरण बढ़ सकता है। इसलिए मृदा स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन के बीच संबंध द्विदिशात्मक है। 'वन हेल्थ' के संदर्भ में स्वस्थ मृदा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के साथ-साथ कृषि, मानव पोषण और पारिस्थितिक तंत्र की लचीलापन क्षमता बढ़ा सकती है।

**मृदा स्वास्थ्य संरक्षण की रणनीतियाँ:** 'वन हेल्थ' आधारित मृदा प्रबंधन के लिए एकीकृत एवं बहु-विषयक रणनीति की आवश्यकता है। इसमें मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक उपयोग, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, फसल चक्र, जैविक पदार्थों का उपयोग, संरक्षण कृषि, फसल अवशेष प्रबंधन और जैव उर्वरकों का समावेश किया जाना चाहिए। इसके साथ ही, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का संतुलित उपयोग, जैविक और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण तथा जल एवं मृदा प्रदूषण की निगरानी आवश्यक है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड, डिजिटल मृदा मानचित्रण, सेंसर, रिमोट सेंसिंग और कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी आधुनिक तकनीकों का उपयोग मृदा स्वास्थ्य की वास्तविक समय निगरानी और निर्णय लेने में सहायक हो सकता है।

**भविष्य की दिशा:** भविष्य में 'वन हेल्थ' और मृदा विज्ञान का एकीकरण कृषि एवं पर्यावरण अनुसंधान की महत्वपूर्ण दिशा बन सकता है। और मशीन लर्निंग आधारित मृदा स्वास्थ्य पूर्वानुमान, मेटाजीनोमिक्स द्वारा मृदा माइक्रोबायोम विश्लेषण, आधारित मृदा निगरानी तथा डिजिटल मृदा मानचित्रण इस क्षेत्र में नई संभावनाएँ उत्पन्न कर रहे हैं। विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संस्थानों में मृदा वैज्ञानिकों, कृषि वैज्ञानिकों, पशु चिकित्सकों, सूक्ष्मजीव वैज्ञानिकों, पर्यावरण विशेषज्ञों और सार्वजनिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों के बीच सहयोग बढ़ाना आवश्यक है। 'वन हेल्थ' आधारित अनुसंधान में मृदा, जल, फसल, पशु, मानव के बीच रोगजनकों, प्रदूषकों, पोषक तत्वों और प्रतिरोधी जीन के संचरण का अध्ययन भविष्य की प्राथमिकता होना चाहिए।

**निष्कर्ष:** 'वन हेल्थ' की अवधारणा में मृदा स्वास्थ्य को एक आधारभूत पारिस्थितिक घटक के रूप में स्थापित करना समय की आवश्यकता है। स्वस्थ मृदा केवल फसल उत्पादन और कृषि उत्पादकता को बढ़ावा नहीं देती, बल्कि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, जल गुणवत्ता, जैव विविधता, जलवायु परिवर्तन शमन और मानव एवं पशु स्वास्थ्य के संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। इसलिए भविष्य की कृषि नीति में मृदा स्वास्थ्य को केवल 'मृदा उर्वरता' के रूप में नहीं, बल्कि 'पारिस्थितिक, कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य' के एकीकृत आधार के रूप में देखा जाना चाहिए। अतः "स्वस्थ मृदास्वस्थ पौधास्वस्थ, पशुस्वस्थ, मानवस्वस्थ पर्यावरण" को भविष्य की सतत कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य नीति का वैज्ञानिक आधार बनाया जाना चाहिए।

# फफूंदनाशी दवाओं का असर क्यों घट रहा है? फफूंदनाशी प्रतिरोध की बढ़ती समस्या

✍ **मो. सफीउल्लाह, प्रतिभा पटेल** पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

✍ **प्रखर राय** शस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

✍ **डॉ. पुष्कर शुक्ला, डॉ. आयुष कुमार** सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

किसान के लिए फसल में रोग लगना हमेशा चिंता का विषय होता है। समय रहते सही दवा का प्रयोग करने पर कई रोगों को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है। लेकिन आज कई किसानों का एक सामान्य अनुभव है-"पहले जिस दवा से रोग जल्दी रुक जाता था, अब उसी दवा से अपेक्षित असर नहीं मिल रहा है।" ऐसी स्थिति के पीछे कई कारण हो सकते हैं, लेकिन उनमें से एक गंभीर कारण फफूंदनाशी प्रतिरोध है। फफूंदनाशी प्रतिरोध केवल किसी एक खेत या एक फसल की समस्या नहीं है। दुनिया के विभिन्न हिस्सों में अनेक पादप रोगजनकों में फफूंदनाशियों के प्रति कम संवेदनशीलता विकसित होने की घटनाएँ सामने आई हैं। यदि इस समस्या को समय रहते समझकर नियंत्रित नहीं किया गया, तो भविष्य में किसानों के पास उपलब्ध प्रभावी रोग नियंत्रण विकल्प कम हो सकते हैं। वैज्ञानिक साहित्य भी लगातार एक ही क्रिया-विधि वाली फफूंदनाशियों के उपयोग को प्रतिरोध के विकास के प्रमुख जोखिमों में शामिल करता है।

**आखिर फफूंदनाशी प्रतिरोध है क्या?** इसे बहुत आसान तरीके से समझें। खेत में किसी रोग को पैदा करने वाले रोगजनक की पूरी आबादी हमेशा एक जैसी नहीं होती। उनमें स्वाभाविक रूप से कुछ ऐसे जीव हो सकते हैं जिनमें किसी दवा के प्रति थोड़ी अधिक सहनशीलता हो। जब किसी विशेष प्रकार की फफूंदनाशी का बार-बार प्रयोग किया जाता है, तो उस दवा के प्रति संवेदनशील रोगजनक नियंत्रित हो जाते हैं, जबकि कम संवेदनशील रोगजनक बच सकते हैं। ये बचे हुए रोगजनक आगे बढ़कर अपनी संख्या बढ़ाते हैं। समय के साथ यदि खेत में ऐसे रोगजनकों का अनुपात बढ़ जाता है और अनुशंसित मात्रा में दवा देने के बाद भी रोग का नियंत्रण अपेक्षित रूप से नहीं होता, तो इसे फफूंदनाशी प्रतिरोध की दिशा में एक गंभीर संकेत माना जा सकता है। वैज्ञानिक रूप से प्रतिरोध का अर्थ किसी फफूंद की उस फफूंदनाशी के प्रति वंशानुगत रूप से कम संवेदनशीलता विकसित होना है। हालांकि खेत में दवा का असर कम दिखाई देना मात्र प्रतिरोध की पक्की पुष्टि नहीं है; इसकी पुष्टि वैज्ञानिक परीक्षणों से की जाती है।

**दवा काम नहीं कर रही तो क्या प्रतिरोध ही कारण है?** जरूरी नहीं। यह बात किसानों के लिए विशेष रूप से समझना महत्वपूर्ण है।कई बार दवा का असर इसलिए कम दिखाई देता है क्योंकि रोग की सही पहचान नहीं हुई, दवा की मात्रा कम रखी गई, छिड़काव का समय सही नहीं था, पौधों पर दवा का पर्याप्त कवरेज नहीं हुआ या रोग पहले ही बहुत अधिक फैल चुका था। मौसम की स्थिति भी दवा के प्रदर्शन और रोग के विकास को प्रभावित कर सकती है। इसलिए यदि किसी दवा से अपेक्षित परिणाम नहीं मिलता, तो तुरंत यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि "दवा नकली है" या "रोग ने दवा को मात दे दी है।" पहले रोग की पहचान, दवा का चुनाव, मात्रा, छिड़काव का समय और खेत की परिस्थितियों की जांच करना आवश्यक है। यदि समस्या लगातार बनी रहती है, तो कृषि विशेषज्ञ या कृषि विश्वविद्यालय की सलाह लेना अधिक उचित है। FRAC भी खेत में दिखाई देने वाली कम प्रभावशीलता को प्रतिरोध मानने से पहले वैज्ञानिक पुष्टि की आवश्यकता पर जोर देता है।

**एक ही दवा बार-बार डालने से खतरा क्यों बढ़ता है?:** फफूंदनाशी रोगजनक के अंदर किसी विशेष जैव-रासायनिक प्रक्रिया या लक्ष्य को प्रभावित करके काम करती है। इसे उसकी क्रिया-विधि कहा जाता है। कुछ दवाएँ रोगजनक की श्वसन प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं, कुछ कोशिका झिल्ली के निर्माण को और कुछ अन्य आवश्यक जैव-रासायनिक प्रक्रियाओं को बाधित करती हैं।अब मान लीजिए किसान को किसी दवा से बहुत अच्छा परिणाम मिला। वह अगली बार भी उसी दवा का उपयोग करता है और फिर अगली बार भी। यदि लगातार एक ही क्रिया-विधि वाली दवा का प्रयोग होता रहे, तो रोगजनक पर एक ही प्रकार का चयन दबाव बार-बार पड़ता है। संवेदनशील रोगजनक कम होते जाते हैं और कम संवेदनशील रोगजनकों को बढ़ने का अवसर मिल सकता है।केवल ब्रांड बदलना समाधान नहीं हैकिसान अक्सर एक ही दवा के अलग-अलग ब्रांड देखकर सोच सकते हैं कि दवा बदल गई है। लेकिन यहां एक महत्वपूर्ण बात समझने की जरूरत है-ब्रांड नाम बदलने का अर्थ हमेशा क्रिया-विधि बदलना नहीं होता।यदि दो अलग-अलग व्यापारिक नामों वाली दवाओं में एक ही सक्रिय संघटक या एक ही स्नक्रष्ट स्नश्वस्द्द श्रद्ध स्नह्रद्बश्चठ्ठ ह्लश्वह्लक्ष्ठ्ठ है, तो उन्हें प्रतिरोध प्रबंधन की दृष्टि से अलग विकल्प नहीं माना जा सकता। स्नक्रष्ट की वर्गीकरण प्रणाली इसी कारण महत्वपूर्ण है। यह फफूंदनाशियों को उनकी क्रिया-विधि के आधार पर समूहों में रखती है और किसानों तथा कृषि सलाहकारों को प्रतिरोध प्रबंधन में मदद करती है। इसलिए दवा खरीदते समय केवल कंपनी या ब्रांड नाम देखने के बजाय सक्रिय संघटक और अनुशंसित FRAC समूह की जानकारी पर ध्यान देना चाहिए।

**किसान कैसे बचा सकते हैं अपनी दवा की प्रभावशीलता?**

फफूंदनाशी प्रतिरोध का प्रबंधन किसी एक दवा से नहीं, बल्कि सही रणनीति से किया जाता है। सबसे पहली बात है-एक ही प्रकार की फफूंदनाशी को लगातार और बार-बार न दोहराना। जहां कृषि विशेषज्ञ या उत्पाद का लेबल सलाह देता हो, वहां अलग-अलग क्रिया-विधि वाली प्रभावी फफूंदनाशियों का उचित क्रम अपनाया जा सकता है।

दूसरी महत्वपूर्ण बात है सही मात्रा। किसान को यह नहीं सोचना चाहिए कि कम दवा डालने से खर्च बचेगा और अधिक दवा डालने से रोग जल्दी खत्म हो जाएगा। अनुशंसित मात्रा से कम प्रयोग करने पर रोग का पर्याप्त नियंत्रण न हो पाने का जोखिम रहता है, जबकि अनावश्यक रूप से अधिक मात्रा आर्थिक और पर्यावरणीय नुकसान बढ़ा सकती है। इसलिए हमेशा फसल, रोग और उत्पाद के लिए दी गई अनुशंसित मात्रा का पालन करना चाहिए। तीसरी बात है सही समय पर छिड़काव। जब रोग बहुत अधिक फैल जाता है, तब केवल दवा के सहारे उसे नियंत्रित करना कठिन हो सकता है। रोग के शुरुआती लक्षणों, मौसम की अनुकूल परिस्थितियों और स्थानीय कृषि सलाह को ध्यान में रखकर उपचार करना अधिक प्रभावी हो सकता है।

**दवा का प्रयोग जरूरत के अनुसार करें:** फसल में हर बार रोग दिखाई देने से पहले या केवल कैलेंडर के अनुसार फफूंदनाशी का छिड़काव करना जरूरी नहीं है। किसान को खेत की नियमित निगरानी करनी चाहिए और रोग की स्थिति के अनुसार निर्णय लेना चाहिए।अनावश्यक छिड़काव से उत्पादन लागत बढ़ती है और रोगजनक पर फफूंदनाशी का चयन दबाव भी बढ़ सकता है। इसके विपरीत, रोग की सही पहचान और समय पर उचित उपचार से दवा का अधिक समझदारी से उपयोग किया जा सकता है।

**क्या दो दवाओं को मिलाकर छिड़काव करना सही है?:** कुछ परिस्थितियों में अलग-अलग क्रिया-विधि वाली फफूंदनाशियों का उचित मिश्रण प्रतिरोध प्रबंधन में उपयोगी हो सकता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि किसान अपनी इच्छा से दो या तीन दवाओं को टैंक में मिलाकर छिड़काव कर दें। मिश्रण तभी अपनाना चाहिए जब वह संबंधित फसल और रोग के लिए अनुशंसित हो तथा दोनों घटक एक-दूसरे के साथ अनुकूल हों।

**रोग नियंत्रण केवल दवा से नहीं होगा:** फफूंदनाशी प्रतिरोध से बचने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि किसान रोग नियंत्रण को केवल रासायनिक दवाओं तक सीमित न रखें। समेकित रोग प्रबंधन को अपनाना अधिक टिकाऊ रास्ता है।इसके अंतर्गत रोगरोधी या सहनशील किस्मों का चुनाव, स्वस्थ बीज का उपयोग, फसल चक्र, संक्रमित फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन, खेत की स्वच्छता, संतुलित पोषण, उचित सिंचाई एवं जल निकास और आवश्यकता के अनुसार जैविक नियंत्रण जैसे उपाय शामिल किए जा सकते हैं।जब इन उपायों से रोग का प्रारंभिक दबाव कम रहता है, तो फफूंदनाशी पर निर्भरता भी कम की जा सकती है। इससे उपलब्ध दवाओं को लंबे समय तक प्रभावी बनाए रखने में मदद मिलती है।

**आने वाले समय की बड़ी चुनौती:** फफूंदनाशी प्रतिरोध केवल आज की समस्या नहीं है; यह भविष्य की फसल सुरक्षा से भी जुड़ा हुआ विषय है। यदि किसी महत्वपूर्ण रोगजनक में किसी प्रभावी दवा के प्रति प्रतिरोध व्यापक हो जाता है, तो किसान के लिए उपलब्ध नियंत्रण विकल्प सीमित हो सकते हैं। इसलिए वैज्ञानिक अब केवल नई दवाएँ खोजने पर ही नहीं, बल्कि प्रतिरोध की निगरानी, शीघ्र पहचान और बेहतर प्रबंधन पर भी काम कर रहे हैं। आधुनिक खोज के माध्यम से कुछ परिस्थितियों में प्रतिरोध से जुड़े बदलावों की तेजी से पहचान की संभावनाएँ विकसित हुई हैं। इसका अर्थ है कि भविष्य की खेती में "नई दवा" से ज्यादा महत्वपूर्ण "मौजूदा दवा का सही उपयोग" भी होगा।

**निष्कर्ष:** फफूंदनाशी दवाओं का असर कम होना हमेशा दवा की खराब गुणवत्ता का संकेत नहीं होता। कई बार समस्या गलत रोग पहचान, गलत मात्रा, गलत समय या खराब छिड़काव तकनीक के कारण होती है। लेकिन यदि किसी दवा का लगातार और बार-बार उपयोग किया जाए, तो रोगजनक आबादी में उसके प्रति कम संवेदनशीलता विकसित होने का खतरा बढ़ सकता है। इस समस्या का समाधान ज्यादा दवा डालना नहीं, बल्कि दवा का समझदारी से उपयोग करना है। सही रोग पहचान, अनुशंसित मात्रा, उचित समय, अलग-अलग क्रिया-विधि का विवेकपूर्ण उपयोग और समेकित रोग प्रबंधन-ये सभी मिलकर फफूंदनाशी प्रतिरोध को धीमा करने में मदद कर सकते हैं। आखिरकार, फफूंदनाशी केवल आज की फसल बचाने का साधन नहीं हैं; वे भविष्य की फसल सुरक्षा की भी महत्वपूर्ण संपत्ति हैं। इसलिए इनका उपयोग इस तरह करें कि दवा आज भी प्रभावी रहे और आने वाली फसलों के लिए भी उपलब्ध रहे।

निर्मल चंद्र, पंकज सिंह पटेल, शिवम सिंह
शोध छात्र कृषि प्रसार विभाग बांदा, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

# क्या अतिरिक्त कार्यभार भ्रष्टाचार को आमंत्रित कर रहा है?

**प्रस्तावना-**आज के इस दौर में भी सरकारी और निजी संस्थानों में कर्मचारी एवं सीमित संसाधनों और बढ़ते कार्यभार के बीच काम कर रहे हैं। तकनीकी विकास और आधुनिक प्रबंधन सिद्धांतों के बावजूद कार्यस्थलों पर मानसिक तनाव, प्रशासनिक दबाव और भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ अब भी दिखाई देती हैं। 21वीं सदी को प्रबंधन तकनीकी और प्रशासनिक सुधारों का युग माना जाता है। वैज्ञानिक प्रबंधन, मानव संबंध सिद्धांत, नियो क्लासिकल थ्योरी, संगठनात्मक व्यवहार और डिजिटल प्रशासन जैसे अनेक आधुनिक सिद्धांतों एवं व्यवस्थाओं को अपनाने के बाद यह उम्मीद की गई थी कि संस्थानों में कार्यक्षमता, पारदर्शिता और जवाबदेही मजबूत होगी। लेकिन वास्तविकता यह है कि आज भी अनेक सरकारी और निजी संस्थानों में कर्मचारियों पर अत्यधिक कार्यभार, कर्मचारियों की कमी, मानसिक तनाव और प्रशासनिक दबाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। परिणामस्वरूप कार्य में देरी, प्रक्रियागत त्रुटियाँ, शॉर्टकट संस्कृति और कई बार भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। यह हम सब के लिए आश्चर्य की बात है कि आधुनिक प्रबंधन सिद्धांतों ने संगठनात्मक कार्यप्रणाली को नई दिशा अवश्य दी है, लेकिन इसके बावजूद व्यवस्थागत चुनौतियाँ समाप्त क्यों नहीं हो पाई हैं, यह एक गंभीर चिंतन का विषय आज भी बना हुआ है।

**अतिरिक्त कार्यभार और भ्रष्टाचार के बीच प्रत्यक्ष संबंध-** प्रशासनिक एवं संगठनात्मक अध्ययन यह संकेत देते हैं कि अत्यधिक कार्यभार केवल कार्यक्षमता को ही प्रभावित नहीं करता, बल्कि यह भ्रष्टाचार और प्रशासनिक अनियमितताओं के लिए भी अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है। यह संबंध प्रत्यक्ष से अधिक प्रक्रियात्मक और मनोवैज्ञानिक होता है।

1. **प्रक्रियात्मक अनुपालन में कमी:** जब कर्मचारियों पर अत्यधिक कार्यभार और सीमित समय में कार्य पूरा करने का दबाव होता है, तब वे कई बार निर्धारित प्रक्रियाओं का पूर्ण रूप से पालन नहीं कर पाते हैं साथ ही दस्तावेजों की संख्या अधिक होने और समय कम होने की स्थिति में नियमों की जाँच, दस्तावेजों का सत्यापन और प्रशासनिक प्रक्रिया केवल औपचारिकता बनकर रह जाती है। इससे प्रक्रियागत पारदर्शिता धीरे-धीरे कमजोर होने लगती है।

2. **समय का दबाव और जल्दवाजी में लिए गए निर्णय :** समय सीमा कर्मचारियों को कार्य पूर्ण करने को सही तरीके से कार्य करने से अधिक महत्वपूर्ण मानने के लिए प्रेरित करती है। ऐसी परिस्थिति में शॉर्टकट व्यवहार विकसित होने लगता है, जहाँ नियमों को नजर अंदाज किया जाता है, प्रक्रियाओं को छोटा किया जाता है, तथा अनौपचारिक तरीकों को सामान्य मान लिया जाता है और धीरे-धीरे यही व्यवहार प्रशासनिक भ्रष्टाचार की नींव बन जाता है।

3. **कमजोर निगरानी और अवसर संरचना:** जब किसी संस्थान में कर्मचारियों की कमी होती है, तब निगरानी प्रणाली भी कमजोर पड़ जाती है। अत्यधिक कार्यभार के कारण वरिष्ठ अधिकारी प्रत्येक प्रक्रिया की प्रभावी जाँच नहीं कर पाते, जिससे "अवसर संरचना" विकसित होता है अर्थात ऐसी परिस्थितियाँ जहाँ अनियमितताओं और भ्रष्ट व्यवहार की संभावना बढ़ जाती है।

4. **तनाव और नैतिक निर्णय क्षमता में गिरावट:** कार्यस्थल का लगातार तनाव व्यक्ति की नैतिक निर्णय क्षमता को प्रभावित करता है ऐसा मनोवैज्ञानिक शोध बताते हैं कि मानसिक दबाव की स्थिति में व्यक्ति जल्दबाजी में निर्णय लेने लगता है और कई बार नैतिक मूल्यों की तुलना में तात्कालिक सुविधा को प्राथमिकता देता है यही कारण है कि अत्यधिक तनावपूर्ण कार्य वातावरण में ईमानदारी और जवाबदेही धीरे-धीरे कमजोर होने लगती है।

5. **प्रशासनिक थकान और अनियमितता सामान्यीकरण:** लगातार अतिरिक्त कार्य और मानसिक थकान प्रशासनिक थकावट उत्पन्न करती है। जब अनियमितताएँ लंबे समय तक बिना सुधार के बनी रहती हैं, तब वे धीरे-धीरे "सामान्य कार्य प्रणाली" का हिस्सा बन जाती हैं। इस प्रक्रिया को अनियमितता सामान्यीकरण कहा जा सकता है, जहाँ देरी, नियमों की अनदेखी और अनौपचारिक व्यवहार धीरे-धीरे संस्थागत संस्कृति में स्वीकार्य बनने लगते हैं। यही स्थिति आगे चलकर व्यवस्थागत भ्रष्टाचार अर्थात संस्थागत भ्रष्टाचार का रूप ले सकती है।

**प्रबंधन सिद्धांतों का उद्देश्य :** 1 साइंटिफिक मैनेजमेंट थ्योरी एफ.ब्लू. टेलर द्वारा प्रस्तुत साइंटिफिक मैनेजमेंट थ्योरी का उद्देश्य कार्य को वैज्ञानिक तरीके से विभाजित कर उत्पादकता बढ़ाना था। इस सिद्धांत में कार्य विभाजन, समय प्रबंधन तथा दक्षता पर जोर दिया गया था। लेकिन व्यवहार में कई संस्थानों ने "दक्षता" को केवल "अधिक काम" से जोड़ दिया, जिससे कर्मचारियों पर दबाव बढ़ता गया तब ऐसा माना गया की अभी कहीं न कहीं सुधार की आवश्यकता है उसके बाद फिर से नई थ्योरी को लाया जाता है

2. **नियो क्लासीकल थ्योरी:** इस थ्योरी ने यह स्पष्ट किया कि कर्मचारी केवल मशीन नहीं, बल्कि सामाजिक और भावनात्मक आवश्यकताओं वाला व्यक्ति है, इस सिद्धांत के अनुसार कार्य संतुष्टि, मानसिक स्वास्थ्य, प्रेरणा और स्वस्थ कार्य वातावरण किसी भी संस्थान की सफलता के लिए आवश्यक हैं। फिर भी वर्तमान व्यवस्था में कई संस्थान केवल लक्ष्य और परिणाम पर ध्यान देते हैं, जबकि कर्मचारियों के मानसिक और सामाजिक पक्ष की उपेक्षा कर दी जाती है।

3. **मॉडर्न मैनेजमेंट थ्योरी :** इस थ्योरी में संस्थानों को एक "सिस्टम" के रूप में देखने पर जोर दिया। इसके अनुसार किसी भी संगठन की सफलता केवल नियमों या उत्पादन पर नहीं, बल्कि मानव संसाधन, तकनीक, वातावरण और प्रशासनिक समन्वय के संतुलन पर निर्भर करती है। इस सिद्धांत में सिस्टम थ्योरी, आकस्मिकता सिद्धांत, व्यावहारिक विज्ञान, और संगठनात्मक विकास जैसे विचार शामिल हैं। यह सिद्धांत यह मानता है कि यदि किसी संस्थान में कार्य का संतुलित वितरण न हो, संवाद व्यवस्था कमजोर हो, कर्मचारियों पर अत्यधिक दबाव हो, और तकनीकी संसाधनों का सही उपयोग न हो, तो संस्थागत कार्यक्षमता और नैतिकता दोनों प्रभावित होंगी।

**फिर भी सुधार की आवश्यकता क्यों?** 1. थ्योरी और प्रैक्टिकल सिस्टम को इस प्रकार समझे की कई संस्थानों में प्रबंधन सिद्धांत केवल पुस्तकों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों तक सीमित रह जाते हैं व्यवहारिक स्तर पर कर्मचारियों की कमी, असंतुलित कार्य वितरण और अत्यधिक प्रशासनिक दबाव अब भी मौजूद हैं। यानी "मैनेजमेंट थ्योरी" का विकास हुआ है, लेकिन "मैनेजमेंट प्रैक्टिस" अभी भी कई स्थानों पर कमजोर है।

2. **संज्ञानात्मक ओवरलोड और निर्णय क्षमता में गिरावट-** मनोवैज्ञानिक शोध बताते हैं कि जब किसी व्यक्ति पर उसकी क्षमता से अधिक कार्यभार होता है, तब उसकी निर्णय क्षमता कमजोर हो जाती है। इसे संज्ञानात्मक ओवरलोड कहा जाता है। ऐसी स्थिति में कर्मचारी प्रक्रियाओं को छोटा करने, नियमों को नजरअंदाज करने, तथा जल्दी परिणाम देने के लिए गलत रास्ते (शॉर्टकट) अपनाने लगते हैं। यही परिस्थिति भ्रष्टाचार और प्रशासनिक अनियमितताओं को जन्म देती है।

3. **बर्नआउट सिंड्रोम और नैतिक गिरावट-** विश्व स्वास्थ्य संगठन ने बर्नआउट को कार्यस्थल से जुड़ी गंभीर मानसिक स्थिति माना है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, बर्नआउट कार्यस्थल पर लंबे समय तक बने रहने वाले तनाव का परिणाम है। लगातार अतिरिक्त कार्यभार, मानसिक दबाव और कार्य जीवन असंतुलन कर्मचारियों की उत्पादकता, निर्णय क्षमता और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकते हैं।

**भारतीय संदर्भ में वास्तविक उदाहरण-** अत्यधिक कार्यभार और प्रशासनिक दबाव की समस्या केवल सैद्धांतिक विषय नहीं है, बल्कि यह भारत के अनेक सरकारी विभागों में व्यवहारिक रूप से दिखाई देती है। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन के कार्य-समय संबंधी आँकड़ों के अनुसार भारत में बड़ी संख्या में कर्मचारी लंबे कार्य घंटे (24 घंटे या उससे अधिक प्रति सप्ताह) काम करते हैं। अत्यधिक कार्यभार कर्मचारियों के मानसिक स्वास्थ्य, निर्णय क्षमता, कार्य जीवन संतुलन तथा संस्थागत दक्षता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। सरकारी अस्पतालों का उदाहरण स्वास्थ्य क्षेत्र में भी मानव संसाधनों की कमी कार्यभार बढ़ने का प्रमुख कारण है। ग्रामीण और प्राथमिक स्वास्थ्य संस्थानों पर आधारित भारत सरकार की ग्रामीण स्वास्थ्य सांख्यिकी रिपोर्टों में डॉक्टरों, विशेषज्ञ चिकित्सकों तथा नर्सिंग स्टाफ के अनेक पद रिक्त पाए गए हैं। इन रिक्तियों के कारण उपलब्ध चिकित्सकों और स्वास्थ्यकर्मियों को अधिक मरीजों की जिम्मेदारी उठानी पड़ती है, जिससे प्रतीक्षा समय, रिकॉर्ड प्रबंधन तथा सेवा गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। पुलिस विभाग का उदाहरण भारत में पुलिस बल पर कार्यभार का दबाव एक गंभीर प्रशासनिक चुनौती है। ब्यूरो ऑफ पुलिस रिसर्च एंड डेवलपमेंट के अनुसार 1 जनवरी 2024 तक राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों में स्वीकृत पुलिस बल लगभग 27.55 लाख था, जबकि वास्तविक कार्यरत पुलिस बल लगभग 21.62 लाख था। अर्थात लगभग 5.9 लाख पद रिक्त थे। इतनी बड़ी रिक्ति के कारण उपलब्ध पुलिसकर्मियों पर अतिरिक्त कार्यभार बढ़ता है, जिससे लंबी ड्यूटी, निर्णय संबंधी दबाव और सेवा गुणवत्ता प्रभावित होने की संभावना बढ़ जाती है। राजस्व विभाग का उदाहरण राजस्व विभागों में भूमि अभिलेख, नामांतरण, सीमांकन तथा राजस्व न्यायालयों से संबंधित बड़ी संख्या में लंबित प्रकरण प्रशासनिक दबाव को बढ़ाते हैं। कई राज्यों के राजस्व विभागों तथा डिजिटल भूमि अभिलेख प्रणालियों की वार्षिक रिपोर्टें दर्शाती हैं कि लंबित मामलों एवं सीमित कर्मचारियों के कारण नागरिक सेवाओं में विलंब होता है। ऐसी परिस्थितियों में प्रक्रियागत पारदर्शिता बनाए रखना प्रशासन के लिए चुनौती बन सकता है।

**यह राष्ट्रीय विकास को कैसे प्रभावित करता है ?**

**आर्थिक अक्षमता-** जब प्रशासनिक व्यवस्था दबाव और भ्रष्टाचार से प्रभावित होती है, तब योजनाओं की लागत बढ़ती है, परियोजनाएँ देर से पूरी होती हैं, और संसाधनों का दुरुपयोग बढ़ता है। विश्व बैंक के अनुसार भ्रष्टाचार विकास परियोजनाओं की लागत को 20-25% तक बढ़ा सकता है।

**संस्थागत विश्वास में गिरावट-** यदि नागरिकों को यह महसूस होने लगे कि कार्यालयों में बिना दबाव या "सुविधा शुल्क" के कार्य नहीं होगा, तब जनता का विश्वास संस्थानों से कम होने लगता है। यह लोकतांत्रिक व्यवस्था और सामाजिक स्थिरता दोनों को प्रभावित करता है।

**मानव पूंजी हानि-** जब कार्य वातावरण अत्यधिक तनावपूर्ण हो जाता है, तब प्रतिभाशाली और ईमानदार कर्मचारी व्यवस्था से निराश होने लगते हैं। यह स्थिति देश की मानव पूंजी को कमजोर करती है।

**अब किस प्रकार के सुधार आवश्यक हैं?**

**मानव-केंद्रित प्रबंधन-** आधुनिक प्रबंधन को केवल कार्य परिणामों तक सीमित न रखकर कर्मचारियों के मानसिक स्वास्थ्य और कार्य संतुलन पर भी ध्यान देना होगा।

1 कार्यभार अनुकूलन कार्य का वैज्ञानिक वितरण आवश्यक है ताकि एक कर्मचारी पर अत्यधिक दबाव न पड़े। 2. डिजिटल गवर्नेंस और ऑटोमेशन ई-गवर्नेंस, एआई आधारित फाइल प्रबंधन और डिजिटल मॉनिटरिंग भ्रष्टाचार और देरी दोनों को कम कर सकते हैं। 3. नैतिक प्रशासनिक संस्कृति में केवल नियम बनाना पर्याप्त नहीं है। संस्थानों में नैतिक कार्य संस्कृति को बढ़ावा देना भी आवश्यक है।

**संस्थागत या व्यवस्थागत भ्रष्टाचार-**जब प्रशासनिक दबाव, कर्मचारियों की कमी और अत्यधिक कार्यभार लंबे समय तक बने रहते हैं, तब भ्रष्टाचार केवल व्यक्तिगत समस्या नहीं रह जाता, बल्कि वह संस्थागत या व्यवस्थागत भ्रष्टाचार का रूप लेने लगता है। ऐसी स्थिति में अनियमितताएँ धीरे-धीरे कार्य संस्कृति का सामान्य हिस्सा बन जाती हैं, जहाँ देरी, प्रक्रियागत शिथिलता और अनौपचारिक व्यवहार व्यवस्था में स्वीकार्य होने लगते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका



# रोसेला की वैज्ञानिक खेती एवं प्रसंस्करण से किसानों की आय में वृद्धि: एक उभरती कृषि फसल

**हिमांशु प्रजापति** (एमएससी छात्र), सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय प्रो.राजेंद्र सिंह (रज्जु भैया) विश्वविद्यालय प्रयागराज

**डॉ.ललित कुमार सनोदिया**

**डॉ. अवनीश यादव** सहायक प्रोफेसर, कृषि विज्ञान संकाय प्रो.राजेंद्र सिंह (रज्जु भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

## सारांश

कृषि में फसल विविधीकरण, टिकाऊ उत्पादन और किसानों की आय बढ़ाना वर्तमान समय की प्रमुख आवश्यकताओं में शामिल है। इसी दिशा में रोसेला (Hibiscus sabdariffa L.) एक महत्वपूर्ण एवं बहुउपयोगी फसल के रूप में उभर रही है। रोसेला को विभिन्न क्षेत्रों में इसके कोमल पत्तों, कैलीक्स (मांसल बाह्यदल), बीज तथा तने के लिए उगाया जाता है। इसके कैलीक्स में एंथोसायनिन, कार्बनिक अम्ल, पॉलीफेनॉल तथा अन्य जैव सक्रिय यौगिक पाए जाते हैं, जिसके कारण इसका उपयोग पेय पदार्थ, खाद्य उत्पाद तथा प्राकृतिक रंगों में किया जाता है।

## परिचय

भारतीय कृषि में लंबे समय से गेहूँ, धान, मक्का, दलहन तथा तिलहन जैसी प्रमुख फसलों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। हालांकि बदलती जलवायु, बाजार की अनिश्चितता, उत्पादन लागत और किसानों की आय में स्थिरता की आवश्यकता को देखते हुए नई एवं बहुउपयोगी फसलों को कृषि प्रणाली में शामिल करना आवश्यक हो गया है। रोसेला (Hibiscus sabdariffa L.) मालवेसी कुल की एक वार्षिक फसल है। इसे कई क्षेत्रों में सब्जी, पेय, औषधीय उपयोग, रेशा तथा अन्य उत्पादों के लिए उगाया जाता है। साहित्य में रोसेला के विभिन्न भागों पत्तियों, कोमल तनों, कैलीक्स और बीज के खाद्य तथा औद्योगिक उपयोग का उल्लेख मिलता है।

## रोसेला की प्रमुख विशेषताएँ

रोसेला एक तेजी से बढ़ने वाली शाकीय फसल है, जिसे उष्ण एवं उपोष्ण परिस्थितियों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसकी विशेषता इसके बहुउपयोगी पौध भाग हैं।

## प्रमुख उपयोग

| कच्चा माल | संभावित उत्पाद |
|---|---|
| कैलीक्स | हर्बल पेय/शरबत |
| कैलीक्स | जैम एवं जेली |
| कैलीक्स | प्राकृतिक खाद्य रंग |
| सूखे कैलीक्स | चाय/इन्फ्यूजन |
| बीज | तेल |
| पत्तियाँ | खाद्य/सब्जी उत्पाद |
| तना | रेशा |

रोसेला के कैलीक्स में एंथोसायनिन जैसे प्राकृतिक

रंगद्रव्य पाए जाते हैं, जिनके कारण प्राकृतिक लाल रंग के स्रोत के रूप में इसकी उपयोगिता बढ़ी है।

## जलवायु एवं मिट्टी

रोसेला सामान्यतः गर्म जलवायु वाली फसल है और विभिन्न परिस्थितियों में अनुकूलन की क्षमता रखती है। हालांकि अच्छी वृद्धि तथा गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के लिए उपयुक्त तापमान, पर्याप्त धूप और अच्छी जल निकास वाली मिट्टी आवश्यक है।

## भूमि की तैयारी एवं बुवाई

खेत की तैयारी का मुख्य उद्देश्य मिट्टी को भुरभुरा बनाना, खरपतवारों को नियंत्रित करना और बीज के अच्छे अंकुरण के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करना है।

## पोषक तत्व प्रबंधन

**इसलिए पोषक तत्व प्रबंधन में निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए-** * मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरक उपयोग। * जैविक खाद/कम्पोस्ट का समावेश। * आवश्यकतानुसार जैव उर्वरकों का प्रयोग। * नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश का संतुलित उपयोग। * अत्यधिक उर्वरक प्रयोग से बचाव।

## खरपतवार प्रबंधन

फसल की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार रोसेला के साथ पानी, पोषक तत्व, प्रकाश और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसलिए प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

## इसके लिए

* समय पर निराई-गुड़ाई * उचित पौध दूरी * खेत की स्वच्छता * फसल चक्र * आवश्यकता के अनुसार अनुशंसित खरपतवार नियंत्रण तकनीक का उपयोग किया जा सकता है।

## कीट एवं रोग प्रबंधन

रोसेला में कीट एवं रोगों का प्रकोप क्षेत्र, मौसम और फसल अवस्था के अनुसार बदल सकता है। इसलिए एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) को प्राथमिकता देना चाहिए।

## कटाई एवं कटाई उपरांत प्रबंधन

रोसेला की आर्थिक सफलता में कटाई का सही समय अत्यंत महत्वपूर्ण है। विशेष रूप से कैलीक्स की गुणवत्ता उसके आकार, रंग, नमी और जैव सक्रिय यौगिकों से जुड़ी होती है। शोध में यह पाया गया है कि कटाई का समय और कटाई के बाद की प्रक्रियाएँ उत्पाद की गुणवत्ता, भंडारण क्षमता और बाजार मूल्य को प्रभावित करती हैं।

## कटाई के बाद

छंटाई * सफाई * सुखाना * ग्रेडिंग * पैकिंग * भंडारण * प्रसंस्करणप्रक्रिया की जाती है।

## प्राकृतिक रंग के रूप में रोसेला

आज उपभोक्ताओं और खाद्य उद्योग में प्राकृतिक रंगों के प्रति रुचि बढ़ रही है। रोसेला के कैलीक्स में उपस्थित एंथोसायनिन इसे प्राकृतिक लाल रंग के संभावित स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण बनाते हैं। इस क्षेत्र में आधुनिक extraction technologies पर भी शोध हो रहा है। इसका भविष्य खाद्य, औषधीय, कॉस्मेटिक तथा अन्य उद्योगों में प्राकृतिक रंगों के उपयोग से जुड़ा हो सकता है। इस प्रकार रोसेला केवल कृषि उत्पाद नहीं, बल्कि प्राकृतिक रंग एवं जैव सक्रिय यौगिकों का संभावित स्रोत भी है।

## मूल्य संवर्धन से किसान की आय में वृद्धि

**किसान को केवल कच्चा माल बेचने के बजाय प्राथमिक प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन से उत्पाद का बेहतर बाजार मूल्य प्राप्त करने की संभावना हो सकती है। उदाहरण के लिए-**

रोसेला उत्पादन * कैलीक्स की छंटाई * सुखाना * पैकेजिंग * पेय/जैम/चाय * ब्रांडिंग * बाजार

## निष्कर्ष

रोसेला (Hibiscus sabdariffa L.) एक बहुउपयोगी एवं संभावनाशील फसल है, जिसे फसल विविधीकरण, मूल्य संवर्धन और ग्रामीण उद्यमिता की दृष्टि से महत्वपूर्ण बनाया जा सकता है। इसकी सफलता केवल अच्छी उपज प्राप्त करने पर निर्भर नहीं करती, बल्कि उन्नत किस्म + संतुलित पोषण + उचित जल प्रबंधन + वैज्ञानिक कटाई + गुणवत्तापूर्ण प्रसंस्करण + प्रभावी विपणन के संयुक्त दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। विशेष रूप से कैलीक्स आधारित उत्पाद, प्राकृतिक रंग, बीज तेल और अन्य मूल्यवर्धित उत्पाद किसानों तथा ग्रामीण युवाओं के लिए नए उद्यम अवसर पैदा कर सकते हैं। इसलिए रोसेला को केवल एक वैकल्पिक फसल के रूप में नहीं, बल्कि "Farm to Value Chain" आधारित कृषि उद्यम के रूप में विकसित करने की आवश्यकता है।

प्रखर राय सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ. ललित कुमार सनोदिया
डॉ. अखिलेश कुमार सिंह सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

# जल–जंगल–जमीन बचाना पर्यावरण नहीं, कृषि बचाना है

किसान जब खेत में बीज डालता है, तो वह केवल एक फसल नहीं बोता। वह अपनी उम्मीद, अपने परिवार का भविष्य और आने वाले मौसमों की रोटी भी बोता है। लेकिन उस बीज की सफलता केवल किसान की मेहनत पर निर्भर नहीं होती। उसके पीछे तीन ऐसी शक्तियाँ खड़ी होती हैं, जिनके बिना कृषि की कल्पना अधूरी है-जल, जंगल और जमीन।

हम अक्सर पर्यावरण संरक्षण को पेड़ लगाने, नदियों को साफ करने या प्रदूषण कम करने तक सीमित समझ लेते हैं। वास्तव में यह उससे कहीं बड़ा प्रश्न है। जल बचेगा तो खेत बचेगा, जंगल बचेंगे तो जल बचेगा और जमीन स्वस्थ रहेगी तो अन्न पैदा होगा। इसलिए जल, जंगल और जमीन को बचाना केवल पर्यावरण की रक्षा करना नहीं, बल्कि कृषि की नींव को बचाना है।

## जल-खेती की पहली जरूरत

भारतीय कृषि का इतिहास पानी के साथ चलता आया है। वर्षा, नदियाँ, तालाब, कुएँ और भूजल हमारे खेतों की जीवनरेखा रहे हैं। लेकिन आज भूजल का लगातार दोहन, वर्षा के पानी का तेजी से बह जाना और जलस्रोतों का सिकुड़ना खेती के सामने बड़ी चुनौती बन रहे हैं। किसान के लिए पानी केवल सिंचाई का साधन नहीं है। यह उसकी फसल की लागत, उत्पादन और आय से जुड़ा हुआ है। पानी की कमी होने पर किसान को महंगी सिंचाई करनी पड़ती है और अधिक पानी मिलने पर भी कई बार फसल को नुकसान होता है।इसलिए आवश्यकता केवल अधिक पानी की नहीं, बल्कि सही समय पर सही मात्रा में पानी की है। खेत-तालाब, वर्षाजल संचयन, मेड़बंदी, सूक्ष्म सिंचाई, मल्चिंग और जल-संरक्षण आधारित खेती जैसे उपाय इस दिशा में महत्वपूर्ण हैं।

## जंगल-जल के मौन प्रहरी

जंगल को हम अक्सर लकड़ी और वन्यजीवों से जोड़कर देखते हैं, लेकिन किसान के लिए जंगल की भूमिका इससे कहीं बड़ी है। पेड़ वर्षा के जल को धरती में पहुँचाने, मिट्टी को पकड़कर रखने और जलचक्र को संतुलित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

जहाँ वनस्पति आवरण कम होता है, वहाँ वर्षा का पानी तेजी से बहकर मिट्टी की ऊपरी उपजाऊ परत को अपने साथ ले जाता है। यही मिट्टी खेतों की वास्तविक पूंजी है।इसलिए खेत के किनारे पेड़, कृषि वानिकी, चारागाहों का संरक्षण और स्थानीय वनस्पतियों की रक्षा केवल हरियाली बढ़ाने के उपाय नहीं हैं। ये मिट्टी और पानी दोनों को बचाने की कृषि रणनीतियाँ हैं।

## जमीन-किसान की सबसे बड़ी पूंजी

किसान की असली संपत्ति केवल उसका खेत नहीं, बल्कि स्वस्थ और उपजाऊ मिट्टी है। यदि मिट्टी में जैविक पदार्थ घटता जाए, कटाव बढ़ता जाए और पोषक तत्वों का संतुलन बिगड़ता जाए, तो कुछ समय तक उत्पादन चलता रह सकता है, लेकिन लंबे समय में कृषि की नींव कमजोर हो जाती है।

आज आवश्यकता ऐसी खेती की है जिसमें मिट्टी से केवल उपज न ली जाए, बल्कि उसकी सेहत भी लौटाई जाए। फसल अवशेषों को जलाने के बजाय खेत में उपयोग करना, जैविक पदार्थ बढ़ाना, फसल चक्र अपनाना, दलहनी फसलों को शामिल करना और मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना मिट्टी को स्वस्थ रखने के प्रभावी उपाय हैं।जिस मिट्टी को हम आने वाली पीढ़ियों से उधार लेकर खेती कर रहे हैं, उसे अपनी पीढ़ी में समाप्त कर देना विकास नहीं हो सकता।

तीनों अलग नहीं, एक ही व्यवस्था के हिस्से हैं

जल, जंगल और जमीन को अलग-अलग समस्याओं की तरह देखने से समाधान अधूरा रहेगा। जंगल वर्षा और जल-संचयन को प्रभावित करते हैं। जल मिट्टी की उत्पादकता को बनाए रखता है। स्वस्थ मिट्टी वनस्पतियों और फसलों को जीवन देती है। फसलें और वनस्पतियाँ फिर जल, मिट्टी और जैव विविधता के चक्र को मजबूत करती हैं।यानी यह केवल तीन संसाधनों की कहानी नहीं है। यह जीवन के एक-दूसरे से जुड़े चक्र की कहानी है।इसीलिए कृषि का भविष्य केवल अधिक उत्पादन में नहीं, बल्कि संतुलित उत्पादन में है-ऐसा उत्पादन जिसमें किसान की आय बढ़े, मिट्टी की उर्वरता बनी रहे, पानी की बचत हो और प्रकृति पर अनावश्यक दबाव न पड़े।

## किसान समाधान का हिस्सा है

पर्यावरण संरक्षण की चर्चा करते समय किसान को समस्या के रूप में नहीं, समाधान के साझेदार के रूप में देखना होगा। खेतों में जल-संरक्षण, कृषि वानिकी, फसल विविधीकरण, संरक्षण कृषि और प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग किसान को पर्यावरण का रक्षक भी बनाते हैं और उसकी उत्पादन लागत को कम करने में भी सहायता करते हैं। इसके लिए किसान को केवल सलाह नहीं, बल्कि तकनीक, बाजार, प्रशिक्षण और उचित आर्थिक प्रोत्साहन भी मिलना आवश्यक है। क्योंकि जिस किसान से हम जल और मिट्टी बचाने की अपेक्षा करते हैं, उसकी आर्थिक सुरक्षा भी सुनिश्चित करनी होगी।

**आज की बचत, कल की खेती**-हमें यह समझना होगा कि खेत में पानी की एक बची हुई बूंद, मिट्टी की एक बची हुई परत और जंगल का एक बचा हुआ पेड़ केवल आज के लिए नहीं बचता। उसका लाभ वर्षों तक मिलता है। आज यदि हम भूजल को बचाते हैं, तो कल की फसल सुरक्षित होती है। आज यदि हम पेड़ लगाते और जंगल बचाते हैं, तो आने वाली पीढ़ियों के लिए जल और मिट्टी सुरक्षित होती है। आज यदि हम जमीन की सेहत सुधारते हैं, तो कल भी वह हमें अन्न देने में सक्षम रहेगी।इसलिए जल-जंगल-जमीन की रक्षा कोई अलग पर्यावरणीय अभियान नहीं है। यह खेत की रक्षा है, किसान की रक्षा है और भोजन की सुरक्षा है।

अंततः हमें विकास और प्रकृति के बीच चुनाव नहीं करना है। हमें ऐसा विकास चुनना है जिसमें दोनों साथ चल सकें। क्योंकि जब जल सूखता है, जंगल घटते हैं और जमीन थकती है, तो सबसे पहले संकट खेती पर आता है और उसके बाद जीवन पर।

# भिंडी में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण

जितेन्द्र कुमार शर्मा, विजय कमल मीणा
हर्षवर्धन सिंह शेखावत, अरविंद कुमार
बसवाल एवं लेखा कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर

**प्रस्तावना:** भिंडी (Abelmoschus esculentus L-) भारत की प्रमुख सब्जी फसलों में से एक है। इसकी फलियों का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है तथा इसमें प्रोटीन, खनिज तत्व, विटामिन एवं आहारीय रेशा पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। राजस्थान सहित देश के विभिन्न भागों में इसकी खेती खरीफ एवं गर्मी दोनों मौसमों में की जाती है। भिंडी की फसल में अनेक फफूंदजनित, जीवाणुजनित तथा विषाणुजनित रोग लगते हैं, जिनमें पीला शिरा मोजेक रोग, चूर्णिल आसिता, पत्ती धब्बा, जड़ एवं तना गलन तथा डैम्पिंग-ऑफ प्रमुख हैं। इन रोगों के कारण पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है तथा फलियों की संख्या एवं गुणवत्ता में कमी आती है। रोगों का प्रबंधन केवल रसायनों के प्रयोग से न करके समेकित रोग प्रबंधन (Integrated Disease Management) के सिद्धांतों के आधार पर करना अधिक प्रभावी एवं आर्थिक होता है।

1. **पीला शिरा मोजेक रोग-** भिंडी का पीला शिरा मोजेक रोग सबसे महत्वपूर्ण रोगों में से एक है। यह विषाणुजनित रोग है और इसका प्रमुख प्रसार सफेद मक्खी 'Bemisia tabaci' द्वारा होता है।

**लक्षण-** रोग की प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों की शिराएँ पीली पड़ने लगती हैं। धीरे-धीरे छोटी शिराओं सहित पूरा शिरा-जाल पीला दिखाई देने लगता है। अधिक संक्रमण की स्थिति में पत्ती का अधिकांश भाग पीला हो जाता है। रोगग्रस्त पौधों की वृद्धि रुक जाती है तथा फलियाँ छोटी, कम संख्या में और निम्न गुणवत्ता की बनती हैं। पौधे की प्रारंभिक अवस्था में संक्रमण होने पर उत्पादन में काफी कमी हो सकती है।

**नियंत्रण** * स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज का उपयोग करें। * खेत में रोगग्रस्त पौधों को प्रारंभिक अवस्था में उखाड़कर नष्ट करें। * सफेद मक्खी की निगरानी के लिए पीले चिपचिपे ट्रैप लगाए जा सकते हैं। * खेत एवं आसपास के क्षेत्र में खरपतवारों को नियंत्रित रखें, क्योंकि वे वायरस एवं कीट के लिए वैकल्पिक स्रोत बन सकते हैं। * आवश्यकता के अनुसार सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु पंजीकृत कीटनाशकों का लेबल पर दी गई मात्रा एवं निर्देशों के अनुसार प्रयोग करें। * रोगरोधी/सहनशील किस्मों का उपयोग रोग प्रबंधन का सबसे प्रभावी एवं पर्यावरण-अनुकूल उपाय है।

2. **चूर्णिल आसिता 'Powdery Mildew'**-यह भिंडी का प्रमुख फफूंदजनित रोग है। रोग की अनुकूल परिस्थितियों में यह तेजी से फैल है।

**लक्षण-** पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद रंग का चूर्ण जैसा पदार्थ दिखाई देता है। बाद में ये धब्बे बढ़कर पत्ती के बड़े भाग को ढक लेते हैं। गंभीर संक्रमण में पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती हैं तथा पौधे की सामान्य वृद्धि प्रभावित होती है।

**नियंत्रण** * खेत में पौधों के बीच उचित दूरी रखें ताकि वायु का संचार अच्छा बना रहे। * अत्यधिक घनी फसल एवं अनावश्यक नाइट्रोजन उर्वरक के प्रयोग से बचें। * संक्रमित पत्तियों एवं पौधों के अवशेषों को खेत से हटाकर नष्ट करें। * रोग की प्रारंभिक अवस्था में उपयुक्त पंजीकृत फफूंदनाशी का प्रयोग करें। * एज़ोक्सीस्ट्रोबिन, टेबुकोनाजोल अथवा डाइफेनोकोनाजोल का अनुशंसित मात्रा में छिड़काव करें।

3. **पत्ती धब्बा रोग-** भिंडी में विभिन्न प्रकार के फफूंदों के कारण पत्ती धब्बा रोग हो सकता है। इनमें Cercospora एवं Alternaria से संबंधित पत्ती धब्बे महत्वपूर्ण हैं।

**लक्षण-** पत्तियों पर छोटे-छोटे भूरे, गहरे भूरे अथवा काले धब्बे दिखाई देते हैं। रोग बढ़ने पर धब्बे आपस में मिल जाते हैं और पत्ती का बड़ा भाग प्रभावित हो जाता है। गंभीर संक्रमण में पत्तियाँ समय से पहले गिर सकती हैं, जिससे पौधे की प्रकाश संश्लेषण क्षमता एवं उत्पादन प्रभावित होता है।

**नियंत्रण** * स्वस्थ एवं रोगमुक्त बीज का प्रयोग करें। * संक्रमित फसल अवशेषों को खेत में न छोड़ें। * खेत में उचित जल निकास की व्यवस्था रखें। * अत्यधिक नमी एवं पत्तियों पर लंबे समय तक पानी बने रहने से बचें। * एजोक्सीस्ट्रोबिन, टेबुकोनाजोल अथवा डाइफेनोकोनाजोल का अनुशंसित मात्रा में छिड़काव करें।

4. **डैम्पिंग-ऑफ रोग-डैम्पिंग**-ऑफ मुख्यतः पौधशाला एवं छोटे पौधों में दिखाई देता है। यह मृदा एवं बीज से संबंधित रोगजनकों के कारण हो सकता है।

**लक्षण-**बीज के अंकुरित होने से पहले ही सड़ने की समस्या हो सकती है। अंकुर निकलने के बाद पौधे का तना भूमि की सतह के पास से पतला, नरम एवं सड़ा हुआ हो जाता है और पौधा गिर जाता है। अधिक संक्रमण में पौधशाला में पौधों की संख्या तेजी से कम हो सकती है।

**नियंत्रण** * स्वस्थ एवं अच्छी गुणवत्ता वाले बीज का प्रयोग करें। * बीज की उचित बीजोपचार तकनीक अपनाएँ। * पौधशाला में जल निकास की अच्छी व्यवस्था रखें। * आवश्यकता से अधिक सिंचाई न करें। * पौधशाला में उचित दूरी रखें और अत्यधिक घनत्व से बचें। * जैव-नियंत्रण के लिए जत्पबीवकमतउं आधारित पंजीकृत जैव-उत्पादों का उपयोग किया जा सकता है।

5. **जड़ एवं तना गलन-**भिंडी में अधिक नमी, खराब जल निकास तथा मृदा में उपस्थित रोगजनकों के कारण जड़ एवं तना गलन की समस्या हो सकती है।

**लक्षण-**प्रभावित पौधों की जड़ों पर भूरापन एवं सड़न दिखाई देती है। धीरे-धीरे पौधे की जड़ें कमजोर हो जाती हैं और पौधा मुरझाने लगता है। भूमि की सतह के पास तने पर भी सड़न दिखाई दे सकती है। गंभीर स्थिति में पूरा पौधा सूख जाता है।

**नियंत्रण** * खेत में उचित जल निकास रखें। * जलभराव की स्थिति उत्पन्न न होने दें। * स्वस्थ बीज का प्रयोग करें। * फसल चक्र अपनाएँ। * संक्रमित पौधों को निकालकर खेत से बाहर नष्ट करें। * जैविक नियंत्रण के लिए जत्पबीवकमतउं आधारित उत्पादों का उपयोग किया जा सकता है। * रासायनिक फफूंदनाशकों का प्रयोग रोग की पहचान के बाद संबंधित उत्पाद के लेबल एवं स्थानीय कृषि अनुशंसाओं के अनुसार करें।

**समेकित रोग प्रबंधन-**भिंडी के रोगों को प्रभावी रूप से नियंत्रित करने हेतु निम्नलिखित उपायों को एक साथ अपनाना चाहिए

* प्रमाणित एवं स्वस्थ बीज का उपयोग करें। * रोगरोधी अथवा रोग-सहनशील किस्मों का चयन करें। * बीजोपचार को प्राथमिकता दें। * खेत में उचित पौध दूरी एवं वायु संचार बनाए रखें। * जल निकास की उचित व्यवस्था रखें। * संतुलित उर्वरक प्रबंधन अपनाएँ तथा नाइट्रोजन की अधिक मात्रा से बचें। * नियमित रूप से फसल का निरीक्षण करें और रोग की प्रारंभिक अवस्था में पहचान करें। * रोगग्रस्त पौधों एवं संक्रमित पत्तियों को खेत से निकालकर नष्ट करें। * पीला शिरा मोजेक रोग में सफेद मक्खी का प्रभावी प्रबंधन करें। * खेत एवं आसपास के क्षेत्र को खरपतवार मुक्त रखें। * आवश्यकता के अनुसार पंजीकृत फफूंदनाशी/कीटनाशक का ही प्रयोग करें तथा लेबल पर दी गई मात्रा एवं सुरक्षा निर्देशों का पालन करें। * एक ही रसायन का बार-बार प्रयोग न करके अलग-अलग क्रियाविधि वाले रसायनों का उचित रोटेशन करें।

**निष्कर्ष-**भिंडी में रोगों का प्रकोप उत्पादन एवं फलियों की गुणवत्ता को काफी प्रभावित कर सकता है। विशेष रूप से पीला शिरा मोजेक रोग आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, जबकि चूर्णिल आसिता, पत्ती धब्बा, डैम्पिंग-ऑफ तथा जड़ एवं तना गलन भी अनुकूल परिस्थितियों में गंभीर समस्या उत्पन्न कर सकते हैं। अतः रोगों की प्रारंभिक पहचान, स्वस्थ बीज का उपयोग, उचित कृषि प्रबंधन, रोगग्रस्त पौधों का निष्कासन, कीट वाहकों का नियंत्रण तथा आवश्यकता के अनुसार पंजीकृत रसायनों का विवेकपूर्ण प्रयोग करके भिंडी की फसल को रोगों से प्रभावी रूप से बचाया जा सकता है। समेकित रोग प्रबंधन अपनाने से उत्पादन लागत को नियंत्रित रखते हुए सुरक्षित एवं गुणवत्तापूर्ण उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता : पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/205-26

**मुकेश गोदारा** सहायक प्राध्यापक मृदा विज्ञान
एपेक्स कृषि महाविद्यालय चाईया (रावतसर) (राजस्थान)

# हरी खाद मट्टी की सेहत का राज

भारत एक कृषि प्रधान देश है और देश की बड़ी आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। अच्छी फसल के लिए केवल अच्छे बीज और पर्याप्त पानी ही जरूरी नहीं हैं, बल्कि 'मिट्टी का स्वस्थ और उपजाऊ होना भी उतना ही महत्वपूर्ण है।' लगातार खेती, फसल अवशेषों की कमी और रासायनिक उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग से मिट्टी में जैविक पदार्थ और पोषक तत्वों की कमी हो सकती है। ऐसी स्थिति में ''हरी खाद'' मिट्टी की उर्वरता सुधारने का एक प्राकृतिक, सस्ता और प्रभावी तरीका है।

## हरी खाद

हरी खाद ऐसी फसल या पौध सामग्री है जिसे हरी अवस्था में खेत में उगाकर बाद में मिट्टी में पलटकर मिला दिया जाता है। पौधे मिट्टी में सड़ने-गलने के बाद जैविक पदार्थ में बदलते हैं और मिट्टी को पोषक तत्व उपलब्ध कराने में मदद करते हैं। ''ढैंचा, सनई, लोबिया, मूंग और ग्वार'' जैसी फसलों का उपयोग हरी खाद के लिए किया जाता है। इनमें ढैंचा किसानों के बीच विशेष रूप से लोकप्रिय है तथा सामान्य परिस्थितियों में हरी खाद की फसल को लगभग 45 से 60 दिन की अवस्था में मिट्टी में पलटकर मिलाया जा सकता है।

हरी खाद की फसल के लिए बीज की मात्रा फसल और क्षेत्र के अनुसार बदलती है। उदाहरण के लिए, ढैंचा की बुवाई में सामान्यतः लगभग 20 से 25 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की दर उपयोग की जाती है तथा दलहनी हरी खाद वाली फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन को जैविक प्रक्रिया के माध्यम से मिट्टी में जोड़ने में मदद करती हैं। अच्छी तरह सड़ी हुई हरी खाद मिट्टी में ''जैविक पदार्थ, जल धारण क्षमता और मिट्टी की संरचना'' सुधारने में सहायक होती है। ध्यान दें बीज दर, बुवाई का समय और मिट्टी में मिलाने की अवधि फसल, मिट्टी, सिंचाई तथा स्थानीय कृषि परिस्थितियों के अनुसार बदल सकती है।

**हरी खाद की बुवाई**-हरी खाद की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए खेत की तैयारी, बीज की मात्रा, बुवाई का समय और सिंचाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

1. **खेत की तैयारी**-सबसे पहले खेत की एक सामान्य जुताई करके मिट्टी को भुरभुरा बना लें तथा खेत में बहुत बड़े ढेले नहीं होने चाहिए। इसके बाद पाटा लगाकर खेत को समतल कर लें, ताकि सिंचाई का पानी पूरे खेत में समान रूप से पहुँच सके।

2. **सही फसल का चुनाव**- स्थानीय मिट्टी और मौसम के अनुसार हरी खाद की फसल का चुनाव करें। ''ढैंचा'' सामान्यतः गर्म मौसम में अच्छी तरह बढ़ता है और कई प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है लेकिन दलहनी फसलों का चुनाव करने से मिट्टी में जैविक नाइट्रोजन बढ़ाने में भी मदद मिलती है।

## 3. बीज की मात्रा

ढैंचा के लिए लगभग 20 से 25 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की दर एक सामान्य मार्गदर्शक मात्रा है। यदि बीज की गुणवत्ता अच्छी हो और खेत की तैयारी उचित हो, तो समान रूप से पौध संख्या प्राप्त की जा सकती है तथा छोटे किसान अपने खेत के क्षेत्रफल के अनुसार मात्रा निकाल सकते हैं। उदाहरण के लिए, 1 एकड़ में लगभग 8 से 10 किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ सकती है।

## 4. बीज उपचार

बुवाई से पहले बीज का उचित उपचार करना लाभदायक होता है। दलहनी हरी खाद वाली फसलों में संबंधित ''राइजोबियम कल्चर'' का उपयोग किया जा सकता है। इससे जड़ों में गांठों के विकास और नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा मिलता है तथा बीज उपचार के लिए स्थानीय कृषि विज्ञान केंद्र या कृषि विभाग की अनुशंसा को प्राथमिकता देना चाहिए।

## 5. बुवाई का समय

हरी खाद की बुवाई सामान्यतः ''खरीफ फसल से पहले या सिंचाई की उपलब्धता के अनुसार खाली खेत में'' की जाती है। गर्मी में भी सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्रों में हरी खाद उगाई जा सकती है तथा बुवाई का सही समय स्थानीय जलवायु और अगली मुख्य फसल पर निर्भर करता है। इसलिए अपने क्षेत्र की कृषि विश्वविद्यालय या कृषि विभाग की सलाह के अनुसार समय तय करना बेहतर रहता है।

6. **बुवाई की विधि**- बीज को खेत में समान रूप से फैलाकर छिटकवां विधि से बोया जा सकता है। इसके अलावा कतार में बुवाई करने पर पौधों का वितरण अधिक समान रहता है, बीज को बहुत गहराई में नहीं बोना चाहिए तथा सामान्यतः हल्की जुताई के बाद बीज डालकर हल्की मिट्टी से ढक देना पर्याप्त होता है।

7. **सिंचाई और देखभाल**-बुवाई के बाद खेत में पर्याप्त नमी रहना जरूरी है तथा वर्षा होने पर अलग से सिंचाई की आवश्यकता कम हो सकती है लेकिन सिंचाई वाले क्षेत्रों में आवश्यकता के अनुसार हल्की सिंचाई करें हरी खाद की फसल को बहुत अधिक पानी भराव वाली स्थिति में रखने से बचना चाहिए। खेत में खरपतवार अधिक होने पर शुरुआती अवस्था में उनका नियंत्रण करना चाहिए।

## हरी खाद को मिट्टी में कब मिलाएँ

हरी खाद की फसल को बहुत अधिक पुरानी या रेशेदार होने से पहले मिट्टी में मिलाना चाहिए। सामान्यतः 45 से 60 दिन की हरी फसल या फूल आने से पहले की अवस्था, उपयुक्त मानी जाती है,इस समय पौधे कोमल होते हैं और जल्दी सड़कर मिट्टी में मिल जाते हैं। यदि पौधा बहुत अधिक पक जाए और तना कठोर हो जाए, तो उसके गलने में अधिक समय लग सकता है।

## मिट्टी में मिलाने की प्रक्रिया

1. हरी खाद की फसल को खेत में ही काटें या खड़ी फसल की जुताई करें।
2. हल या रोटावेटर की सहायता से पौधों को मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें।
3. मिट्टी में पर्याप्त नमी रखें, ताकि जैविक पदार्थ तेजी से विघटित हो सकें।
4. सामान्यतः हरी खाद को मिट्टी में मिलाने के बाद अगली फसल की बुवाई से पहले पर्याप्त समय देना अच्छा रहता है।

## किसानों के लिए आर्थिक लाभ

हरी खाद का सबसे बड़ा लाभ यह है कि किसान खेत में उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करके मिट्टी की उर्वरता सुधार सकता है। इससे मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ाने में मदद मिलती है और लंबे समय में रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम की जा सकती है, इसके अलावा, बेहतर मिट्टी में पानी और पोषक तत्वों का उपयोग अधिक प्रभावी ढंग से हो सकता है, जिससे फसल की वृद्धि और उत्पादकता को लाभ मिल सकता है।

01/2025-26

डॉ. संगीता चौधरी विद्यावाचस्पति, शस्य विज्ञान विभाग, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर (राजस्थान)

डॉ. अनिल जाखड़, डॉ. राजू यादव विद्यावाचस्पत,बागवानी विभाग,श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर (राजस्थान)

# सतत कृषि उत्पादन के लिए फसल विविधीकरण एक कृषि वैज्ञानिक दृष्टिकोण

**सारांश:** वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण तथा कृषि लागत में वृद्धि के कारण सतत कृषि उत्पादन एक प्रमुख चुनौती बन गया है। लंबे समय तक एक ही फसल प्रणाली अपनाने से मृदा स्वास्थ्य में गिरावट, पोषक तत्वों का असंतुलन, कीट एवं रोगों की समस्या तथा उत्पादन जोखिम बढ़ जाते हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए फसल विविधीकरण एक प्रभावी कृषि प्रबंधन रणनीति के रूप में उभरकर सामने आया है। फसल विविधीकरण का अर्थ है किसी क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की फसलों, किस्मों या फसल प्रणालियों को अपनाना, जिससे कृषि प्रणाली अधिक स्थायी, उत्पादक और पर्यावरण के अनुकूल बन सके। फसल विविधीकरण मृदा उर्वरता सुधारने, जल उपयोग दक्षता बढ़ाने, जैव विविधता संरक्षण, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने तथा किसानों की आय में स्थिरता लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दलहनी फसलों को फसल चक्र में शामिल करने से जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण होता है और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है। इसी प्रकार, मोटे अनाज, तिलहनी फसलें, चारा फसलें तथा बागवानी फसलों का समावेश कृषि प्रणाली को अधिक लचीला बनाता है।

**मुख्य शब्दः** फसल विविधीकरण, सतत कृषि, फसल प्रणाली, मृदा स्वास्थ्य, जलवायु स्मार्ट कृषि, संसाधन उपयोग दक्षता

**1.परिचयः** कृषि मानव सभ्यता की आधारभूत गतिविधियों में से एक है, लेकिन वर्तमान कृषि प्रणाली कई गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का उपयोग, एकल फसल प्रणाली, भूजल का अत्यधिक दोहन तथा जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि की स्थिरता प्रभावित हो रही है। हरित क्रांति के बाद गेहूं और धान जैसी उच्च उत्पादक फसलों के निरंतर उत्पादन से खाद्य सुरक्षा में वृद्धि हुई, लेकिन इसके साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य में कमी, पोषक तत्वों का असंतुलन और प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण जैसी समस्याएं भी उत्पन्न हुई। इसलिए वर्तमान समय में ऐसी कृषि प्रणालियों की आवश्यकता है जो उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण और किसानों की आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित कर सकें। फसल विविधीकरण ऐसी ही एक रणनीति है जो कृषि प्रणाली में विभिन्न फसलों को शामिल करके उत्पादन जोखिम को कम करती है और संसाधनों का बेहतर उपयोग सुनिश्चित करती है।

**2.फसल विविधीकरण की अवधारणाः** फसल विविधीकरण का तात्पर्य किसी क्षेत्र में एकल फसल के स्थान पर विभिन्न फसलों या फसल प्रणालियों को अपनाने से है। इसमें अनाज, दलहन, तिलहन, सब्जियां, फल, चारा फसलें और औषधीय पौधों को शामिल किया जा सकता है।

**फसल विविधीकरण के प्रमुख रूप**

**1.क्षैतिज विविधीकरणः** एक ही कृषि क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन करना।

**उदाहरणः** गेहूं + चना, धान + दलहन, बाजरा + मूंग

**2.ऊर्ध्वाधर विविधीकरण :** कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन को शामिल करना।

**उदाहरणः** दूध उत्पादन, मधुमक्खी पालन, कृषि प्रसंस्करण

**3.फसल प्रणाली विविधीकरणः** विभिन्न फसल चक्रों को अपनाना।

**उदाहरणः** धान-गेहूं प्रणाली के स्थान पर धान-दलहन-सब्जी प्रणाली

**3. फसल विविधीकरण के सिद्धांत**

**3.1 संसाधनों का कुशल उपयोग**-विभिन्न फसलों की पोषक तत्व, जल और प्रकाश की आवश्यकताएं अलग-अलग होती हैं। विविध फसल प्रणाली संसाधनों का बेहतर उपयोग करती है।

**3.2मृदा स्वास्थ्य संरक्षण-** दलहनी फसलें जैसे मूंग, उड़द और चना वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करके मृदा उर्वरता बढ़ाती हैं।

**3.3 जोखिम प्रबंधन**-यदि किसी एक फसल में नुकसान होता है तो अन्य फसलें किसानों की आय को बनाए रखने में सहायता करती हैं।

**4. फसल विविधीकरण का कृषि उत्पादन में महत्व**

**4.1 मृदा स्वास्थ्य में सुधार-** लगातार एक ही फसल लेने से मृदा में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है। फसल विविधीकरण से- जैविक पदार्थों में वृद्धि होती है।, सूक्ष्मजीव गतिविधि बढ़ती है।, पोषक तत्वों का संतुलन बना रहता है।

**4.2 जल उपयोग दक्षता में वृद्धि-** कम पानी वाली फसलें जैसे बाजरा, दालें और तिलहन को शामिल करने से जल संरक्षण होता है।

**4.3 कीट एवं रोग प्रबंधन-** विविध फसल प्रणाली कीटों और रोगों के जीवन चक्र को बाधित करती है, जिससे रासायनिक नियंत्रण की आवश्यकता कम होती है।

**4.4 जैव विविधता संरक्षण-** फसल विविधीकरण खेतों में विभिन्न जीवों के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करता है।

**5. जलवायु परिवर्तन और फसल विविधीकरण-** जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान वृद्धि, अनियमित वर्षा और सूखे की घटनाएं बढ़ रही हैं। फसल विविधीकरण जलवायु जोखिमों को कम करने में सहायक है।

**उदाहरण-** सूखा प्रभावित क्षेत्रों में बाजरा, ज्वार और दलहन का समावेश।, अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जल सहनशील फसलों का चयन। इस प्रकार फसल विविधीकरण जलवायु स्मार्ट कृषि का महत्वपूर्ण घटक है।

**6. भारत में फसल विविधीकरण की स्थिति**

भारत में पारंपरिक रूप से मिश्रित खेती और फसल चक्र अपनाए जाते रहे हैं। वर्तमान में सरकार द्वारा भी फसल विविधीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है। प्रमुख उदाहरण-ः पंजाब और हरियाणा में धान-गेहूं प्रणाली से दलहन, मक्का और तिलहन की ओर परिवर्तन। राजस्थान में बाजरा, मूंग, ग्वार और तिल जैसी कम पानी वाली फसलों को बढ़ावा।

7. फसल विविधीकरण की चुनौतियां 1. किसानों में जागरूकता की कमी। 2. बाजार और मूल्य की अनिश्चितता।3. नई फसलों के लिए उचित बीज एवं तकनीकी जानकारी का अभाव। 4. प्रसंस्करण और भंडारण सुविधाओं की कमी। 5. सरकारी नीतियों का सीमित समर्थन। 8. भविष्य की संभावनाएं

**भविष्य में फसल विविधीकरण को बढ़ावा देने के लिएः** जलवायु अनुकूल किस्मों का विकास, डिजिटल कृषि तकनीकों का उपयोग, बेहतर बाजार व्यवस्था, जैविक एवं प्राकृतिक खेती के साथ एकीकरण, किसान प्रशिक्षण एवं विस्तार सेवाओं को मजबूत करना आवश्यक है

**9. निष्कर्ष**-फसल विविधीकरण सतत कृषि उत्पादन की दिशा में एक प्रभावी रणनीति है। यह न केवल कृषि उत्पादकता और किसानों की आय को स्थिर करता है बल्कि मृदा स्वास्थ्य, जैव विविधता संरक्षण और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भविष्य की कृषि प्रणाली को अधिक टिकाऊ और लचीला बनाने के लिए फसल विविधीकरण को कृषि नीतियों और उत्पादन प्रणालियों में प्राथमिकता देना आवश्यक है।

शंकर लाल चौधरी YP-II, ICAR-भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान क्लस्टर (राजस्थान)

# मक्का में फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण हेतु मिर्च, आक एवं गोमूत्र का उपयोग

मक्का विश्व की महत्वपूर्ण अनाज फसलों में से एक है और यह मानव भोजन, पशु आहार तथा विभिन्न औद्योगिक उत्पादों के लिए उपयोग की जाती है। भारत में मक्का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है, लेकिन कई कीट इसके उत्पादन को प्रभावित करते हैं। इन कीटों में फॉल आर्मीवर्म एक अत्यंत विनाशकारी कीट है, जो मक्का की फसल को गंभीर क्षति पहुँचाता है। इसके लार्वा पत्तियों और पौधे के मध्य भाग को खाकर पौधों की वृद्धि को प्रभावित करते हैं, जिससे उत्पादन में कमी आ सकती है। फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण के लिए सामान्यतः रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है, लेकिन इनके अत्यधिक प्रयोग से पर्यावरण प्रदूषण, लाभकारी कीटों की हानि तथा मानव स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए वर्तमान समय में पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ कीट नियंत्रण विधियों की आवश्यकता है। मिर्च, आक और गोमूत्र जैसे प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग पारंपरिक कृषि में कीट नियंत्रण के लिए किया जाता रहा है। मिर्च में उपस्थित कैप्सेसिन कीटों को दूर रखने में सहायक होता है, जबकि आक के पौधे में पाए जाने वाले जैव सक्रिय तत्व कीटों की वृद्धि को रोकने में मदद करते हैं। गोमूत्र में विभिन्न पोषक तत्व और सूक्ष्मजीव पाए जाते हैं, जो पौधों की वृद्धि को बढ़ाने के साथ-साथ कीट नियंत्रण में भी सहायक होते हैं। इस प्रकार मिर्च, आक और गोमूत्र से तैयार प्राकृतिक घोल फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण के लिए एक सस्ता, प्रभावी और पर्यावरण अनुकूल विकल्प हो सकता है। इस अध्ययन का उद्देश्य मक्का की फसल में फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण हेतु इन प्राकृतिक पदार्थों के उपयोग की प्रभावशीलता का अध्ययन करना है।

## प्रति एकड़ घोल की सटीक मात्रा

मक्का की एक एकड़ फसल में फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण के लिए लगभग 100ङ्क120 लीटर घोल का छिड़काव पर्याप्त माना जाता है। इस मात्रा से पूरे खेत में पौधों की गुच्छी तक घोल अच्छी तरह पहुँच जाता है, जहाँ प्रायः कीट के लार्वा छिपे रहते हैं।

**आवश्यक सामग्री (1 एकड़ के लिए)** * हरी मिर्च - 500 ग्राम * आक (मदार) के पत्ते - 2 किलोग्राम * गोमूत्र - 10 लीटर * पानी - 100 लीटर

**घोल बनाने की प्रक्रिया** 1.सबसे पहले हरी मिर्च और आक के पत्तों को बारीक पीसकर पेस्ट बना लें। 2.इस पेस्ट को 10 लीटर गोमूत्र में अच्छी तरह मिला दें। 3.मिश्रण को ढककर 48 घंटे तक छायादार स्थान पर किण्वन के लिए रखें। 4.इसके बाद मिश्रण को कपड़े या छलनी से छान लें। 5.छने हुए घोल को 100 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे पंप में भर लें। 6.इस तैयार घोल का छिड़काव मक्का के पौधों की गुच्छी में अच्छी तरह करें, क्योंकि फॉल आर्मीवर्म के लार्वा प्रायः इसी भाग में छिपे रहते हैं।

**छिड़काव का सही समय और विधि** * फसल की 15-20 दिन की अवस्था से नियमित निरीक्षण शुरू करना चाहिए। * यदि पत्तियों पर छेद, मल या लार्वा दिखाई दें तो तुरंत छिड़काव करें। * आवश्यकता होने पर 7-10 दिन के अंतराल पर दोबारा छिड़काव किया जा सकता है। * शाम के समय छिड़काव अधिक प्रभावी रहता है क्योंकि इस समय लार्वा सक्रिय होते हैं और धूप का प्रभाव कम होता है।

**यह घोल कैसे कार्य करता है?** मक्का की फसल में फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण के लिए मिर्च, आक और गोमूत्र से तैयार किया गया यह प्राकृतिक घोल एक बहु-क्रियात्मक जैविक कीटनाशक के रूप में कार्य करता है। इस मिश्रण में उपस्थित विभिन्न जैव सक्रिय तत्व कीटों पर अलग-अलग तरीकों से प्रभाव डालते हैं। ये तत्व कीटों को पौधों से दूर भगाने, उनके भोजन करने की क्षमता को कम करने, उनके विकास को बाधित करने तथा लार्वा को नष्ट करने में सहायक होते हैं।

**यह घोल मुख्य रूप से तीन स्तरों पर कार्य करता है-1.प्रतिरोधक प्रभाव-** कीट पौधों से दूर रहते हैं। **2.भोजन अवरोध** - कीट पौधों को कम खाते हैं।

**3.विकास अवरोध** - कीटों के लार्वा का विकास प्रभावित होता है।

**1. मिर्च का प्रभाव**-मिर्च में कैप्साइसिन नामक सक्रिय यौगिक पाया जाता है। यह एक तीव्र रासायनिक पदार्थ है जो कीटों के लिए अत्यधिक उत्तेजक और प्रतिकूल होता है। जब मिर्च का घोल पौधों की पत्तियों और गुच्छी पर छिड़का जाता है, तो उसकी तीक्ष्ण गंध और रासायनिक प्रभाव के कारण कीट पौधों के पास आने से बचते हैं। कैप्साइसिन कीटों की तंत्रिका प्रणाली और स्वाद ग्रहण क्षमता को प्रभावित करता है, जिससे वे पौधों को खाने से बचते हैं।

**2. आक का प्रभाव**- आक एक औषधीय और जैव सक्रिय पौधा है, जिसके पत्तों और तनों में दूधिया रस पाया जाता है। इस रस में एल्कलॉइड, ग्लाइकोसाइड, टरपेनॉइड तथा अन्य कड़वे रासायनिक यौगिक मौजूद होते हैं। ये तत्व कीटों के लिए प्राकृतिक विष का कार्य करते हैं। जब आक के पत्तों का अर्क पौधों पर छिड़का जाता है, तो यह लार्वा के शरीर पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। यह उनके पाचन तंत्र को प्रभावित करता है, जिससे वे पौधों को ठीक से पचा नहीं पाते और उनका विकास रुकने लगता है। कई बार यह उनके जीवन चक्र को भी बाधित कर देता है, जिससे वे पूर्ण विकसित कीट बनने से पहले ही नष्ट हो जाते हैं।

**3. गोमूत्र का प्रभावः** गोमूत्र पारंपरिक भारतीय कृषि में लंबे समय से जैविक उर्वरक और कीटनाशक के रूप में उपयोग किया जाता रहा है। इसमें कई प्रकार के एंटीमाइक्रोबियल तत्व, एंजाइम, खनिज तथा सूक्ष्म पोषक तत्व पाए जाते हैं। गोमूत्र इस मिश्रण में दो महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाता है। पहली, यह मिश्रण के किण्वन की प्रक्रिया को सक्रिय बनाता है, जिससे मिर्च और आक के सक्रिय तत्व अच्छी तरह घुलकर अधिक प्रभावी हो जाते हैं। दूसरी, यह घोल की चिपकने की क्षमता को बढ़ाता है, जिससे घोल पौधों की पत्तियों पर अधिक समय तक बना रहता है और कीटों पर अधिक प्रभाव डालता है।

**4. संयुक्त प्रभाव**- जब मिर्च, आक और गोमूत्र को मिलाकर घोल तैयार किया जाता है, तो इन सभी के गुण मिलकर एक संयुक्त प्रभाव उत्पन्न करते हैं। यह मिश्रण न केवल कीटों को दूर भगाता है बल्कि उनके लार्वा को कमजोर करके उनकी संख्या को भी कम करता है। इस प्रकार यह प्राकृतिक घोल मक्का की फसल में फॉल आर्मीवर्म के प्रकोप को कम करने के लिए एक सुरक्षित, पर्यावरण-अनुकूल और कम लागत वाला उपाय सिद्ध होता है। साथ ही यह मिट्टी, पौधों और लाभकारी कीटों के लिए भी हानिकारक नहीं होता, इसलिए यह टिकाऊ कृषि प्रणाली के लिए उपयुक्त माना जाता है।

**प्रति एकड़ अनुमानित खर्च**

| सामग्री | अनुमानित लागत |
|---|---|
| हरी मिर्च (500 ग्राम) | 40-60 |
| आक के पत्ते | सामान्यतः निःशुल्क |
| गोमूत्र (10 लीटर) | 0-50 |
| मजदूरी व तैयारी | 100-150 |
| कुल लागत | 150-250 प्रति एकड़ |

यह लागत रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में बहुत कम होती है।

**रासायनिक बनाम जैविक नियंत्रण तुलना**

| विशेषता | जैविक घोल (मिर्च + आक + गोमूत्र) | रासायनिक कीटनाशक |
|---|---|---|
| लागत | बहुत कम | अधिक |
| पर्यावरण प्रभाव | सुरक्षित | प्रदूषण की संभावना |
| लाभकारी कीटों पर प्रभाव | कम | हानिकारक |
| कीट प्रतिरोध | कम संभावना | अधिक संभावना |
| अवशेष समस्या | नहीं | हो सकती है |

जैविक घोल का उपयोग करने से पर्यावरण सुरक्षित रहता है और किसानों की लागत भी कम होती है।

**सावधानियाँ** * हमेशा ताजा तैयार घोल का ही उपयोग करें। * तेज धूप या वर्षा से पहले छिड़काव न करें। * छिड़काव करते समय दस्ताने और मास्क का उपयोग करें। * यदि प्रकोप बहुत अधिक हो तो जैविक कीटनाशक जैसे Bacillus thuringiensis का उपयोग भी किया जा सकता है।

**अतिरिक्त समेकित कीट प्रबंधन (IPM) उपाय**-फॉल आर्मीवर्म नियंत्रण के लिए केवल एक उपाय पर्याप्त नहीं होता, इसलिए समेकित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

* खेत में 4-5 फेरोमोन ट्रैप प्रति एकड़ लगाएँ। *अंडों और छोटे लार्वा को हाथ से नष्ट करें। * खेत की नियमित निगरानी करें। * संतुलित उर्वरक प्रबंधन अपनाएँ, क्योंकि अधिक नाइट्रोजन से कीट का प्रकोप बढ़ सकता है।

**निष्कर्ष**-मिर्च, आक और गोमूत्र से तैयार जैविक घोल मक्का में फॉल आर्मीवर्म के नियंत्रण के लिए एक सस्ता, प्रभावी और पर्यावरण-अनुकूल उपाय है। यदि इसे समेकित कीट प्रबंधन तकनीकों के साथ अपनाया जाए तो मक्का की फसल को सुरक्षित रखते हुए उत्पादन में सुधार किया जा सकता है।

डॉ. श्रवण कुमार सहायक प्रोफेसर (चरण-II) कृषि विभाग , श्री गुरु तेग बहादुर खालसा कॉलेज, श्री आनंदपुर साहिब 140118 (पंजाब)

# पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ने की फसल का सामान्य एवं वैज्ञानिक परिचय तथा प्रमुख कीट एवं रोगों का प्रबंधन

गन्ना (Saccharum officinarum L.) एक प्रमुख बहुवर्षीय, C4 प्रकाश-संश्लेषी एवं उच्च जैव-द्रव्य उत्पादक घास है। यह मुख्यतः चीनी, गुड़, खांडसारी, शीरा, एथेनॉल तथा विभिन्न औद्योगिक उत्पादों के लिए उगाया जाता है। भारत में गन्ना कृषि का किसानों की आय, ग्रामीण रोजगार तथा चीनी उद्योग में महत्वपूर्ण योगदान है। उत्तर प्रदेश देश के प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्यों में से एक है और राज्य में विशेष रूप से पश्चिमी उत्तर प्रदेश गन्ने की सघन खेती के लिए प्रसिद्ध है। मेरठ, मुजफ्फरनगर, शामली, सहारनपुर, बिजनौर, बागपत, हापुड़, बुलंदशहर, मुरादाबाद एवं आसपास के क्षेत्र गन्ना उत्पादन के महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

**पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ने की विशेष स्थिति**

**पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ने की खेती के विकास के पीछे कई प्राकृतिक एवं सामाजिक-आर्थिक कारण हैं-** * उपयुक्त तापमान * किसानों का पारंपरिक अनुभव * उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी * पर्याप्त सिंचाई सुविधाएँ * नहर एवं भूमिगत जल की उपलब्धता * चीनी मिलों का अपेक्षाकृत घना नेटवर्क * गन्ना आधारित फसल प्रणाली * सहकारी एवं निजी चीनी मिलों की खरीद व्यवस्था * गेहूँ, गन्ना तथा दलहनी फसलों के साथ उपयुक्त फसल चक्र। गन्ने की फसल पश्चिमी उत्तर प्रदेश में केवल एक नकदी फसल नहीं है, बल्कि यह चीनी उद्योग, पशुपालन, ग्रामीण रोजगार और कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था से सीधे जुड़ी हुई है।

**पश्चिमी उत्तर प्रदेश की जलवायु (Climate)-**गन्ने की अच्छी वृद्धि के लिए गर्म एवं आर्द्र जलवायु अनुकूल मानी जाती है।

**वृद्धि के प्रमुख चरण (Growth stage)**

**अंकुरण एवं प्रारंभिक वृद्धि-** लगभग 25-32°C तापमान अनुकूल रहता है।

**टिलरिंग-** पर्याप्त नमी और मध्यम तापमान आवश्यक है।

**ग्रैंड ग्रोथ फेज-** गर्म तापमान, पर्याप्त प्रकाश और पानी की उपलब्धता से तेजी से जैव-द्रव्य निर्माण होता है।

**परिपक्वता-**परिपक्वता के समय अपेक्षाकृत शुष्क एवं ठंडा मौसम गन्ने में सुक्रोज संचय के लिए लाभकारी होता है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में शीतकालीन परिस्थितियाँ गन्ने की देर से परिपक्वता और सुक्रोज संचय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

गन्ने का वैज्ञानिक वर्गीकरण ( Scientific Classification of Sugarcane)

| विशेषता | विवरण |
|---|---|
| वैज्ञानिक नाम | Saccharum officinarum L. |
| कुल | Poaceae |
| उपकुल | Panicoideae |
| प्रकाश-संश्लेषण | C4 |
| प्रकृति | बहुवर्षीय घास |
| आर्थिक भाग | तना |
| प्रमुख उत्पाद | सुक्रोज, चीनी, गुड़, एथेनॉल |
| प्रवर्धन | मुख्यतः तने के टुकड़ों/सेट द्वारा |
| प्रमुख उपयोग | चीनी एवं जैव-ईंधन उद्योग |

गन्ने के तने में मुख्य रूप से सुक्रोज का संचय होता है। अतः गन्ने की उत्पादकता के साथ-साथ गन्ने में सुक्रोज प्रतिशत एवं रिकवरी प्रतिशत भी आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं

**मिट्टी (Soil)** गन्ने के लिए गहरी, उपजाऊ, अच्छी जलधारण क्षमता वाली तथा उचित जल निकास वाली मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश की जलोढ़ दोमट एवं चिकनी दोमट मिट्टियाँ गन्ने के लिए सामान्यतः अच्छी मानी जाती हैं।

**आदर्श मिट्टी की विशेषताएँ**

* अच्छी जलधारण क्षमता * उचित जल निकास * पर्याप्त जैविक पदार्थ * पर्याप्त नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश * सूक्ष्म पोषक तत्वों की संतुलित उपलब्धता * लगभग 6.5-8.0 pH वाली मिट्टियाँ सामान्यतः उपयुक्त

प्रमुख फसल प्रणालियाँ (Crop rotation)-पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ना कई फसल प्रणालियों का महत्वपूर्ण भाग है।

**प्रमुख प्रणालियाँ**

गन्ना-गेहूँ प्रणाली, सबसे महत्वपूर्ण प्रणालियों में से एक है।

गन्ना-आलू-गन्ना

गन्ना-दलहन आधारित प्रणाली

गन्ना + सहफसली खेती

गन्ने के प्रारंभिक विकास के दौरान खाली स्थान में आलू, सरसों, मसूर, मटर, प्याज एवं अन्य उपयुक्त फसलों को सहफसल के रूप में लिया जा सकता है, जिससे भूमि एवं संसाधनों का बेहतर उपयोग होता है।

**रोपण सामग्री-** गन्ने का सामान्यतः सेट या तने के टुकड़ों द्वारा वानस्पतिक प्रवर्धन किया जाता है।

**अच्छी रोपण सामग्री की विशेषताएँ**

* स्वस्थ एवं रोगमुक्त गन्ना * अच्छी तरह विकसित आँखें

* उचित आयु का बीज गन्ना * कीट एवं रोग से मुक्त * शुद्ध एवं अनुशंसित किस्म * उचित आकार के सेट

आजकल बड चिप तकनीक एवं नर्सरी आधारित रोपण तकनीक जैसी विधियाँ भी गन्ने में गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री उत्पादन के लिए उपयोग की जा रही हैं।

**गन्ने की प्रमुख किस्में-**पश्चिमी उत्तर प्रदेश में किस्मों का चयन क्षेत्र, चीनी मिल की प्राथमिकता, रोगों की स्थिति तथा जलवायु के अनुसार किया जाता है।

**किस्म चयन में निम्न गुणों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए-** * उच्च गन्ना उपज * अधिक सुक्रोज प्रतिशत * बेहतर रसीलापन * शीघ्र या मध्यम परिपक्वता * लाल सड़न जैसे प्रमुख रोगों के प्रति प्रतिरोध * कीटों के प्रति सहनशीलता * गिरने (lodging) के प्रति प्रतिरोध * ratooning क्षमता अच्छी होना। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से एक ही किस्म पर अत्यधिक निर्भरता से बचना महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे किसी विशेष रोग या कीट के प्रकोप की स्थिति में व्यापक नुकसान हो सकता है।

**पोषक तत्व प्रबंधन-** गन्ना एक उच्च पोषक तत्व मांग वाली फसल है। विशेष रूप से नाइट्रोजन की अधिक आवश्यकता होती है, लेकिन केवल नाइट्रोजन का अधिक प्रयोग करना उचित नहीं है।

**प्रमुख पोषक तत्व** नाइट्रोजन (N): * पत्तियों एवं तने की वृद्धि * टिलरिंग * जैव-द्रव्य निर्माण

**फास्फोरस (P):** * जड़ विकास *प्रारंभिक वृद्धि * ऊर्जा स्थानांतरण

**पोटाश (K):*** जल संतुलन * रोग एवं सूखा सहनशीलता * तने की मजबूती * सुक्रोज संचय में महत्वपूर्ण भूमिका। इसके अतिरिक्त सल्फर, जिंक, आयरन, बोरॉन तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी वाले क्षेत्रों में मिट्टी परीक्षण के आधार पर प्रबंधन किया जाना चाहिए।

**सिंचाई प्रबंधन-**गन्ने की उत्पादकता में पानी की उपलब्धता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लेकिन अत्यधिक सिंचाई से जलभराव, पोषक तत्वों का नुकसान तथा जड़ क्षेत्र में ऑक्सीजन की कमी हो सकती है।

**आधुनिक दृष्टिकोण में-** * मिट्टी की नमी के आधार पर सिंचाई * ड्रिप सिंचाई * मल्चिंग * फसल अवशेषों का उपयोग * जल उपयोग दक्षता बढ़ाना महत्वपूर्ण हैं।

ड्रिप फर्टिगेशन के माध्यम से पानी और घुलनशील उर्वरकों को नियंत्रित मात्रा में जड़ क्षेत्र तक पहुँचाया जा सकता है।

**खरपतवार प्रबंधन-** गन्ने की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार फसल के साथ पानी, पोषक तत्व, प्रकाश एवं स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं।

**एकीकृत खरपतवार प्रबंधन-**1.उचित भूमि तैयारी 2.स्वस्थ एवं तेजी से अंकुरित होने वाली रोपण सामग्री 3.समय पर निराई-गुड़ाई 4.यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण 5.मल्चिंग 6.आवश्यकता एवं अनुशंसा के अनुसार शाकनाशी का प्रयोग

Integrated Weed Management (IWM) को अपनाना दीर्घकालिक रूप से अधिक प्रभावी है।

**गन्ने के प्रमुख कीट एवं रोग-**गन्ना (Saccharum spp.) उत्तर प्रदेश की प्रमुख व्यावसायिक एवं नकदी फसलों में से एक है। राज्य में गन्ने की खेती किसानों की आय, चीनी उद्योग तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती है। गन्ने की उत्पादकता और चीनी की रिकवरी को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में कीट एवं रोगों का विशेष स्थान है। गन्ने की लंबी अवधि की फसल होने के कारण इसमें विभिन्न अवस्थाओं पर तना बेधक, शीर्ष बेधक, अंकुर बेधक, दीमक, सफेद गिडार, मिलीबग तथा ऊनी माहू जैसे कीटों का प्रकोप हो सकता है। इसी प्रकार लाल सड़न, स्मट, विल्ट, पोक्का बोइंग तथा ग्रासी शूट जैसे रोग भी उत्पादन एवं गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। ICAR–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा विकसित गन्ना उत्पादन एवं संरक्षण तकनीकों में स्वस्थ बीज गन्ने, रोगरोधी किस्मों, जैविक नियंत्रण तथा आवश्यकता आधारित पौध संरक्षण को विशेष महत्व दिया गया है।

**प्रमुख कीट (Major Insects)**

प्रारंभिक तना बेधक (Early Shoot Borer)-प्रारंभिक तना बेधक गन्ने की छोटी अवस्था में महत्वपूर्ण कीट है। इसकी सूंडी कोमल तने में प्रवेश करके अंदर से ऊतक को नुकसान पहुंचाती है। प्रभावित पौधे की मध्य पत्ती सूख जाती है और पौधे में "डेड हार्ट" लक्षण दिखाई देता है।

**प्रबंधन-** * स्वस्थ एवं कीटमुक्त बीज गन्ने का प्रयोग करें। * खेत की नियमित निगरानी करें। * प्रभावित सूखे पौधों को निकालकर नष्ट करें। * समय पर सिंचाई एवं संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन करें। * आवश्यकता पड़ने पर अनुशंसित कीटनाशी का प्रयोग स्थानीय कृषि विश्वविद्यालय/गन्ना विभाग की सलाह के अनुसार करें। * जैविक नियंत्रण में Trichogramma जैसे परजीवी कीटों का उपयोग किया जा सकता है।

**शीर्ष बेधक (Top Borer)-**शीर्ष बेधक गन्ने की ऊपरी पत्तियों तथा बढ़ते हुए भाग को नुकसान पहुंचाता है। प्रभावित पौधों की पत्तियों में छेद दिखाई देते हैं तथा बढ़वार प्रभावित होती है। अधिक प्रकोप की स्थिति में गन्ने की उपज और गुणवत्ता दोनों कम हो सकती हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका


डॉ. राहुल सिंह यादव
विकास कुमार मीना, डॉ. प्राची चंद्राकर
(हरियाणा)

# रिपीट ब्रीडर सिंड्रोम : एक बछड़ा प्रति वर्ष की सफलता के लिए प्रमुख चुनौती

1. **परिचयः** डेयरी क्षेत्र भारत में किसानों के लिए एक प्रमुख संपत्ति प्रदाता के रूप में उभर रहा है। भारत में दुनिया की सबसे बड़ी मवेशी आबादी है, जिसमें 303.76 मिलियन मवेशी शामिल हैं, जिनमें 193.46 मिलियन गायें और 109.85 मिलियन भैंसें शामिल हैं। देश में दुधारू पशुओं की उत्पादकता में निरंतर सुधार देखा गया है, जो सुदृढ़ विकास नीतियों, सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा दी जाने वाली पशु चिकित्सा सेवाओं और 'श्वेत क्रांति' के जनक दिवंगत डॉ. वर्गीज कुरियन के अथक प्रयासों के कारण संभव हुआ है।

2. **बछड़ा प्रति वर्ष कार्यक्रमः** "हर वर्ष प्रति गाय एक बछड़ा" डेयरी फार्मों में प्रजनन का मुख्य उद्देश्य है। इसका अर्थ है कि गायों को कृत्रिम गर्भाधान (AI) के बाद गर्भधारण करना चाहिए, गर्भावस्था बनाए रखनी चाहिए, 270 दिनों के बाद प्रसव करना चाहिए, और फिर से सफलतापूर्वक गर्भधारण करने के लिए 40-50 दिनों की प्रतीक्षा अवधि लेनी चाहिए। हालांकि, यह हमेशा प्राप्त नहीं हो पाता है और गायों को लगातार कई चक्रों में पुनः गर्भाधान की आवश्यकता होती है। प्रति वर्ष एक बछड़े का उत्पादन डेयरी किसानों के लिए अधिकतम लाभ प्रदान करता है। अच्छा प्रजनन और अच्छी दूध उत्पादन क्षमता एक सिक्के के दो पहलू हैं, जो डेयरी व्यवसाय को लाभदायक बनाते हैं। गाय का उत्पादक जीवन प्रसव के साथ शुरू होता है, जो प्रजनन का मुख्य चरण है। इसके बाद, गाय को नियमित रूप से गर्भधारण और प्रसव चक्रों से गुजरना पड़ता है, जिससे उसकी दुग्ध उत्पादन क्षमता बनी रहती है। गाय दूध केवल प्रसव के बाद ही देती है। इसलिए, सफल डेयरी फार्मिंग के लिए डेयरी पशुओं की प्रजनन क्षमता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अतः, वे प्रजनन समस्याएं जो अंततः प्रजनन विफलता का कारण बनती हैं, उनका जल्द से जल्द निदान और समाधान किया जाना चाहिए ताकि फार्म पर इष्टतम उत्पादन और अधिकतम लाभ सुनिश्चित किया जा सके।

3. **बछड़ा प्रति वर्ष कार्यक्रम की विफलता के कारणः** बछड़ा प्रति वर्ष कार्यक्रम की विफलता कई कारकों पर निर्भर करती है, जिन्हें मुख्य रूप से पोषण, संक्रामक, प्रबंधन और कार्यात्मक समस्याओं में विभाजित किया जा सकता है।

3.1 **पोषण संबंधी कारणः** पोषण पशुओं के स्वास्थ्य और प्रजनन क्षमता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे कॉपर (Cu), कोबाल्ट (Co), जिंक (Zn), आयरन (Fe), सेलेनियम (Se), आयोडीन (I), मोलिब्डेनम (Mo), मैंगनीज (Mn) और कुछ प्रमुख तत्व जैसे कैल्शियम (Ca), फॉस्फोरस (P), सोडियम (Na), क्लोरीन (Cl), और पोटेशियम (K) सामान्य पशु वृद्धि और प्रदर्शन के लिए आवश्यक होते हैं।आमतौर पर, चारे और हरे चारे में यह सूक्ष्म और प्रमुख खनिज कम मात्रा में होते हैं। इन खनिजों की असंतुलित या अपर्याप्त मात्रा से प्रजनन तंत्र में विकार उत्पन्न हो सकते हैं, जिससे पशुओं की प्रजनन क्षमता प्रभावित होती है।

3.2 **संक्रामक कारण**-गर्भाशय से संबंधित विकार जैसे मेट्राइटिस, एंडोमेट्राइटिस, पायोमेट्रा आदि प्रजनन प्रदर्शन पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। ये संक्रमण डेयरी पशुओं की प्रजनन क्षमता पर अल्पकालिक और दीर्घकालिक प्रभाव डाल सकते हैं।

3.3 **प्रबंधन संबंधी कारण**-"हर वर्ष प्रति गाय एक बछड़ा" सुनिश्चित करने के लिए पशुओं के अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखना आवश्यक है। अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए नियमित कृमिनाशक दवा देना, उचित पोषण प्रदान करना, और खनिज मिश्रण का पर्याप्त मात्रा में सेवन आवश्यक होता है। गर्मी से होने वाले तनाव को कम करने के लिए स्वच्छ पेयजल और उचित छायादार स्थान या शीतलन प्रणाली उपलब्ध कराना भी महत्वपूर्ण होता है। नियमित टीकाकरण और समय पर पशु चिकित्सा देखभाल भी आवश्यक होती है। कृत्रिम गर्भाधान (AI) सेवाएं प्रदान करने वाले पशु चिकित्सक और सहायक कर्मचारी डेयरी पशुओं की उत्पादकता में सुधार करके लाभप्रदता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लाभप्रदता को बढ़ाने के लिए हर वर्ष एक बछड़ा प्राप्त करना आवश्यक है। इस दिशा में पहला कदम डेयरी किसानों के बीच पशु चिकित्सकों और कृत्रिम गर्भाधान तकनीशियनों के माध्यम से सही समय पर गर्मी का पता लगाने के लिए जागरूकता पैदा करना है। अगला कदम उच्च गर्भधारण दर प्राप्त करना है, जिसके लिए वीर्य को सही तरीके से संभालना, उचित तापमान पर थौइंग करना, सही समय और स्थिति में कृत्रिम गर्भाधान करना और वीर्य को मध्य-गर्भाशय ग्रीवा क्षेत्र में जमा करना आवश्यक है। यदि पशु गर्भधारण करने में विफल रहता है, तो पशु चिकित्सक आहार में खनिज मिश्रण जोड़ने, प्रजनन प्रणाली के संक्रमण को उपचारित करने और अंतःस्रावी असंतुलन को ठीक करने के लिए अंतःस्राव  उपचार का सुझाव दे सकते हैं। इन सभी प्रबंधन और सुधारात्मक उपायों के बाद भी, क्रॉसब्रेड होल्स्टीन फ्रीजियन हीफर्स में औसत गर्भाधान दर (HCR) केवल 55-60% तक पाई गई है। 2012 से 2018 तक, नलिपेरस (पहली बार प्रसव करने वाली) और प्राइमिपेरस (दूसरी बार प्रसव करने वाली) गायों की औसत गर्भाधान दर क्रमशः 55.2% और 39.2% थी। यह निम्न गर्भाधान दर पशु की प्रजनन क्षमता में कमी का पहला संकेत है।

2.4 **कार्यात्मक कारण**-पशु की प्रजनन प्रणाली को सफलतापूर्वक "बछड़ा प्रति वर्ष कार्यक्रम" के लिए पूरी तरह से कार्यात्मक होना चाहिए। प्रजनन क्रिया में कोई भी विघटन या विलंब को कार्यात्मक बाधा माना जाता है। इनमें अंतःस्रावी विकार और गर्भाशय अंगों (अंडाशय, अंडवाही आदि) के संक्रमण शामिल हो सकते हैं।

3.**प्रजनन क्षमता- मुख्य तत्व**-लाभ अधिकतम करने की कुंजी डेयरी पशुओं की प्रजनन स्थिति में निरंतरता है। व्यापक रूप से, "प्रजनन क्षमता" को संतान उत्पन्न करने की क्षमता के रूप में परिभाषित किया जाता है। डेयरी उद्योग में, मादा प्रजनन क्षमता से तात्पर्य है गाय के द्वारा विशिष्ट समय सीमा के भीतर गर्भधारण और गर्भावस्था को बनाए रखने की क्षमता, जहाँ पसंदीदा समय सीमा का निर्धारण उपयोग किए जा रहे उत्पादन प्रणाली द्वारा किया जाता है। प्रजनन क्षमता पशु के जीवनकाल के प्रदर्शन को भी प्रभावित करती है। डेयरी गायों के लिए, यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि हर साल एक बछड़ा हो। नियमित प्रजनन सामान्य प्रजनन प्रणाली के कार्य करने पर निर्भर करता है। नियमित रूप से प्रजनन करने के लिए, गाय के पास कार्यात्मक अंडाशय होना चाहिए, उसे मद चक्र दिखाना चाहिए, मिलन करना चाहिए, अंडोत्सर्ग करना चाहिए, निषेचन होना चाहिए, गर्भधारण करना चाहिए, गर्भावस्था अवधि के दौरान भ्रूण को बनाए रखना चाहिए, बछड़ा जनमना चाहिए और मद चक्रीयता को फिर से बहाल करना चाहिए और बछड़े के जन्म के बाद गर्भाशय कार्य को पुनः स्थापित करना चाहिए।

3.1 **प्रजनन क्षमता सुधारने की चुनौतियाँ**-मद चक्र का सही पता लगाना और समय पर गर्भाधान करना पहला कदम है। सामान्यतः, लगभग 50% मद काल अवधि फार्म पर पहचान में नहीं आती है। जानवरों को मद काल के पहले संकेत के लगभग 12 घंटे बाद गर्भाधान करना चाहिए। गर्मी का पता लगाने के लिए निदान उपकरणों की उपलब्धता न होना क्षेत्रीय पशु चिकित्सकों के लिए प्रमुख बाधा है। इस प्रकार, सफल प्रजनन क्षमता प्राप्त करने के लिए सबसे बड़ी सीमित करने वाली कारक कार्यात्मक बाधाओं का पता लगाना है।प्रजनन प्रणाली के विकृत कार्य अंततः डेयरी पशुओं की प्रजनन क्षमता को प्रभावित करते हैं, जिससे किसानों को भारी नुकसान होता है। इन परिस्थितियों में, पशु चिकित्सक इन कार्यात्मक बाधाओं का सही तरीके से निदान नहीं कर पाते हैं, और अधिकांशतः ये अविकसित रहती हैं, क्योंकि उन्नत उपकरणों की कमी होती है। हार्मोनल उपचार आसानी से उपलब्ध होते हैं, लेकिन बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए विशेषज्ञों और प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है, ताकि हार्मोनल असंतुलन कम से कम हो। हार्मोनल उपचार की लागत हमेशा अधिक होती है।

4.1 **रिपीट ब्रीडर सिंड्रोम (RBS)**-पुनरावृत्ति प्रजनन सिंड्रोम (RBS) गायों और भैंसों में एक महत्वपूर्ण प्रजनन चुनौती है, जो तीन या अधिक बार प्रजनन के बावजूद गर्भधारण में विफलता द्वारा विशेषता होती है। यह सिंड्रोम कई जैविक, पोषण संबंधी और प्रबंधन कारकों के कारण उत्पन्न हो सकता है, जिनमें हार्मोनल असंतुलन, संक्रमण, पोषण की कमी और आनुवंशिक प्रवृत्तियाँ शामिल हैं। समय पर निदान और उचित उपचार से इस समस्या को प्रभावी रूप से प्रबंधित किया जा सकता है। जबकि बछिया में सामान्य निषेचन दर 100त्र होती है, यह गायों में 85त्र और पुनरावृत्ति प्रजनकों में 60-70त्र तक गिर जाती है, जो निषेचन विफलता को दर्शाती है। यदि निषेचित भ्रूणों को स्थानांतरित किया जाता है, तो सामान्य गर्भावस्था दर प्राप्त की जा सकती है।

4.2 **गर्भाशय pH और इसकी प्रजनन क्षमता में भूमिका**-गर्भाशय pH संक्रमण को रोकने और योनि वनस्पति को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। योनि pH में असामान्यताएँ डेयरी पशुओं को बोवाइन नेक्रोटिक वल्वो वैजिनाइटिस (BNVV) जैसे संक्रमणों के प्रति संवेदनशील बनाती हैं। बछियों, पहली बार बछड़ा देने वाली गायों और अन्य गायों के लिए सामान्य pH मान 7.35 से 7.58 के बीच होते हैं।

4.3 **गैमेट सुरक्षा और अस्तित्व में pH की भूमिका**-अंडवाहिनी द्रव शुक्राणु की जीवन क्षमता और अंडाणु के अस्तित्व का समर्थन करता है। प्रजनन पथ का pH और वातावरण शुक्राणु की गतिशीलता और जीवन क्षमता को प्रभावित करता है, जबकि संक्रमण अंतःस्रावी मार्गों को बाधित करते हैं, डिंबग्रंथि के कार्य को कमजोर करते हैं और निषेचन को बाधित करते हैं।

4.4 **एंडोमेट्रियल ग्रंथियां और गर्भाशय द्रव**- एंडोमेट्रियल ग्रंथियां भ्रूण के विकास, आरोपण और गर्भावस्था की मातृ पहचान के लिए आवश्यक प्रोटीन का स्राव करती हैं। इन प्रोटीनों में ब्लास्टोकिनिन शामिल है, जो भ्रूण के अस्तित्व और आरोपण को बढ़ाता है।

# मखाना की खेती : मिट्टी की उर्वरता में सहायक

डॉ. सुनील कुमार मंडल (सहायक प्राध्यापक)
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, झंझारपुर- 847403, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

बिहार मखाने का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है जो हमारे देश के कुल उत्पादन का लगभग 80-90 प्रतिशत है। राज्य में मुख्य रूप से मिथिलांचल और कोशी-सीमांचल के क्षेत्रों में होने वाली इसकी खेती लगभग तेरह हजार हेक्टेयर से अधिक भूमि में की जाती है और कोशी-सीमांचल के किसानों के लिए आय का एक प्रमुख स्त्रोत बन गया है। मखाने के लावा को ''सफेद सोना'' भी कहा जाता है।

मखाना की खेती केवल एक जलीय नकदी फसल नहीं हैं, बल्कि यह तालाब और खेत की मिट्टी के लिए एक बेहतरीन पोषक तत्व प्रदाता भी है। यह मुख्य रूप से जलीय पारिस्थितिक तंत्र में पोषक तत्वों को पुनर्चकित करने का कार्य करती है।

**तालाब और खेत प्रणाली में मखाना फसलों के द्वारा पोषक तत्व छोड़ने के प्रमुख लाभ निम्न उल्लेखित है-**

## मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि

**जैविक कार्बन-** मखाना की खेती मिट्टी में जैविक पदार्थ (बायोमास) की भारी मात्रा जोड़ती है। एक अनुमान के अनुसार मखाना फसल के अवशेष (पत्तियां, डंठल और जड़) प्रतिवर्ष लगभग 8.0 टन प्रति हेक्टेयर (सुखे वजन के आधार पर) बायोमास मिट्टी में जमा करती है।

## पोषक तत्वों की भरपाई

मखाना के पौधे और जड़े सड़ने के उपरान्त मिट्टी में महत्वपूर्ण पोषक तत्व छोड़ते हैं, जिससे मिट्टी की उपज (उर्वरता) क्षमता बढ़ती है।

## मुख्य पोषक तत्वों की उपलब्धता

**शोध के अनुसार मखाना फसल अवशेष (पत्तियां, डंठल और जड़) औसतन निम्नलिखित**

**पोषक तत्व मिट्टी में योगदान करती है-**

* **नाइट्रोजन:** 34-35 किलोग्राम/ हेक्टेयर/वर्ष।
* **फास्फोरस:** 56.04 किलोग्राम/ हेक्टेयर/वर्ष।
* **पोटेशियम:** 53.07 किलोग्राम/ हेक्टेयर/वर्ष।

## सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता

**मिट्टी में पोषक तत्वों के अतिरिक्त मखाना फसल के अवशेषों से सूक्ष्म पोषक तत्व भी निकलते है, जो इस प्रकार है-**

* **आयरन (लोहा):** 27.26 किलोग्राम /हेक्टेयर/वर्ष।
* **मैंगनीज** : 12-31 किलोग्राम/हेक्टेयर/वर्ष।
* जिंक और कॉपर :

अच्छी मात्रा में भी पाये जाते हैं।

## तालाब/खेत के पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रभाव

**मछली के लिए पौष्टिक-** मखाना फसल के सड़ने वाले हिस्से से तालाब में प्लवक (च्संदाजवद) की आबादी को बढ़ाते हैं, जो मछली (विशेषकर रोहू, कतला, मृगल) के लिए एक उत्कृष्ट भोजन है।

**मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों का भंडारण-** मखाना जल भराव वाले क्षेत्रों में कार्बन अवशेषों को जमा (स्टोर) करने में मदद करती है।

## कार्बनिक खेती में लाभकारी

मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की प्रचुरता बनाये रखेन के कारण कार्बनिक खेती अच्छी तरह सफलीभूत होती है।

## अगली फसल के लिए लाभ

खेत प्रणाली मखाना की खेती के बाद जब खेत की मिट्टी को अगले फसल (जैसे मखाना-गेहूँ, मखाना-धान) के लिए तैयार किया जाता है, तो मिट्टी की संरचना बेहतर होती है और पोषक तत्वों की प्रचुरता के कारण अगली फसल की पैदावार में लगभग 30 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। साथ ही एक तिहाई उर्वरक की भी बचत होती है।

## मखाना उत्पादन प्रणाली

तालाब व खेत की पारिस्थितिक तंत्र स्वयं मखाना के लिए पोषक तत्व प्रदान करती है, जो तालाबों/खेतों की तली में मौजूद उर्वरा मिट्टी और जैविक पदार्थ मखाना के फसल को मिलती है। फलस्वरूप अगली मखाना व अन्य फसलों के लिए उर्वरकों की निर्भरता कम रहती है। तालाब में पानी की अच्छी गुणवत्ता के कारण मछली पालन (मछली-मखाना मॉडल) सफलता पूर्वक की जाती है जो आजकल आम है।

## निष्कर्ष

इस प्रकार मखाना की खेती मिट्टी की उर्वरता और पोषक तत्वों में सुधार के लिए एक बेहतरीन विकल्प हैं। फसल अवशेषों (पत्तियां, डंठले और जड़े) के माध्यम से मिट्टी को प्रचुर मात्रा में कार्बनिक पदार्थ और अन्य आवश्यक पोषक तत्वों से समृद्ध करती हैं, जिससे मृदा स्वास्थ्य के लिए एक टिकाऊ कृषि पद्धति बन जाती है।

जैन बीज भण्डार एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल : 9977638510
04/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका


# मसालों के प्रसंस्करण एवं गुणवत्ता नियंत्रण

**डॉ. दिनेश रजक** (सह-प्राध्यापक)
**डॉ. विशाल कुमार** (सह-प्राध्यापक)
**डॉ. देवेन्द्र कुमार** (प्राध्यापक), प्रसंसकरण एवं खाद्य अभियन्त्रिकी विभाग, कृषि अभियंत्रण एवं प्रौधोगीकी महविद्यालय, डॉ. रा. प्र. कें. कृ. वि. पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)

**सारांश**-मसाले भारतीय खाद्य संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा होने के साथ-साथ कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मसालों का उपयोग भोजन को स्वाद, सुगंध और रंग प्रदान करने के साथ-साथ उनके पारंपरिक औषधीय गुणों के कारण भी किया जाता है। काली मिर्च, हल्दी, जीरा, धनिया, इलायची, लौंग, दालचीनी, अदरक तथा लाल मिर्च प्रमुख मसालों में शामिल हैं। मसालों की गुणवत्ता उनके उत्पादन, कटाई, सफाई, सुखाने, प्रसंस्करण, भंडारण और पैकेजिंग की विभिन्न अवस्थाओं से प्रभावित होती है। उचित प्रसंस्करण तकनीकों द्वारा मसालों की गुणवत्ता, शेल्फ लाइफ तथा उपभोक्ता सुरक्षा को बेहतर बनाया जा सकता है। इस लेख में मसालों के प्रसंस्करण की प्रमुख विधियों तथा गुणवत्ता नियंत्रण के विभिन्न पहलुओं का वर्णन किया गया है।

**मुख्य शब्द:** मसाले, खाद्य प्रसंस्करण, सुखाना, पीसना, पैकेजिंग, गुणवत्ता नियंत्रण, खाद्य सुरक्षा

**1. परिचय:** भारत को विश्व के प्रमुख मसाला उत्पादक देशों में गिना जाता है। देश के विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्रों में अनेक प्रकार के मसालों का उत्पादन किया जाता है। मसाले भोजन के स्वाद एवं सुगंध को बढ़ाने के साथ-साथ खाद्य पदार्थों की स्वीकार्यता में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। कुछ मसालों में प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट तथा रोगाणुरोधी गुण भी पाए जाते हैं। मसालों की गुणवत्ता केवल उनकी प्रजाति और उत्पादन क्षेत्र पर निर्भर नहीं करती, बल्कि कटाई के बाद अपनाई जाने वाली प्रसंस्करण तकनीकों पर भी निर्भर करती है। यदि मसालों को उचित तरीके से साफ, सुखाया, संसाधित और संग्रहित नहीं किया जाए, तो उनमें नमी बढ़ सकती है तथा फफूंद, कीट, सूक्ष्मजीव और अन्य बाहरी पदार्थों का संक्रमण हो सकता है। इसलिए सुरक्षित एवं गुणवत्तापूर्ण मसाला उत्पादन के लिए वैज्ञानिक प्रसंस्करण और प्रभावी गुणवत्ता नियंत्रण आवश्यक है।

**2. मसालों का प्रसंस्करण:** मसालों का प्रसंस्करण मुख्यतः कटाई के बाद की विभिन्न प्रक्रियाओं का समूह है। इसका उद्देश्य मसालों को अशुद्धियों से मुक्त करना, उनकी गुणवत्ता बनाए रखना, भंडारण अवधि बढ़ाना तथा उन्हें उपभोक्ता के लिए उपयोग योग्य बनाना है।

**2.1 सफाई:** कटाई के बाद मसालों में मिट्टी, धूल, पत्थर, पौधों के अवशेष तथा अन्य बाहरी पदार्थ मौजूद हो सकते हैं। इसलिए प्रसंस्करण की प्रारंभिक अवस्था में सफाई की जाती है। सफाई के लिए छलनी, एयर क्लीनर, ग्रेडर तथा अन्य यांत्रिक उपकरणों का प्रयोग किया जा सकता है।

**2.2 धुलाई:** कुछ मसालों में सतह पर मौजूद मिट्टी एवं अन्य अशुद्धियों को हटाने के लिए नियंत्रित परिस्थितियों में धुलाई की जाती है। हालांकि धुलाई के बाद पर्याप्त सुखाना आवश्यक है, क्योंकि अतिरिक्त नमी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को बढ़ावा दे सकती है।

**2.3 सुखाना:** मसालों के प्रसंस्करण में सुखाना अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसका उद्देश्य नमी की मात्रा को सुरक्षित स्तर तक कम करना होता है, जिससे सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और रासायनिक परिवर्तन को नियंत्रित किया जा सके। परंपरागत रूप से मसालों को सूर्य के प्रकाश में सुखाया जाता है, जबकि आधुनिक प्रसंस्करण इकाइयों में यांत्रिक ड्रायर, ट्रे ड्रायर, कैबिनेट ड्रायर तथा अन्य नियंत्रित सुखाने की तकनीकों का उपयोग किया जाता है। नियंत्रित तापमान और समय का चयन मसाले के प्रकार के अनुसार किया जाना चाहिए, क्योंकि अत्यधिक तापमान से रंग, सुगंध और वाष्पशील तेलों की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है।

**2.4 ग्रेडिंग:** सुखाने के बाद मसालों को आकार, रंग, वजन और अन्य भौतिक गुणों के आधार पर अलग-अलग श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। ग्रेडिंग से उत्पाद की एकरूपता बढ़ती है और बाजार मूल्य निर्धारित करने में सहायता मिलती है।

**2.5 पीसना:** काली मिर्च, जीरा, धनिया, लाल मिर्च और हल्दी जैसे मसालों को पाउडर के रूप में उपयोग करने के लिए पीसा जाता है। पीसने के दौरान उत्पन्न गर्मी मसालों के आवश्यक तेल, सुगंध और रंग को प्रभावित कर सकती है। इसलिए उपयुक्त मिलिंग उपकरण और नियंत्रित तापमान का उपयोग महत्वपूर्ण है।

**2.6 पैकेजिंग:** प्रसंस्करण के बाद मसालों को नमी, प्रकाश, ऑक्सीजन, कीट तथा अन्य बाहरी प्रभावों से सुरक्षित रखने के लिए उचित पैकेजिंग की आवश्यकता होती है। नमीरोधी और खाद्य-सुरक्षित पैकेजिंग सामग्री मसालों की गुणवत्ता एवं शेल्फ लाइफ बनाए रखने में सहायक होती है।

**3. मसालों में गुणवत्ता नियंत्रण:** गुणवत्ता नियंत्रण का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि अंतिम उत्पाद सुरक्षित, स्वच्छ, निर्धारित गुणवत्ता मानकों के अनुरूप और उपभोक्ता के लिए उपयुक्त हो। इसके लिए भौतिक, रासायनिक, सूक्ष्मजीवविज्ञानीय तथा संवेदी परीक्षण किए जाते हैं।

**3.1 भौतिक गुणवत्ता:** भौतिक गुणवत्ता के अंतर्गत मसाले का रंग, आकार, बनावट, विदेशी पदार्थों की उपस्थिति तथा अन्य दृश्य विशेषताओं का परीक्षण किया जाता है। उच्च गुणवत्ता वाले मसालों में अनावश्यक बाहरी पदार्थों की मात्रा न्यूनतम होनी चाहिए।

**3.2 नमी की मात्रा:** मसालों की भंडारण स्थिरता के लिए नमी एक महत्वपूर्ण कारक है। अधिक नमी होने पर फफूंद एवं अन्य सूक्ष्मजीवों की वृद्धि की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए प्रसंस्करण और भंडारण के दौरान नमी का नियमित परीक्षण आवश्यक है।

**3.3 सूक्ष्मजीवविज्ञानीय गुणवत्ता:** मसालों में विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति खाद्य सुरक्षा के लिए समस्या उत्पन्न कर सकती है। इसलिए आवश्यकता के अनुसार कुल सूक्ष्मजीवी भार, यीस्ट एवं मोल्ड तथा खाद्य सुरक्षा से संबंधित अन्य सूक्ष्मजीवों की जांच की जाती है।

**3.4 रासायनिक गुणवत्ता:** मसालों में आवश्यक तेल, सक्रिय यौगिक, रंगद्रव्य तथा अन्य रासायनिक घटक उनकी गुणवत्ता और विशिष्टता निर्धारित करते हैं। इसके अतिरिक्त मिलावट, अवांछित रासायनिक अवशेष तथा संदूषकों की जांच भी महत्वपूर्ण है।

**3.5 मिलावट की रोकथाम:** मसालों में मिलावट उपभोक्ता स्वास्थ्य और उत्पाद की गुणवत्ता दोनों के लिए गंभीर समस्या हो सकती है। पाउडर मसालों में सस्ते पदार्थों या अन्य अनधिकृत पदार्थों की मिलावट की संभावना अधिक होती है। इसलिए कच्चे माल की जांच, प्रमाणित आपूर्तिकर्ताओं से खरीद तथा प्रयोगशाला परीक्षण द्वारा मिलावट को नियंत्रित किया जा सकता है।

**4. भंडारण एवं गुणवत्ता संरक्षण:** मसालों को प्रसंस्करण के बाद स्वच्छ, सूखे और नियंत्रित वातावरण में संग्रहित करना चाहिए। भंडारण क्षेत्र में अत्यधिक नमी, तापमान में उतार-चढ़ाव, कीट तथा प्रत्यक्ष प्रकाश से बचाव आवश्यक है। मसालों को जमीन से ऊपर तथा दीवारों से उचित दूरी पर रखने से वायु संचार और निरीक्षण में सुविधा होती है। भंडारण कक्ष की नियमित सफाई और कीट नियंत्रण भी आवश्यक है। उचित भंडारण से मसालों के रंग, सुगंध, स्वाद और अन्य गुणवत्ता गुण लंबे समय तक सुरक्षित रह सकते हैं।

**5. आधुनिक प्रसंस्करण तकनीकों की भूमिका:** आधुनिक खाद्य अभियन्त्रण तकनीकों ने मसालों के प्रसंस्करण को अधिक वैज्ञानिक और नियंत्रित बनाया है। यांत्रिक सफाई, नियंत्रित तापमान पर सुखाना, उन्नत पीसने की तकनीक, स्वचालित पैकेजिंग तथा गुणवत्ता परीक्षण उपकरण उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार करते हैं।कुछ आधुनिक तकनीकें प्रसंस्करण के दौरान सूक्ष्मजीवी संदूषण को कम करने तथा मसालों की शेल्फ लाइफ बढ़ाने में भी उपयोगी हो सकती हैं। हालांकि किसी भी तकनीक का चयन मसाले के प्रकार, लागत, अंतिम उत्पाद और निर्धारित खाद्य सुरक्षा मानकों के अनुसार किया जाना चाहिए।

**6. गुणवत्ता नियंत्रण की चुनौतियां:** मसाला उद्योग में गुणवत्ता नियंत्रण के सामने कई चुनौतियाँ हैं। इनमें कच्चे माल की गुणवत्ता में विविधता, अनुचित सुखाना, उच्च नमी, भंडारण में कीट संक्रमण, मिलावट, सूक्ष्मजीवी संदूषण तथा प्रसंस्करण के दौरान सुगंधित एवं सक्रिय घटकों का नुकसान प्रमुख हैं। छोटे एवं मध्यम स्तर के प्रसंस्करण उद्यमों के लिए आधुनिक परीक्षण उपकरणों और नियंत्रित प्रसंस्करण प्रणालियों की लागत भी एक चुनौती हो सकती है। इन समस्याओं को प्रशिक्षण, स्वच्छता प्रबंधन, अच्छी निर्माण पद्धतियों तथा नियमित गुणवत्ता परीक्षण के माध्यम से कम किया जा सकता है।

**7. निष्कर्ष:** मसालों की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए उत्पादन से लेकर उपभोक्ता तक पूरी आपूर्ति श्रृंखला में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। सफाई, उचित सुखाना, ग्रेडिंग, नियंत्रित पीसना, सुरक्षित पैकेजिंग और उचित भंडारण मसालों की गुणवत्ता संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही नमी, सूक्ष्मजीवी गुणवत्ता, रासायनिक गुण तथा मिलावट की नियमित जांच खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। आधुनिक खाद्य प्रसंस्करण एवं अभियन्त्रण तकनीकों को अपनाकर मसालों की गुणवत्ता, शेल्फ लाइफ और बाजार मूल्य में वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार वैज्ञानिक प्रसंस्करण और प्रभावी गुणवत्ता नियंत्रण न केवल उपभोक्ता को सुरक्षित एवं उच्च गुणवत्ता वाले मसाले उपलब्ध कराते हैं, बल्कि मसाला प्रसंस्करण उद्योग के विकास और कृषि उत्पादों के मूल्य संवर्धन में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

✍ पुष्पेन्द्र यादव, रोहन सेरावत, शुभ्रांशु सिंह
कृषि विस्तार प्रभाग, भाकृअनुप, कृषि अनुसंधान भवन-I, पूसा नई दिल्ली- 110012

# मृदा स्वास्थ्य से किसान समृद्धि तक: संतुलित उर्वरक प्रबंधन की भूमिका

**भूमिका**-कृषि उत्पादन बढ़ाने में उर्वरकों की महत्वपूर्ण भूमिका है। हरित क्रांति के बाद रासायनिक उर्वरकों के उपयोग ने देश की खाद्यान्न उत्पादकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आज भी फसल की पोषक तत्व आवश्यकता पूरी करने के लिए उर्वरक कृषि का एक आवश्यक घटक हैं। लेकिन समस्या तब उत्पन्न होती है जब किसान मृदा की आवश्यकता और फसल की जरूरत को जाने बिना किसी एक या दो उर्वरकों का लगातार और अधिक मात्रा में प्रयोग करने लगता है।

कई क्षेत्रों में यूरिया और डीएपी का अत्यधिक उपयोग तथा पोटाश, सल्फर और सूक्ष्म पोषक तत्वों की अपेक्षाकृत कम आपूर्ति के कारण पोषक तत्वों का असंतुलन देखा जा रहा है। ICAR के अनुसार देश में उर्वरक उपयोग की स्थिति विभिन्न राज्यों और फसल प्रणालियों में अलग-अलग है तथा पूरे देश के लिए कोई एक आदर्श N:P:K अनुपात निर्धारित नहीं किया जा सकता। पोषक तत्वों की आवश्यकता फसल, मृदा और कृषि-जलवायु परिस्थितियों के अनुसार बदलती है। इसलिए आज आवश्यकता "अधिक उर्वरक" की नहीं, बल्कि "सही उर्वरक, सही मात्रा, सही समय और सही तरीके से" उपयोग करने की है। संतुलित उर्वरक उपयोग न केवल मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखता है, बल्कि उत्पादन लागत कम करके किसान की शुद्ध आय बढ़ाने में भी योगदान कर सकता है।

**संतुलित उर्वरक उपयोग क्या है?** संतुलित उर्वरक उपयोग का अर्थ केवल N, P और K को किसी निश्चित अनुपात में डालना नहीं है। इसका वास्तविक अर्थ है कि फसल को उसकी आवश्यकता के अनुसार नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, सल्फर, जिंक, बोरॉन, आयरन और अन्य आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में उपलब्ध कराए जाएँ। हर खेत की मृदा अलग होती है। कहीं नाइट्रोजन की कमी हो सकती है, कहीं फास्फोरस पर्याप्त हो सकता है, जबकि किसी क्षेत्र में जिंक या सल्फर की कमी अधिक हो सकती है। इसलिए पूरे गाँव या पूरे जिले के लिए एक ही उर्वरक मात्रा को हर खेत पर लागू करना वैज्ञानिक दृष्टि से उचित नहीं है।

इसी कारण मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक सिफारिश संतुलित पोषण की पहली सीढ़ी है। ICAR भी फसल और मृदा की वास्तविक पोषक स्थिति के आधार पर उर्वरक प्रबंधन की सलाह देता है।

**केवल यूरिया और डीएपी पर्याप्त क्यों नहीं?** किसान अक्सर नाइट्रोजन के लिए यूरिया और फास्फोरस के लिए डीएपी पर अधिक निर्भर रहते हैं। इसका एक कारण यह है कि इन उर्वरकों का उपयोग लंबे समय से प्रचलित है और इनके लाभ किसानों को आसानी से दिखाई देते हैं। लेकिन पौधे को केवल नाइट्रोजन और फास्फोरस की आवश्यकता नहीं होती। पोटाश पौधे की जल उपयोग क्षमता, रोग एवं तनाव सहनशीलता तथा कई शारीरिक प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सल्फर तेल एवं प्रोटीन वाली फसलों के लिए आवश्यक है। जिंक, बोरॉन, आयरन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व भी पौधों की वृद्धि और गुणवत्ता के लिए जरूरी हैं।

यदि किसी किसान के खेत में पहले से फास्फोरस पर्याप्त है और वह लगातार डीएपी डालता रहता है, तो इससे आवश्यक रूप से उत्पादन में समान अनुपात में वृद्धि नहीं होगी। इसके विपरीत, अनावश्यक खर्च बढ़ सकता है और पोषक तत्वों का असंतुलन पैदा हो सकता है। हाल के ICAR अभियानों में भी किसानों को यूरिया और डीएपी के अत्यधिक उपयोग से बचने तथा मृदा परीक्षण आधारित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाने की सलाह दी गई है।

**मृदा परीक्षण-खेत की "स्वास्थ्य रिपोर्ट"** जिस प्रकार डॉक्टर उपचार से पहले स्वास्थ्य की जाँच करता है, उसी प्रकार किसान को उर्वरक डालने से पहले मृदा की स्थिति जाननी चाहिए। मृदा परीक्षण से किसान को यह जानकारी मिल सकती है कि उसके खेत में उपलब्ध नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा अन्य पोषक तत्वों की स्थिति कैसी है। इसके आधार पर फसल की आवश्यकता के अनुसार उर्वरक की मात्रा निर्धारित की जा सकती है। मृदा परीक्षण का सबसे बड़ा लाभ यह है कि किसान अनुमान के आधार पर नहीं, बल्कि जानकारी के आधार पर निवेश करता है। इससे अनावश्यक उर्वरक की बचत हो सकती है और जिस पोषक तत्व की वास्तव में कमी है, उसकी पूर्ति की जा सकती है। इसलिए प्रत्येक किसान को समय-समय पर मृदा परीक्षण कराकर अपनी खेत की पोषक स्थिति का रिकॉर्ड रखना चाहिए।

**4R Nutrient Management को समझें**

संतुलित उर्वरक प्रबंधन के लिए 4R सिद्धांत उपयोगी है–

**Right Source – सही स्रोत**-फसल और मृदा की आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त उर्वरक या पोषक स्रोत चुनें।

**Right Rate – सही मात्रा**-मृदा परीक्षण और फसल की अनुशंसित आवश्यकता के अनुसार मात्रा निर्धारित करें।

**Right Time – सही समय**-फसल की पोषक तत्व आवश्यकता के अनुसार उचित समय पर उर्वरक दें।

**Right Place – सही स्थान**-उर्वरक को इस प्रकार दें कि पौधे तक पोषक तत्व प्रभावी रूप से पहुँच सकें और नुकसान कम हो।

ICAR ने भी रासायनिक उर्वरकों के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए इसी प्रकार के 4R दृष्टिकोण और मृदा परीक्षण आधारित संतुलित एवं एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन पर जोर दिया है।

**जैविक स्रोतों के साथ रासायनिक उर्वरकों का समन्वय**-संतुलित पोषण का अर्थ रासायनिक उर्वरकों को पूरी तरह छोड़ देना नहीं है। बल्कि आवश्यकता के अनुसार रासायनिक, जैविक और जैव उर्वरक स्रोतों का समन्वित उपयोग अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण है। गोबर की अच्छी तरह सड़ी खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष तथा उपयुक्त जैव उर्वरक मृदा के जैविक स्वास्थ्य को सुधारने में योगदान कर सकते हैं। ICAR के दीर्घकालिक प्रयोगों से संकेत मिलता है कि अनुशंसित NPK के साथ FYM जैसे जैविक स्रोतों का समावेश मृदा जैविक कार्बन, भौतिक दशाओं और जैविक गतिविधियों को बेहतर बनाए रखने में मदद करता है। इसलिए किसान के लिए बेहतर रणनीति है-"रसायन और जैविक स्रोतों का वैज्ञानिक संतुलन", न कि किसी एक स्रोत पर पूर्ण निर्भरता।

**मध्य भारत की खेती में इसका महत्व**-मध्य भारत में सोयाबीन-गेहूँ, सोयाबीन-चना, गेहूँ-चना तथा अन्य फसल प्रणालियाँ महत्वपूर्ण हैं। विशेष रूप से मध्य प्रदेश में सोयाबीन आधारित कृषि प्रणालियों में मृदा पोषक तत्व प्रबंधन का विशेष महत्व है। ICAR–भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, भोपाल ने मध्य प्रदेश के मालवा और विंध्य क्षेत्र की सोयाबीन-गेहूँ प्रणाली के लिए एकीकृत पोषक तत्व आपूर्ति से संबंधित विशिष्ट सिफारिशें विकसित की हैं। यह उदाहरण बताता है कि फसल प्रणाली और क्षेत्र की मृदा स्थिति को ध्यान में रखकर पोषक तत्व प्रबंधन करना अधिक प्रभावी है। इसलिए मध्य भारत के किसानों को केवल सामान्य उर्वरक मात्रा के बजाय अपने क्षेत्र की अनुशंसित कृषि तकनीक, मृदा परीक्षण और फसल प्रणाली के आधार पर पोषण प्रबंधन करना चाहिए।

**संतुलित पोषण से किसान की आय कैसे बढ़ेगी?** किसान की आय बढ़ाने के लिए केवल उत्पादन बढ़ाना पर्याप्त नहीं है। उत्पादन लागत और शुद्ध लाभ दोनों महत्वपूर्ण हैं। यदि किसान बिना आवश्यकता के अतिरिक्त यूरिया या डीएपी खरीदता है, तो उसका खर्च बढ़ता है। यदि इसके बावजूद उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि नहीं होती, तो लाभ कम हो जाता है। इसके विपरीत, मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक प्रबंधन से अनावश्यक input को कम किया जा सकता है और आवश्यक पोषक तत्वों पर निवेश बढ़ाया जा सकता है। इससे fertilizer use efficiency बेहतर हो सकती है। उदाहरण के लिए, यदि किसी खेत में पोटाश की आवश्यकता है लेकिन किसान लगातार केवल यूरिया डाल रहा है, तो अतिरिक्त यूरिया पर खर्च करने के बजाय संतुलित पोषण अपनाना अधिक आर्थिक रूप से लाभकारी हो सकता है।

**इस प्रकार संतुलित पोषण का लक्ष्य होना चाहिए** कम अपव्यय * बेहतर पोषक तत्व उपयोग * स्वस्थ फसल * स्थिर उत्पादन * कम लागत * अधिक शुद्ध आय।

**पोषक तत्व उपयोग दक्षता बढ़ाना जरूरी**-कृषि में डाला गया प्रत्येक पोषक तत्व पौधे द्वारा पूरी तरह उपयोग नहीं किया जाता। विशेषकर नाइट्रोजन में नुकसान लीचिंग, वाष्पीकरण और अन्य प्रक्रियाओं के माध्यम से हो सकता है। ICAR-भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान से प्रकाशित हालिया सामग्री में भी नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश और सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता में पर्याप्त अंतर की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है। इसलिए पोषक तत्व प्रबंधन का उद्देश्य केवल अधिक मात्रा में उर्वरक डालना नहीं, बल्कि पौधे द्वारा पोषक तत्वों के अधिकतम उपयोग को सुनिश्चित करना होना चाहिए। इसके लिए split application, उचित सिंचाई, जैविक पदार्थों का उपयोग, उपयुक्त उर्वरक स्रोत तथा फसल की अवस्था के अनुसार पोषण देना उपयोगी हो सकता है।

**सूक्ष्म पोषक तत्वों को न करें नजरअंदाज**-कई बार किसान NPK को ही पूरा पोषण मान लेते हैं। लेकिन लगातार खेती और उच्च उपज के कारण जिंक, सल्फर, बोरॉन और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी भी सामने आ सकती है। इनकी कमी के लक्षण दिखाई देने पर बिना पुष्टि के कोई पोषक तत्व डालने के बजाय मृदा परीक्षण और कृषि विशेषज्ञ की सलाह लेना अधिक उचित है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा कम होने के बावजूद उनकी भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इसलिए ÷कम मात्रा में आवश्यक" का अर्थ "महत्वहीन" नहीं है।

**फसल अवशेषों का प्रबंधन भी पोषक तत्व प्रबंधन है**-फसल कटाई के बाद खेत में बचे अवशेषों को जलाने के बजाय उनका उचित प्रबंधन किया जा सकता है। फसल अवशेषों को मिट्टी में मिलाने, कम्पोस्ट बनाने या अन्य उपयुक्त उपयोग से पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण में मदद मिल सकती है। इससे बाहरी inputs पर निर्भरता को कुछ हद तक कम करने और मृदा में जैविक पदार्थ बनाए रखने में मदद मिल सकती है।

**डिजिटल और स्मार्ट पोषक तत्व प्रबंधन**-भविष्य में उर्वरक प्रबंधन और अधिक सटीक होने जा रहा है। Soil Health Card, soil fertility maps, Soil Test Crop Response (STCR), Site-Specific Nutrient Management (SSNM), सेंसर आधारित तकनीक और डिजिटल fertilizer recommendation systems किसान को खेत-विशिष्ट सलाह देने में मदद कर सकते हैं। ICAR–भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, भोपाल द्वारा मृदा परीक्षण आधारित तथा लक्षित उपज हेतु उर्वरक सिफारिश से संबंधित तकनीकें विकसित की गई हैं। इससे भविष्य में "एक खेत–एक सिफारिश" के बजाय "हर खेत के लिए उसकी जरूरत के अनुसार पोषण÷ की दिशा मजबूत हो सकती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
नई दिल्ली

सीमा होदकासीया, सुमित शेखर
आईसीएआर–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

# प्राकृतिक खेती से मिट्टी की सेहत में सुधार: टिकाऊ कृषि की ओर एक कदम

**भूमिका:** मिट्टी केवल पौधों को सहारा देने वाला माध्यम नहीं है, बल्कि यह जीवित तंत्र है, जिसमें असंख्य सूक्ष्मजीव, केंचुए, जैविक पदार्थ, खनिज और पोषक तत्व पाए जाते हैं। स्वस्थ मिट्टी ही स्वस्थ फसल और अच्छी उपज का आधार है। लगातार बढ़ती खेती की लागत, मिट्टी में जैविक कार्बन की कमी, पोषक तत्वों का असंतुलन तथा मिट्टी की भौतिक और जैविक गुणवत्ता में गिरावट आज कृषि के सामने बड़ी चुनौतियां हैं। ऐसे समय में प्राकृतिक खेती मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने और खेती को अधिक टिकाऊ बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में उभर रही है।

**प्राकृतिक खेती क्या है?:** प्राकृतिक खेती ऐसी कृषि पद्धति है जिसमें स्थानीय रूप से उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करते हुए मिट्टी, पौधों और सूक्ष्मजीवों के बीच प्राकृतिक संबंधों को मजबूत करने पर जोर दिया जाता है। इसमें रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता कम करने तथा खेत में उपलब्ध जैविक संसाधनों का पुनर्चक्रण करने का प्रयास किया जाता है। बीजामृत, जीवामृत, घनजीवामृत, आच्छादन (मल्चिंग), प्राकृतिक कीट प्रबंधन तथा फसल विविधीकरण जैसी तकनीकों का उपयोग प्राकृतिक खेती में किया जाता है।

**मिट्टी के जैविक स्वास्थ्य में सुधार:** प्राकृतिक खेती का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव मिट्टी की जैविक गतिविधियों पर पड़ सकता है। मिट्टी में बैक्टीरिया, फफूंद, एक्टिनोमाइसीट्स तथा अन्य सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थों के अपघटन और पोषक तत्वों के चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जैविक पदार्थों और प्राकृतिक इनपुट के उचित उपयोग से सूक्ष्मजीवों के लिए ऊर्जा और कार्बन के स्रोत उपलब्ध होते हैं, जिससे उनकी गतिविधि बढ़ सकती है। सूक्ष्मजीव सक्रिय होने पर कार्बनिक पदार्थों का अपघटन तेज होता है और नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा अन्य पोषक तत्व पौधों के लिए उपलब्ध रूप में परिवर्तित होते हैं। इस प्रकार प्राकृतिक खेती मिट्टी में होने वाली जैविक प्रक्रियाओं को बढ़ावा देकर पोषक तत्वों के प्राकृतिक चक्रण में योगदान कर सकती है।

**मिट्टी में जैविक कार्बन की भूमिका:** मिट्टी का जैविक कार्बन मिट्टी के स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण संकेतक है। यह मिट्टी की संरचना, जल धारण क्षमता, सूक्ष्मजीवी गतिविधि तथा पोषक तत्वों की उपलब्धता को प्रभावित करता है। प्राकृतिक खेती में फसल अवशेषों को खेत में रखना, मल्चिंग करना तथा स्थानीय जैविक संसाधनों का पुनः उपयोग करना मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों के संचय में योगदान कर सकता है। जब फसल अवशेषों को जलाने के बजाय मिट्टी में वापस मिलाया जाता है, तो उनमें मौजूद कार्बन और पोषक तत्व मिट्टी के जैविक चक्र का हिस्सा बन जाते हैं। इससे लंबे समय में मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ और कार्बन भंडारण को बनाए रखने में सहायता मिल सकती है।

**मिट्टी की संरचना और जल धारण क्षमता:** स्वस्थ मिट्टी में अच्छे आकार के मृदा कणों के समूह अर्थात् मृदा समुच्चय पाए जाते हैं। जैविक पदार्थ और सूक्ष्मजीव इन समुच्चयों के निर्माण और स्थायित्व में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्राकृतिक खेती में जैविक पदार्थों की उपलब्धता बढ़ने से मिट्टी की संरचना में सुधार हो सकता है। मल्चिंग प्राकृतिक खेती की एक महत्वपूर्ण तकनीक है। मिट्टी की सतह पर फसल अवशेषों की परत रखने से सूर्य की सीधी गर्मी कम होती है और वाष्पीकरण घट सकता है। इससे मिट्टी में नमी लंबे समय तक बनी रहने में सहायता मिलती है। वर्षा के दौरान मल्च मिट्टी की सतह पर पानी के सीधे प्रहार को कम करके मिट्टी के कटाव को भी कम कर सकता है।

**पोषक तत्वों की उपलब्धता:** प्राकृतिक खेती में पोषक तत्वों का प्रबंधन केवल बाहरी उर्वरक देने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि मिट्टी में मौजूद पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण पर भी जोर दिया जाता है। जीवामृत, घनजीवामृत, फसल अवशेष तथा अन्य जैविक पदार्थ सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों को प्रभावित कर सकते हैं। मिट्टी में सक्रिय सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थों के अपघटन के माध्यम से पोषक तत्वों को खनिज रूप में परिवर्तित करते हैं। कुछ सूक्ष्मजीव वायुमंडलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण, अघुलनशील फास्फोरस के घुलनशीलकरण तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता में योगदान करते हैं। हालांकि, प्राकृतिक खेती में पोषक तत्वों की उपलब्धता खेत की मिट्टी, फसल, जलवायु और उपयोग किए गए जैविक संसाधनों के अनुसार अलग-अलग हो सकती है। इसलिए मिट्टी की जांच के आधार पर पोषक तत्व प्रबंधन करना आवश्यक है।

**केंचुओं और लाभकारी जीवों के लिए अनुकूल वातावरण:** जैविक पदार्थों से भरपूर मिट्टी केंचुओं और अन्य लाभकारी जीवों के लिए बेहतर वातावरण प्रदान कर सकती है। केंचुए मिट्टी को भुरभुरा बनाने, जैविक पदार्थों के अपघटन और पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण में योगदान देते हैं। इसी प्रकार अनेक लाभकारी सूक्ष्मजीव पौधों की जड़ों के आसपास सक्रिय रहकर पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध कराने तथा कुछ रोगजनक सूक्ष्मजीवों के प्रभाव को कम करने में मदद कर सकते हैं।

**मिट्टी के स्वास्थ्य में प्राकृतिक खेती की दीर्घकालिक भूमिका:** प्राकृतिक खेती का उद्देश्य केवल एक मौसम में अधिक उपज प्राप्त करना नहीं, बल्कि मिट्टी की उत्पादकता को लंबे समय तक बनाए रखना है। इसके लिए फसल विविधीकरण, फसल अवशेष प्रबंधन, आच्छादन, जैविक पदार्थों का पुनर्चक्रण और संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन को अपनाना आवश्यक है। हालांकि प्राकृतिक खेती को अपनाते समय यह समझना जरूरी है कि हर खेत की मिट्टी, जलवायु और फसल प्रणाली अलग होती है। इसलिए किसी भी प्राकृतिक इनपुट को बिना आवश्यकता और बिना उचित मात्रा के प्रयोग करने के बजाय स्थानीय परिस्थितियों तथा मिट्टी परीक्षण के आधार पर निर्णय लेना अधिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। प्राकृतिक खेती को वैज्ञानिक मृदा परीक्षण, उचित फसल प्रबंधन और जल संरक्षण तकनीकों के साथ जोड़ने से इसके लाभ अधिक प्रभावी हो सकते हैं।

**किसानों के लिए कुछ सरल सुझाव**

1. फसल अवशेषों को जलाने के बजाय खेत में मल्चिंग या उचित प्रबंधन करें।
2. खेत में उपलब्ध जैविक संसाधनों जैसे फसल अवशेष और पशु-आधारित संसाधनों का पुनर्चक्रण करें।
3. मिट्टी की नियमित जांच कर पोषक तत्वों की स्थिति जानें।
4. एक ही फसल पर निर्भर रहने के बजाय फसल विविधीकरण और फसल चक्र अपनाएं।
5. मिट्टी की सतह को लंबे समय तक खुला न छोड़ें और आवश्यकता के अनुसार मल्च का उपयोग करें।
6. जैविक एवं प्राकृतिक इनपुट का प्रयोग स्थानीय परिस्थितियों और अनुशंसित मात्रा के अनुसार करें।
7. सिंचाई और जल संरक्षण की उचित व्यवस्था करें।
8. रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अनावश्यक एवं असंतुलित उपयोग कम करें।

**निष्कर्ष:** स्वस्थ मिट्टी ही टिकाऊ खेती की नींव है। प्राकृतिक खेती मिट्टी के जैविक, भौतिक और रासायनिक गुणों को बेहतर बनाने के लिए अनेक अवसर प्रदान करती है। जैविक पदार्थों का पुनर्चक्रण, फसल अवशेषों का संरक्षण, मल्चिंग और सूक्ष्मजीवी गतिविधियों को बढ़ावा देने जैसी प्रक्रियाएं मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। हालांकि प्राकृतिक खेती को किसी एक इनपुट या तकनीक तक सीमित नहीं किया जाना चाहिए। इसे मिट्टी परीक्षण, स्थानीय संसाधनों, उचित फसल प्रबंधन और वैज्ञानिक कृषि तकनीकों के साथ अपनाना अधिक प्रभावी होगा। इस प्रकार प्राकृतिक खेती किसानों की लागत कम करने के साथ-साथ मिट्टी की सेहत, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और दीर्घकालिक कृषि उत्पादकता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम बन सकती है।

# महुआ बीज तेल निष्कर्षण द्वारा मूल्य संवर्धन से ग्रामीण उद्यमिता

**डॉ. मो. इरफान अहमद अंसारी** सह-प्राध्यापक सह वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रधान अन्वेषक, अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (फसलोपरांत अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी) कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची-834006, (झारखण्ड)

**प्रस्तावना-** महुआ झारखंड सहित मध्य, पूर्वी एवं उत्तर-मध्य भारत के वन एवं ग्रामीण क्षेत्रों का एक महत्वपूर्ण बहुउद्देशीय वृक्ष है। झारखंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, ओडिशा, बिहार, उत्तर प्रदेश एवं महाराष्ट्र में इसका सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक महत्व है तथा इसके फूल, फल और बीज प्रमुख लघु वनोपज हैं। महुआ के पके फलों से प्राप्त बीजों में तेल पाया जाता है। महुआ बीज की वसा को महुआ बटर या मोवरा बटर भी कहा जाता है, जिसमें ओलिक, स्टीयरिक, पामिटिक एवं लिनोलिक जैसे प्रमुख वसीय अम्ल तथा फाइटोस्टेरॉल एवं टोकोफेरॉल जैसे जैव-सक्रिय घटक पाए जाते हैं। तापमान के अनुसार यह वसा अर्ध-ठोस या ठोस अवस्था में रह सकती है और इसके गुणों के कारण इसका उपयोग मुख्यतः साबुन, त्वचा देखभाल उत्पाद, मालिश तेल, कॉस्मेटिक एवं अन्य औद्योगिक उत्पादों में किया जाता है तथा जबकि जैव-ईंधन जैसे क्षेत्रों में भी इसकी संभावनाओं पर अनुसंधान जारी है। महुआ बीजों का आर्थिक महत्व केवल संग्रहण एवं कच्चे रूप में बिक्री तक सीमित नहीं है। सफाई, सुखाना, ग्रेडिंग, डिकॉर्टिकेशन, गिरी की तैयारी, वैज्ञानिक तेल निष्कर्षण, निस्यंदन एवं आवश्यकता के अनुसार शोधन द्वारा इनका प्रभावी मूल्यवर्धन किया जा सकता है। पारंपरिक विधि से लेकर आधुनिक स्क्रू एक्सपेलर तथा औद्योगिक सॉल्वेंट एक्सट्रैक्शन तक विभिन्न तकनीकों द्वारा तेल प्राप्त किया जाता है। निष्कर्षण के बाद प्राप्त महुआ खली भी एक महत्वपूर्ण सह-उत्पाद है, जिसका उपयोग उसके संघटन एवं सुरक्षित उपयोग के आधार पर कृषि तथा अन्य गैर-खाद्य उद्देश्यों में किया जा सकता है। इस प्रकार महुआ बीजों का वैज्ञानिक प्रसंस्करण मूल्यवर्धन, आय एवं रोजगार सृजन तथा ग्रामीण उद्यमिता को एक साथ बढ़ावा देने वाला संभावनाशील एवं टिकाऊ व्यवसाय मॉडल बन सकता है। उचित लाइसेंस, वैज्ञानिक प्रसंस्करण, गुणवत्ता नियंत्रण, आकर्षक पैकेजिंग एवं प्रभावी ब्रांडिंग के माध्यम से महुआ तेल को गुणवत्तायुक्त, बाजारोन्मुख एवं लाभकारी उत्पाद के रूप में विकसित किया जा सकता है।

**महुआ बीज से तेल निष्कर्षण-** महुआ बीज से पारंपरिक चिपा/घानी विधि द्वारा तेल निष्कर्षण ग्रामीण क्षेत्रों में अपनाई जाने वाली एक सरल एवं स्थानीय तकनीक है। महुआ बीज से पारंपरिक विधि द्वारा तेल निष्कर्षण में सबसे पहले बीजों को रातभर पानी में भिगोकर उनकी कठोर बाहरी परत को नरम किया जाता है। इसके बाद बीजों को पत्थर से रगड़कर छिलका अलग किया जाता है तथा प्राप्त गिरी को साफ करके धूप में सुखाया जाता है। सूखी गिरी को पारंपरिक ढेकी में कूटकर प्राप्त सामग्री को सूती कपड़े में लपेटकर भाप द्वारा हल्का गर्म किया जाता है। इसके बाद गर्म सामग्री को पत्थर से बनी पारंपरिक चिपा/दबाव व्यवस्था में रखकर क्रमशः दबाया जाता है, जिससे गिरी से तेल बाहर निकलता है। प्राप्त तेल को साफ कपड़े या फिल्टर से छानकर अशुद्धियों को अलग किया जाता है और उपयुक्त पात्रों में संग्रहित किया जाता है। यह विधि स्थानीय संसाधनों एवं पारंपरिक उपकरणों पर आधारित होकर महुआ बीज के मूल्य संवर्धन तथा ग्रामीण स्तर पर तेल उत्पादन में उपयोगी है। प्रक्रिया का संक्षिप्त क्रम इस प्रकार है- महुआ बीज * रातभर पानी में भिगोना * पत्थर से रगड़कर छिलका हटाना * गिरी की सफाई * धूप में सुखाना * ढेकी में कूटना * सूती कपड़े में लपेटना * भाप द्वारा हल्का गर्म करना * पत्थर की पारंपरिक दबाव विधि/चिपा * तेल निष्कर्षण * छानना * संग्रहण। इसके अतिरिक्त सूखी गिरी से तेल घानी/कोल्हू, कोल्ड-प्रेस, यांत्रिक स्क्रू एक्सपेलर तथा औद्योगिक स्तर पर सॉल्वेंट एक्सट्रैक्शन द्वारा भी

प्राप्त किया जा सकता है। कोल्ड-प्रेसिंग अपेक्षाकृत कम तापमान पर तेल निकालने के कारण प्राकृतिक गुणों को बनाए रखने वाले विशेष या प्रीमियम उत्पादों के लिए उपयुक्त हो सकती है। व्यावसायिक स्तर पर स्क्रू एक्सपेलर अधिक व्यावहारिक है। बड़े औद्योगिक संयंत्रों में यांत्रिक प्रेसिंग के बाद खली में बचा तेल सॉल्वेंट एक्सट्रैक्शन द्वारा पुनः प्राप्त किया जा सकता है। यह उच्च तेल रिकवरी प्रदान कर सकता है, लेकिन इसके लिए विशेष उपकरण, सॉल्वेंट रिकवरी प्रणाली, तकनीकी विशेषज्ञता तथा कठोर सुरक्षा प्रबंधन आवश्यक होता है। व्यावसायिक प्रसंस्करण में डिकॉर्टिकेटर, स्क्रू ऑयल एक्सपेलर, फिल्टर प्रेस, इत्यादि प्रमुख मशीनरी हैं। एक्सपेलर से प्राप्त कच्चे तेल में सूक्ष्म ठोस कण एवं अन्य अशुद्धियाँ हो सकती हैं। इन्हें पहले निथारने और उसके बाद कपड़े, छलनी या फिल्टर प्रेस द्वारा निस्यंदन से हटाया जाता है। छोटे स्तर पर अवसादन के बाद ऊपरी साफ तेल को अलग किया जा सकता है, जबकि व्यावसायिक स्तर पर नियंत्रित निस्यंदन अधिक उपयुक्त है। तेल के अंतिम उपयोग के अनुसार आवश्यकता पड़ने पर डीगमिंग, न्यूट्रलाइजेशन, ब्लीचिंग एवं डीओडोराइजेशन जैसी रिफाइनिंग प्रक्रियाएँ अपनाई जा सकती हैं। हालांकि, खाद्य, कॉस्मेटिक या औद्योगिक उपयोग के अनुसार रिफाइनिंग की आवश्यकता अलग-अलग प्रकार की होती है। महुआ तेल के मुख्य उपयोग एवं औषधीय लाभ - महुआ बीज से प्राप्त तेल का पारंपरिक, कॉस्मेटिक एवं औद्योगिक महत्व है। ग्रामीण एवं पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में इसका उपयोग त्वचा की देखभाल, रूखापन, खुजली तथा जोड़ों और मांसपेशियों की मालिश के लिए किया जाता रहा है। औद्योगिक रूप से महुआ तेल साबुन, डिटर्जेंट, कॉस्मेटिक, हेयर एवं मालिश तेल तथा अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों के लिए उपयोगी कच्चा माल है। इसके गुणों के कारण यह त्वचा-देखभाल एवं व्यक्तिगत उपयोग के उत्पादों में उपयोग किया जा सकता है। ऊर्जा क्षेत्र में इसका पारंपरिक उपयोग दीपक जलाने में होता रहा है तथा उचित प्रसंस्करण एवं मानकीकरण के बाद बायोडीजल एवं अन्य वैकल्पिक ईंधन के लिए इसकी संभावनाओं पर भी अनुसंधान किया जा रहा है। कुछ क्षेत्रों में महुआ तेल का पारंपरिक खाद्य उपयोग भी उल्लेखित है, लेकिन खाद्य उपयोग के लिए उत्पाद की गुणवत्ता एवं लागू खाद्य-सुरक्षा मानकों का पालन आवश्यक है।

महुआ तेल की पैकेजिंग, गुणवत्ता, ब्रांडिंग, विपणन एवं अनुपालन- महुआ तेल को गुणवत्तापूर्ण एवं बाजारोन्मुख उत्पाद बनाने के लिए वैज्ञानिक निष्कर्षण, निस्यंदन, गुणवत्ता नियंत्रण, उपयुक्त पैकेजिंग, नियमानुसार लेबलिंग, ब्रांडिंग एवं विपणन को एकीकृत रूप से अपनाना आवश्यक है। तापमान के अनुसार तेल के गाढ़े या अर्ध-ठोस होने को ध्यान में रखते हुए ऐसी पैकेजिंग चुननी चाहिए जो प्रकाश, वायु, नमी एवं संदूषण से सुरक्षा दे; खुदरा के लिए PET बोतल/पाउच तथा थोक के लिए HDPE कंटेनर या टिन पैक उपयोगी हो सकते हैं। फिलिंग, कैपिंग एवं सीलिंग मशीनों से स्वच्छता, मात्रा की एकरूपता एवं श्रम दक्षता बढ़ाई जा सकती है। लेबल पर ब्रांड नाम, निर्माता/पैकर विवरण, FSSAI लाइसेंस/पंजीकरण, नेट मात्रा, बैच संख्या, पैकिंग तिथि, "Best Before" तथा अन्य आवश्यक विवरण अंकित होने चाहिए और विशेष दावे नियमानुसार ही किए जाने चाहिए। तेल की गुणवत्ता बीज की नमी एवं स्थिति, भंडारण, निष्कर्षण, तापमान, निस्यंदन एवं पैकेजिंग पर निर्भर करती है तथा एसिड वैल्यू, पेरॉक्साइड वैल्यू, आयोडीन वैल्यू, सैपोनिफिकेशन वैल्यू, नमी एवं ऑक्सीकरण स्थिरता जैसे मानकों से इसका आकलन किया जा सकता है। रैंसिडिटी से बचाव के लिए तेल को ठंडी, अंधेरी एवं अच्छी तरह सीलबंद पैकेजिंग में रखना चाहिए। प्रभावी ब्रांडिंग एवं विपणन द्वारा इसे स्थानीय से शहरी, संस्थागत, खुदरा एवं डिजिटल बाजारों तक पहुँचाया जा सकता है। ग्राम या क्लस्टर स्तर पर CFC, FPO एवं SHG के माध्यम से सामूहिक संग्रहण, प्रसंस्करण एवं विपणन से लागत कम करने, गुणवत्ता सुधारने एवं उत्पादकों की सौदेबाजी क्षमता बढ़ाने में सहायता मिल सकती है। साथ ही, इकाई एवं उत्पाद के स्वरूप के अनुसार MSME पंजीकरण, आवश्यक लाइसेंस/NOC, ट्रेडमार्क तथा अन्य नियामकीय अनुमतियों का पालन आवश्यक है।

**महुआ बीज तेल निष्कर्षण से ग्रामीण उद्यमिता, रोजगार एवं बाजार विकास-** महुआ बीजों से तेल निष्कर्षण मूल्य संवर्धन, आय सृजन, रोजगार एवं ग्रामीण उद्यमिता का प्रभावी माध्यम है। स्थानीय कच्चे माल की उपलब्धता और लघु स्तर पर स्थापना की संभावना के कारण मिनी तेल निष्कर्षण इकाइयाँ SHGs, FPOs, सहकारी समितियों, महिला उद्यमियों एवं ग्रामीण युवाओं के लिए उपयुक्त व्यवसाय मॉडल बन सकती हैं। बीज संग्रहण, प्रसंस्करण, तेल निष्कर्षण, पैकेजिंग, भंडारण, परिवहन एवं विपणन में रोजगार के अवसर विकसित होते हैं, जबकि ग्राम या क्लस्टर स्तर पर सामान्य सुविधा केंद्र के माध्यम से मशीनरी, भंडारण, गुणवत्ता परीक्षण एवं पैकेजिंग सुविधाओं का सामूहिक उपयोग किया जा सकता है। महुआ तेल से साबुन, कॉस्मेटिक, मालिश तेल एवं अन्य उपयुक्त मूल्यवर्धित उत्पाद तथा खली के सुरक्षित कृषि एवं गैर-खाद्य उपयोग से अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है। गुणवत्ता नियंत्रण, पैकेजिंग, ब्रांडिंग एवं प्रभावी बाजार संपर्क द्वारा उत्पाद को स्थानीय बाजार से शहरी, संस्थागत, खुदरा एवं डिजिटल बाजारों तक पहुँचाया जा सकता है। महुआ आधारित उद्यमों को पात्रता के अनुसार TRIFED, MSME, NABARD एवं Startup India जैसी संस्थागत पहलों से सहायता मिल सकती है, जबकि संबंधित वर्तमान योजनाओं एवं अनुमतियों की पुष्टि आवश्यक है। महुआ तेल के संभावित बाजारों में साबुन एवं कॉस्मेटिक उद्योग, त्वचा एवं हेयर-केयर उत्पाद, आयुर्वेदिक/प्राकृतिक उत्पाद तथा जैव-ईंधन क्षेत्र शामिल हैं और B2B विपणन, व्यापार मेलों, संस्थागत खरीदारों, वितरकों एवं डिजिटल माध्यमों का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार "महुआ बीज * वैज्ञानिक प्रसंस्करण * तेल एवं खली * मूल्यवर्धन * पैकेजिंग एवं ब्रांडिंग * बाजार * आय एवं रोजगार" की एकीकृत मूल्य श्रृंखला, विशेषकर झारखंड में, महुआ को टिकाऊ, लाभकारी एवं बाजारोन्मुख ग्रामीण उद्यम में परिवर्तित करने की महत्वपूर्ण क्षमता रखती है।

**निष्कर्ष-** महुआ बीज केवल तेल का स्रोत नहीं, बल्कि स्थानीय संसाधनों के मूल्यवर्धन, आय एवं रोजगार सृजन तथा ग्रामीण उद्यमिता का महत्वपूर्ण आधार है। वैज्ञानिक संग्रहण, सुखाने, निष्कर्षण, निस्यंदन, गुणवत्ता नियंत्रण, उपयुक्त पैकेजिंग, ब्रांडिंग एवं नियामकीय अनुपालन द्वारा गुणवत्तायुक्त महुआ तेल और उपयोगी सह-उत्पाद प्राप्त कर अधिक आर्थिक मूल्य सृजित किया जा सकता है। FPOs, SHGs, सहकारी समितियों, महिला उद्यमियों एवं ग्रामीण युवाओं की भागीदारी, तकनीकी प्रशिक्षण और संगठित बाजार संपर्क से महुआ तेल प्रसंस्करण को टिकाऊ एवं लाभकारी ग्रामीण व्यवसाय के रूप में विकसित किया जा सकता है। इस प्रकार "महुआ बीज * वैज्ञानिक प्रसंस्करण * गुणवत्तायुक्त तेल एवं सह-उत्पाद * मूल्यवर्धन * पैकेजिंग एवं विपणन * आय एवं रोजगार" की एकीकृत मूल्य श्रृंखला, विशेषकर झारखंड में, जनजातीय एवं ग्रामीण आजीविका, महिला आर्थिक सशक्तीकरण, उत्पादकों की आय वृद्धि और सतत ग्रामीण विकास का प्रभावी माध्यम बन सकती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका



# सब्जी की फसलों में मल्चिंग: कई फायदों वाला एक आसान तरीका

✍ सृष्टि पीएच.डी. शोधार्थी, सब्जी विज्ञान विभाग, बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, (हिमाचल प्रदेश)

## सारांश

मल्चिंग फसल प्रबंधन का एक आसान और व्यावहारिक तरीका है, जिससे सब्जी उत्पादन में कई फायदे मिल सकते हैं। इसमें पौधों के आस-पास मिट्टी की सतह को जैविक या अजैविक पदार्थों से ढका जाता है ताकि मिट्टी का माहौल अनुकूल बना रहे। मल्चिंग से मिट्टी में नमी बनाए रखने, खरपतवार को रोकने, मिट्टी का तापमान नियंत्रित करने, मिट्टी के कटाव को कम करने और मिट्टी की संरचना में सुधार करने में मदद मिलती है। सब्जी की फसलों में, इससे जड़ों का बेहतर विकास, पोषक तत्वों का बेहतर इस्तेमाल और साफ-सुथरी उपज भी मिल सकती है। पुआल, सूखी पत्तियां, फसल के अवशेष और खाद जैसे जैविक पदार्थ मिट्टी में जैविक तत्व जोड़कर अतिरिक्त लाभ पहुंचाते हैं, जबकि प्लास्टिक मल्च खरपतवार को रोकने और नमी बनाए रखने में असरदार होते हैं। मल्चिंग कितनी असरदार होगी, यह फसल, मौसम, मिट्टी के प्रकार, मल्च सामग्री और इस्तेमाल के तरीके पर निर्भर करता है। इसलिए, मल्च का सही चुनाव और प्रबंधन फसल को अच्छी तरह जमाने, उत्पादकता बढ़ाने और संसाधनों का बेहतर इस्तेमाल करने में मदद कर सकता है। पानी की बढ़ती कमी, उत्पादन की बढ़ती लागत और बदलते मौसम के हालात को देखते हुए, मल्चिंग किसानों को सब्जी उत्पादन को अधिक कुशल और टिकाऊ बनाने का एक अपेक्षाकृत आसान तरीका देती है।

## परिचय

सब्जी की फसलों को उनके बढ़ने के समय मिट्टी की नमी, तापमान, पोषक तत्वों और खरपतवार के सही प्रबंधन की ज़रूरत होती है। मिट्टी की नमी और तापमान में उतार-चढ़ाव, खासकर ज़्यादा तापमान या कम बारिश के समय, फसल की बढ़त और पैदावार पर बुरा असर डाल सकते हैं। साथ ही, खरपतवार पानी, पोषक तत्वों, रोशनी और जगह के लिए सब्जी की फसलों से मुकाबला करते हैं, जिससे उत्पादन की लागत बढ़ती है और पैदावार कम हो जाती है।इन चुनौतियों से निपटने का सबसे आसान तरीका मल्चिंग है। मल्चिंग का मतलब है फसल के आस-पास मिट्टी की सतह को किसी उपयुक्त चीज़ से ढंकना। हालाँकि यह एक आसान तरीका है, लेकिन इसके फायदे सिर्फ़ नमी बचाने तक ही सीमित नहीं हैं। सही तरह से चुना गया मल्च जड़ों के आस-पास का माहौल बेहतर बना सकता है और सब्जी की फसलों को होने वाली कई तरह की परेशानियों को कम कर सकता है। पानी बचाने, टिकाऊ उत्पादन करने और अनावश्यक केमिकल के इस्तेमाल को कम करने पर बढ़ते ज़ोर के साथ, मल्चिंग आधुनिक सब्जी उत्पादन का एक अहम हिस्सा बन गई है।

## मल्चिंग क्या है?

मल्चिंग का मतलब है पौधों के आस-पास या फसल की कतारों के साथ मिट्टी की सतह को किसी चीज़ की परत से ढंकना। यह चीज़ उपलब्धता, फसल की ज़रूरत और उत्पादन के तरीके के आधार पर ऑर्गेनिक (जैविक) या इनऑर्गेनिक (अजैविक) हो सकती है।

## मल्चिंग हेतु इस्तेमाल होने वाली आम चीज़ें

| प्रकार | उदाहरण |
|---|---|
| ऑर्गेनिक मल्च | पुआल, सूखी पत्तियां, फसल के अवशेष, घास, खाद |
| इनऑर्गेनिक मल्च | प्लास्टिक फ़िल्में, खासकर पॉलीइथिलीन मल्च |
| बायोडिग्रेडेबल मल्च | बायोडिग्रेडेबल फ़िल्में और पौधों से बनी चीज़ें |

मल्च को सावधानी से लगाना चाहिए ताकि यह सीधे तने में रुकावट न डाले या पौधे के कॉलर (जड़ और तने का मिलन स्थल) के आस-पास बहुत ज़्यादा नमी न बनाए।

## सब्जी फसलों में मल्चिंग के लाभ

### लाभ एवं मुख्य प्रभाव

**मृदा नमी संरक्षण:** वाष्पीकरण कम करके जड़ क्षेत्र में नमी बनाए रखता है।

**खरपतवार नियंत्रण:** खरपतवारों का उगना कम करता है तथा पानी, पोषक तत्व और प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा घटाता है।

**मृदा तापमान नियंत्रण:** मृदा तापमान में उतार-चढ़ाव को कम करता है और जड़ वृद्धि में सहायता करता है।

**मृदा अपरदन में कमी:** वर्षा की बूंदों और सतही बहाव से होने वाले मृदा कटाव को कम करता है।

**मृदा स्वास्थ्य में सुधार:** जैविक मल्च मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ाकर उसकी संरचना, वायुसंचार और जलधारण क्षमता सुधारता है।

**स्वच्छ एवं गुणवत्तापूर्ण उपज:** फलों का मिट्टी से सीधा संपर्क कम होने से उपज अधिक स्वच्छ और बाजार योग्य रहती है।

**जल उपयोग दक्षता:** ड्रिप सिंचाई के साथ प्रयोग करने पर नमी की हानि कम होती है और जल उपयोग दक्षता बढ़ती है।

## एक टिकाऊ तरीका: मल्चिंग

मल्चिंग सिर्फ़ पैदावार बढ़ाने का तरीका नहीं है; यह संसाधनों को बचाने में भी मदद कर सकती है। ऑर्गेनिक मल्च से किसान स्थानीय स्तर पर उपलब्ध फ़सल के अवशेषों को जलाने या फेंकने के बजाय उनका दोबारा इस्तेमाल कर सकते हैं। पानी का वाष्पीकरण कम होने से सिंचाई के पानी की बचत होती है, जबकि खरपतवार को प्रभावी ढंग से रोकने से खरपतवार-नाशक दवाओं और बार-बार हाथ से निराई-गुड़ाई करने की ज़रूरत कम हो जाती है। हालाँकि, प्लास्टिक मल्च का इस्तेमाल ज़िम्मेदारी से किया जाना चाहिए। फ़सल की कटाई के बाद, इस्तेमाल किए गए प्लास्टिक को खेत में छोड़ने के बजाय हटा देना चाहिए और सही तरीके से इकट्ठा या रीसायकल करना चाहिए।

## किसानों के लिए काम की बातें

* फ़सल, मौसम और स्थानीय हालात के हिसाब से मल्च चुनें।
* फ़सल के अच्छी तरह जमने और मिट्टी तैयार होने के बाद ही मल्च लगाएं।
* मल्च को पौधे के तने या कॉलर से थोड़ा दूर रखें।
* सूखा ऑर्गेनिक मल्च लगाने से पहले अच्छी तरह सिंचाई करें।
* मल्च की परत बहुत मोटी न रखें।
* जहाँ मुमकिन हो, मल्चिंग के साथ ड्रिप सिंचाई का इस्तेमाल करें।
* कीटों, बीमारियों और ज़्यादा नमी के लिए खेत की नियमित रूप से निगरानी करें।
* कटाई के बाद प्लास्टिक मल्च हटा दें और उसे ज़िम्मेदारी से डिस्पोज़ करें।
* जहाँ आर्थिक रूप से सही हो, वहाँ स्थानीय स्तर पर उपलब्ध ऑर्गेनिक चीज़ों को प्राथमिकता दें।

## निष्कर्ष

मल्चिंग मिट्टी की नमी बनाए रखने, खरपतवार को नियंत्रित करने, मिट्टी का तापमान ठीक रखने और मिट्टी की सेहत सुधारने का एक आसान और असरदार तरीका है। जब इसे ड्रिप सिंचाई और सही फसल प्रबंधन के साथ मिलाया जाता है, तो इससे पानी के इस्तेमाल की क्षमता, फसल की बढ़त और उपज की गुणवत्ता बेहतर होती है, जिससे सब्जियों का उत्पादन ज़्यादा टिकाऊ और मुनाफ़े वाला बनता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका



# सब्जी उत्पादन में मल्चिंग का महत्व

अंकिता (पीएच.डी.)
डॉ. संतोष कुमारी (वरिष्ठ वैज्ञानिक)
अंजलि कुमारी (पीएच.डी.)
तनुज कुमार पीएच.डी.)
अभिषेक नेगी (पीएच.डी.)
वाई एस परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

*मल्चिंग एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पौधों के चारों ओर मिट्टी की सतह पर जैविक या कृत्रिम पदार्थों की एक परत बिछाई जाती है, जिससे फसलों की वृद्धि एवं विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। यह मिट्टी को हानिकारक जीवों से तथा पौधों की जड़ों को प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों से बचाती है।*

सब्जी फसलों में विभिन्न प्रकार की मल्चिंग सामग्री का प्रयोग किया जाता है, जैसे गोबर की खाद, कृत्रिम प्लास्टिक, समुद्री शैवाल, लकड़ी के टुकड़े, पत्तियाँ, घास, पुआल, रेत तथा पत्थर आदि। जैविक और कृत्रिम दोनों प्रकार की मल्चिंग खरपतवार नियंत्रण, वर्षा की बूंदों के सीधे प्रभाव से मिट्टी की सुरक्षा, मृदा अपरदन की रोकथाम, मृदा तापमान के नियमन तथा मृदा नमी के संरक्षण में सहायक होती हैं, जिससे सब्जी उत्पादन में सुधार होता है। मल्चिंग विशेष रूप से टमाटर, खीरा, मिर्च, बैंगन, भिंडी, पत्तागोभी, फूलगोभी, ब्रोकोली, प्याज, लहसुन, तरबूज, खरबूजा, स्क्वैश तथा अन्य सब्जी फसलों में लाभकारी होती है। सब्जी उत्पादन में उर्वरक, सिंचाई जल, कीटनाशक/रोगनाशक तथा निराई-गुड़ाई जैसी कृषि क्रियाओं की आवश्यकता होती है। मल्च का उचित प्रयोग इनपुट की आवश्यकता को कम करने तथा संसाधनों के कुशल उपयोग में सुधार करने में सहायक हो सकता है।

टमाटर और खीरा उच्च मूल्य वाली सब्जी फसलें हैं, जिनमें जल संरक्षण, खरपतवार नियंत्रण, मृदा तापमान के नियमन तथा फसल की वृद्धि एवं उत्पादन

प्लास्टिक मल्च

में सुधार के लिए कागज और प्लास्टिक मल्च का सामान्यतः प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार, तरबूज और खरबूजे में मृदा नमी के संरक्षण तथा फल की गुणवत्ता में सुधार के लिए प्लास्टिक मल्च का व्यापक उपयोग किया जाता है जबकि आलू, पत्तागोभी, फूलगोभी तथा अन्य खेत में उगाई जाने वाली सब्जियों में पुआल और सूखी घास जैसे जैविक मल्च उपयोगी होते हैं।

## मल्च के प्रकार

- **प्लास्टिक मल्चः** प्लास्टिक मल्च पॉलीथीन फिल्म की एक पतली परत होती है, जिसका उपयोग मिट्टी की सतह को ढकने के लिए किया जाता है। पॉलीथीन मल्चिंग के लिए सबसे अधिक प्रयोग की जाने वाली सामग्रियों में से एक है, क्योंकि इसे आसानी से प्रसंस्कृत किया जा सकता है तथा इसमें उत्कृष्ट रासायनिक प्रतिरोधकता, टिकाऊपन और लचीलापन होता है। सब्जी उत्पादन में विभिन्न रंगों के प्लास्टिक मल्च, जैसे काला, पारदर्शी, लाल, पीला, हरा, भूरा तथा सिल्वर/काला प्रयोग किए जाते हैं। काला प्लास्टिक मल्च खरपतवार नियंत्रण के लिए विशेष रूप से प्रभावी होता है, क्योंकि यह सूर्य के प्रकाश को रोकता है और खरपतवारों के अंकुरण एवं उद्भव को कम करता है। इसका प्रयोग सामान्यतः टमाटर, मिर्च, बैंगन, खीरा, शिमला मिर्च तथा भिंडी की खेती में किया जाता है। पारदर्शी मल्च अधिक मात्रा में सौर विकिरण को मिट्टी तक पहुँचने देता है तथा मृदा तापमान को बढ़ा सकता है। इसलिए इसका उपयोग मृदा सौर्यीकरण और प्रारंभिक मौसम में फसल उत्पादन के लिए किया जा सकता है।
- **जैविक मल्चः** जैविक मल्चिंग में उपयुक्त पौधों या पशु अवशेषों, जैसे छाल, लकड़ी के टुकड़े, सूखी घास, धान या गेहूँ का पुआल, सूखी पत्तियाँ, बुरादा, कटी हुई घास, गोबर की खाद तथा कम्पोस्ट का उपयोग मिट्टी की सतह को ढकने के लिए किया जाता है। जैविक मल्च विशेष रूप से आलू, पत्तागोभी, फूलगोभी, ब्रोकोली, प्याज, लहसुन, भिंडी तथा पत्तेदार सब्जियों में उपयोगी होता है। जैविक मल्च धीरे-धीरे विघटित होकर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाता है जिससे मिट्टी की बनावट और संरचना में सुधार होता है। इसके विघटन के दौरान पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व मुक्त होते हैं तथा लाभकारी मृदा सूक्ष्मजीवों को भोजन का स्रोत मिलता है। ये सूक्ष्मजीव मृदा समुच्चयन तथा पोषक तत्वों के चक्रण में योगदान करते हैं। कार्बनिक पदार्थ केंचुओं तथा अन्य लाभकारी मृदा जीवों के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करता है जिससे मृदा सरंध्रता और जैविक सक्रियता में सुधार होता है। जैविक मल्चिंग सामग्री सामान्यतः स्थानीय स्तर पर उपलब्ध होती है और अपेक्षाकृत कम लागत वाली होती है। इसलिए धान का पुआल, गेहूँ का पुआल और सूखी घास जैसे फसल अवशेष सब्जी किसानों के लिए आर्थिक रूप से उपयोगी मल्चिंग विकल्प हो सकते हैं। साथ ही इनके उपयोग से कृषि अवशेषों का पुनर्चक्रण भी संभव होता है।

## आदर्श मल्च के गुण

1. मृदा स्वास्थ्य में सुधारः मिट्टी की सतह पर फसल अवशेषों को मल्च के रूप में प्रयोग करना या बनाए रखना मृदा अपरदन को रोकने, मृदा गुणवत्ता बनाए रखने तथा फसल उत्पादकता में सुधार के लिए महत्वपूर्ण है। पुआल, घास, सूखी पत्तियाँ और बुरादा जैसे जैविक मल्च विघटन के दौरान मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ जोड़ते हैं। ये लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए भोजन का स्रोत होते हैं तथा मृदा समुच्चयन और पोषक तत्वों के चक्रण में सहायता करते हैं। उदाहरण के लिए पत्तागोभी, फूलगोभी और भिंडी की खेती में जैविक मल्च का मिट्टी में विघटन या समावेशन मृदा कार्बनिक पदार्थ और जैविक सक्रियता में सुधार कर सकता है।

- **2. मृदा नमी का संरक्षणः** मल्च मिट्टी की सतह और वायुमंडल के बीच एक भौतिक अवरोध का कार्य करता है तथा मिट्टी के पानी के सीधे वाष्पीकरण को कम करता है। यह मिट्टी की सतह को ढककर खरपतवारों की वृद्धि को भी कम करता है, जिससे उपलब्ध नमी के लिए खरपतवारों और सब्जी फसलों के बीच प्रतिस्पर्धा कम होती है।

प्लास्टिक मल्च मृदा नमी के संरक्षण में विशेष रूप से प्रभावी होता है और इसका प्रयोग टमाटर, खीरा, मिर्च, शिमला मिर्च, बैंगन, तरबूज तथा खरबूजे में व्यापक रूप से किया जाता है। अत्यधिक वर्षा की स्थिति में भी प्लास्टिक मल्च खेत की ढाल और उसके उचित बिछाव के आधार पर अतिरिक्त पानी को पौधों के जड़ क्षेत्र से दूर करने में सहायता कर सकता है। इस

प्रकार मल्चिंग सिंचाई की आवृत्ति कम करने तथा जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में सहायक हो सकती है।

- **3. मृदा तापमान का नियमनः** मल्च एक इन्सुलेटिंग परत के रूप में कार्य करता है तथा मृदा तापमान में होने वाले अत्यधिक उतार-चढ़ाव को कम करता है। पुआल, सूखी घास और फसल अवशेष जैसे जैविक मल्च गर्म अवधि में मिट्टी को अपेक्षाकृत ठंडा रखते हैं तथा ठंडी अवधि में ऊष्मा की हानि को कम करते हैं।

आलू, पत्तागोभी, फूलगोभी और प्याज जैसी फसलों में उपयुक्त जैविक मल्च उथली जड़ों को तापमान में होने वाले उतार-चढ़ाव से बचा सकते हैं। दूसरी ओर, ठंडी अवधि में प्लास्टिक मल्च मृदा तापमान को बढ़ा सकता है, जिससे टमाटर, खीरा, मिर्च, बैंगन तथा खरबूजे जैसी गर्म मौसम वाली फसलों में प्रारंभिक स्थापना और तीव्र वृद्धि को बढ़ावा मिल सकता है।

- **4. खरपतवार बीजों और जैविक रोगजनकों से अपेक्षाकृत सुरक्षाः** मल्च मिट्टी की सतह पर एक सुरक्षात्मक अवरोध बनाकर फसल के वातावरण को खरपतवार बीजों और जैविक रोगजनकों से अपेक्षाकृत मुक्त रखने में सहायता करता है। यह सूर्य के प्रकाश को खरपतवार बीजों तक पहुँचने से रोकता है, जिससे उनके अंकुरण और उद्भव में कमी आती है। काला पॉलीथीन मल्च टमाटर, मिर्च, बैंगन, खीरा तथा भिंडी में खरपतवार नियंत्रण के लिए विशेष रूप से प्रभावी होता है।

मल्चिंग वर्षा या सिंचाई के दौरान मिट्टी के अधिक हिलने-डुलने तथा मिट्टी के कणों के छींटे पड़ने को भी कम करती है। मिट्टी के छींटों के माध्यम से फफूंद के बीजाणु और जीवाणु रोगजनक मिट्टी से पौधों की पत्तियों, तनों और फलों तक पहुँच सकते हैं। इसलिए मल्च पौधों के ऊतकों का संक्रमित मिट्टी के साथ सीधा संपर्क कम कर सकता है और कुछ मृदा-जनित रोगजनकों के प्रसार को कम करने में सहायता कर सकता है। यह लाभ विशेष रूप से टमाटर, खीरा, मिर्च, बैंगन और तरबूज जैसी फसलों में महत्वपूर्ण है, जिनमें मृदा-जनित रोगजनक उत्पादन में गंभीर हानि का कारण बन सकते हैं।

## मल्च के उपयोग

- **1. जल संरक्षण के लिए मल्चिंगः** शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में मल्चिंग मृदा नमी के संरक्षण और वाष्पीकरण से होने वाली जल हानि को कम करने की एक प्रभावी विधि है। यह मृदा तापमान को नियंत्रित करने तथा जड़ क्षेत्र के आसपास अनुकूल नमी बनाए रखने में भी सहायता करती है। वर्षा आधारित सब्जी उत्पादन में पुआल, सूखी घास या फसल अवशेषों से सतही मल्चिंग करने पर वर्षा से प्राप्त नमी को संरक्षित किया जा सकता है। अनेक ढीले जैविक मल्च की तुलना में प्लास्टिक मल्च सामान्यतः वाष्पीकरण को कम करने में अधिक प्रभावी होता है। इसलिए इसका उपयोग टमाटर, खीरा, तरबूज, खरबूजा और मिर्च जैसी अधिक पानी की आवश्यकता वाली फसलों में व्यापक रूप से किया जाता है।

जैविक मल्च

- **2. खरपतवार प्रबंधन के रूप में मल्चिंगः** काले पॉलीथीन मल्च का उपयोग सब्जी फसलों में खरपतवारों की वृद्धि को रोकने के लिए सामान्यतः किया जाता है। काला प्लास्टिक मल्च टमाटर, मिर्च, बैंगन, खीरा, शिमला मिर्च और तरबूज में विशेष रूप से उपयोगी होता है, जहाँ यह पौधों के बीच खरपतवारों के उद्भव को काफी हद तक कम कर सकता है। जब मल्चिंग को ड्रिप सिंचाई के साथ जोड़ा जाता है, तो पानी और घुलनशील उर्वरकों को सीधे जड़ क्षेत्र में पहुँचाया जा सकता है जिससे संसाधन उपयोग दक्षता में और सुधार होता है।
- **3. पोषक तत्वों के स्रोत के रूप में मल्चिंगः** जैविक मल्च धीरे-धीरे विघटित होकर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों का योगदान करते हैं। विघटन के दौरान लाभकारी सूक्ष्मजीव जैविक अवशेषों को तोड़ते हैं और पोषक तत्वों को ऐसे रूपों में मुक्त करते हैं जो पौधों के लिए उपलब्ध हो सकते हैं। कम्पोस्ट, गोबर की खाद तथा अच्छी तरह से विघटित पौध अवशेष पोषक तत्वों की उपलब्धता और मृदा उर्वरता में सुधार कर सकते हैं। इस प्रकार के मल्च भिंडी, पत्तागोभी, फूलगोभी, ब्रोकोली तथा अन्य सब्जी फसलों में विशेष रूप से उपयोगी होते हैं जहाँ लंबे समय तक मृदा में कार्बनिक पदार्थ बनाए रखना महत्वपूर्ण होता है।
- **4. मृदा तापमान के नियमन के लिए मल्चिंगः** मल्चिंग मृदा तापमान को नियंत्रित करने और पौधों की जड़ों को तापमान में अचानक होने वाले उतार-चढ़ाव से बचाने में सहायता करती है। गर्म मौसम में पुआल और सूखी घास जैसे जैविक मल्च मिट्टी को अधिक गर्म होने से बचा सकते हैं जबकि प्लास्टिक मल्च ठंडी अवधि में मृदा तापमान को बढ़ा सकते हैं। यह तापमान नियंत्रित करने वाला प्रभाव टमाटर, खीरा, मिर्च, शिमला मिर्च, बैंगन, पत्तागोभी और फूलगोभी जैसी फसलों में लाभकारी होता है जो मल्च के प्रकार और रंग पर निर्भर करता है। इसलिए मौसम और फसल की आवश्यकता के अनुसार उचित मल्च का चयन करना महत्वपूर्ण है।

## मल्चिंग के लाभ

- मल्चिंग जल का संरक्षण करती है और फसल के जड़ क्षेत्र में मृदा नमी बनाए रखती है।
- यह वाष्पीकरण से होने वाली जल हानि को कम करती है तथा जल उपयोग दक्षता में सुधार करती है।
- यह अधिक अनुकूल मृदा तापमान बनाए रखने में सहायता करती है।
- यह हानिकारक खरपतवारों की वृद्धि को रोकती है और जल तथा पोषक तत्वों के लिए खरपतवारों और फसलों के बीच प्रतिस्पर्धा कम करती है।
- यह मिट्टी को वर्षा की बूंदों के सीधे प्रभाव, मृदा अपरदन, तेज हवाओं तथा अत्यधिक सौर विकिरण से बचाती है।
- यह मिट्टी के छींटों को कम करती है तथा कुछ मृदा-जनित रोगजनकों के प्रसार को कम करने में सहायता कर सकती है।
- विशेष रूप से जैविक मल्च के प्रयोग से मृदा संरचना, कार्बनिक पदार्थ तथा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता में सुधार होता है।
- यह सब्जी फसलों की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता में सुधार कर सकती है।
- जैविक मल्च उपयोग के बाद विघटित होकर मृदा उर्वरता और मृदा स्वास्थ्य में योगदान करते हैं।

## निष्कर्ष

मल्चिंग टिकाऊ सब्जी उत्पादन में एक महत्वपूर्ण कृषि क्रिया है, क्योंकि यह मृदा वातावरण में परिवर्तन करके फसल की वृद्धि एवं विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है। यह खरपतवार नियंत्रण, मृदा नमी संरक्षण, मृदा तापमान के नियमन, मृदा अपरदन को कम करने तथा वर्षा की बूंदों के सीधे प्रभाव से मिट्टी की सुरक्षा में सहायता करती है। इस प्रकार यह सब्जी फसलों की उत्पादकता और गुणवत्ता में सुधार करती है। जैविक मल्च मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ाकर, लाभकारी सूक्ष्मजीवों को सहायता प्रदान करके तथा मृदा संरचना में सुधार करके मृदा स्वास्थ्य में अतिरिक्त योगदान देते हैं। विभिन्न मल्चिंग सामग्रियों का चयन फसल, मौसम, मिट्टी के प्रकार, जलवायु परिस्थितियों तथा उपलब्ध संसाधनों के आधार पर किया जा सकता है। मल्च की मोटाई और चौड़ाई का चयन फसल की प्रकृति तथा प्रचलित मौसम की परिस्थितियों के अनुसार किया जाना चाहिए। समग्र रूप से उचित मल्चिंग जल एवं पोषक तत्व उपयोग दक्षता, खरपतवार एवं रोग प्रबंधन, फसल वृद्धि, उपज तथा गुणवत्ता में सुधार कर सकती है। इसलिए यह कुशल और टिकाऊ सब्जी उत्पादन का एक महत्वपूर्ण घटक है।

# ग्वार में अल्टरनेरिया झुलसा रोग

योगेश कुमार, डॉ. रजनी सिंह ससोडे कृषि महाविद्यालय, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

## परिचय

ग्वार एक महत्वपूर्ण दलहनी एवं औद्योगिक फसल है, जिसकी खेती भारत के शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में व्यापक रूप से की जाती है। ग्वार से प्राप्त ग्वार गम का उपयोग खाद्य उद्योग, वस्त्र उद्योग, औषधि निर्माण तथा पेट्रोलियम उद्योग में किया जाता है। मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा तथा गुजरात इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। ग्वार की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले प्रमुख रोगों में अल्टरनेरिया झुलसा एक महत्वपूर्ण पर्णीय रोग है। यह रोग पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्षमता को कम कर देता है, जिससे वृद्धि, फलियों का विकास तथा बीज उत्पादन प्रभावित होता है। रोग की अधिकता होने पर उपज एवं गुणवत्ता दोनों में उल्लेखनीय कमी आ सकती है। अल्टरनेरिया झुलसा रोग का प्रमुख कारक कवक है। रोगजनक कवक संक्रमित बीज, पौध अवशेष तथा मिट्टी में जीवित रहता है। अनुकूल मौसम आने पर यह बीजाणु उत्पन्न करता है, जो हवा एवं वर्षा के माध्यम से स्वस्थ पौधों पर पहुँचते हैं। पत्ती की सतह पर पर्याप्त नमी होने पर बीजाणु अंकुरित होकर ऊतकों में प्रवेश करते हैं तथा नए संक्रमण उत्पन्न करते हैं। यही प्रक्रिया पूरे मौसम में बार-बार दोहराई जाती है। रोग के प्रसार के कारण तापमान 25-30°C, सापेक्षिक आर्द्रता 80% से अधिक, लगातार वर्षा अथवा पत्तियों पर अधिक समय तक नमी बने रहना, अत्यधिक सघन बुवाई, खेत में जल निकास की खराब व्यवस्था तथा संक्रमित बीज एवं फसल अवशेषों का खेत में पड़े रहना हैं।

## रोग के लक्षण

- प्रारम्भ में पत्तियों पर छोटे, गोल अथवा अनियमित भूरे धब्बे बनते हैं।
- समय के साथ धब्बों का आकार बढ़ जाता है तथा उनमें संकेंद्रित वलय स्पष्ट दिखाई देते हैं।
- धब्बों के चारों ओर पीला घेरा विकसित हो सकता है।
- अनेक धब्बे आपस में मिलकर बड़े झुलसे हुए क्षेत्र का निर्माण कर देते हैं।
- गंभीर संक्रमण में पत्तियाँ सूखकर समय से पहले गिर जाती हैं।
- रोग तनों, शाखाओं एवं फलियों पर भी दिखाई दे सकता है।
- संक्रमित फलियों में बीज छोटे, सिकुड़े हुए तथा कम गुणवत्ता वाले बनते हैं।

## रोग से होने वाली हानि

- पत्तियों का समयपूर्व झड़ना
- प्रकाश संश्लेषण में कमी
- पौधों की वृद्धि रुकना
- फलियों की संख्या एवं आकार में कमी
- बीज की गुणवत्ता प्रभावित होना
- उपज में 20-50 प्रतिशत अथवा अनुकूल परिस्थितियों में इससे अधिक हानि

## रोग प्रबंधन

अल्टरनेरिया झुलसा ग्वार की एक प्रमुख पर्णीय बीमारी है, जो समय पर नियंत्रण न होने पर उपज एवं बीज गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकती है। रोगमुक्त बीज, फसल चक्र, उचित कृषि प्रबंधन, जैविक एजेंटों तथा आवश्यकता अनुसार अनुशंसित फफूंदनाशियों के समन्वित उपयोग द्वारा इस रोग का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। समेकित रोग प्रबंधन अपनाने से उत्पादन लागत कम होती है, पर्यावरण संरक्षण होता है तथा टिकाऊ कृषि को बढ़ावा मिलता है।

# प्राकृतिक खेती से 2 एकड़ में उत्पादित स्वीट कॉर्न से 2 लाख की शुद्ध आय

**छिन्दवाड़ा।** छिंदवाड़ा जिले के किसान रसायनों के हानिकारक दुष्प्रभावों के प्रकृति जागरूक होकर प्राकृतिक खेती को अपनाकर आत्मनिर्भर बन रहे हैं। विकासखण्ड छिन्दवाडा के ग्राम कुहिया के कृषक श्री शिवचरण कुशवाहा भी उन्हीं जागरूक किसानों में से एक हैं, जो प्राकृतिक खेती से स्वीट कॉर्न उत्पादित कर लाखों की आय प्राप्त कर रहे हैं और जैविक उत्पादों के प्रेमियों को रसायन मुक्त स्वीट कॉर्न का स्वाद चखा रहे हैं। साथ ही पर्यावरण संरक्षण में सहभागी बन रहे हैं।

**रसायनों के उपयोग से प्रभावित हुई मृदा उर्वरता-** कृषक शिवचरण के पास कुल 4 एकड़ कृषि भूमि एवं 2 देशी गाय हैं। कुछ वर्ष पूर्व वे अपने संपूर्ण खेत में रासायनिक खेती करते थे। रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के लगातार उपयोग से खेती की लागत बढ़ती जा रही थी, साथ ही उन्हें अपने खेत की मृदा उर्वरता में भी कमी महसूस होने लगी थी।

**प्राकृतिक खेती की ओर बढ़े कदम-**वर्ष 2018 में कृषक शिवचरण ने यूट्यूब के माध्यम से सुभाष पालेकर जी के प्राकृतिक एवं जैविक खेती से संबंधित वीडियो देखे। इससे प्रेरित होकर उन्होंने अपने खेत में धीरे-धीरे प्राकृतिक खेती को अपनाना प्रारंभ किया। उनका उद्देश्य खेती की लागत को कम करना, भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाए रखना, रसायनमुक्त एवं गुणवत्तापूर्ण कृषि उत्पाद तैयार करना तथा अपने परिवार एवं उपभोक्ताओं को सुरक्षित खाद्य उपलब्ध कराना था। साथ ही वे प्राकृतिक खेती के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देना चाहते थे।

**नेशनल मिशन ऑन नेचुरल फार्मिंग योजना से मिला तकनीकी सहयोग-** वर्ष 2025 से कृषक को आत्मा परियोजना अंतर्गत नेशनल मिशन फॉर नेचुरल फार्मिंग (एनएमएनएफ) योजना से जोड़ा गया। योजना के अंतर्गत उन्होंने जागरूकता एवं ओरिएंटेशन कार्यक्रमों में भाग लिया तथा प्राकृतिक खेती के विभिन्न घटकों को तैयार करने एवं उपयोग करने का व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त किया।

श्री गणेशाय नमः

श्री सॉवलिया सेठ

# किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com

7692967419  9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

# कृषि दर्शन®
खेत-खलिहान का राजा

1988

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज

विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
मध्य भारत कृषक भारती
सितम्बर-2026

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक राजू सिंह गुर्जर द्वारा कंचन ऑफसेट, चिंतामणि शास्त्री की गली, सात भाई की गोठ, लक्कडखाना,ग्वालियर, म.प्र.-474001 से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर, म.प्र.-474005 से प्रकाशित। संपादक : राजू सिंह गुर्जर ( मोबा. 9425101132, 0751-4070802 )